65

राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय भारत सरकार

महामहिम राष्ट्रपति डा० शंकर दयाल शर्मा, सम्मानित हिन्दीतर भाषी लेखकों के बीच, साथ में मानव संसाधन विकास मंत्री, बाएं से श्री अर्जुन सिंह (बाएं से तीसरे)।

दि ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड द्वारा प्रकाशित संघ की "राजभाषा नीति और हमारा उत्तरदायित्व" पुस्तक का विमोचन करते हुए केंद्रीय गृह उपमंत्री माननीय श्री रामलाल राही।

देव स्वरूप

सत्यमेव जयते

संयुक्त सचिव
भारत सरकार
गृह मंत्रालय
राजभाषा विभाग

संदेश

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343(1) के अनुसार संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी। संविधान के अनुच्छेद 344 के अंतर्गत राजभाषा आयोग का गठन किया गया जिसने संघ के सरकारी काम-काज में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के संबंध में राष्ट्रपति जी को अपनी सिफारिशें प्रस्तुत कीं। आयोग की सिफारिशों पर विचार-विमर्श करने के लिए वर्ष 1957 में एक संसदीय समिति बनाई गई। उक्त संसदीय समिति की सिफारिशों पर विचार करने के लिए 27.9.60 को राष्ट्रपति जी का एक आदेश जारी हुआ। इसके बाद वर्ष 1963 में राजभाषा अधिनियम पारित हुआ, वर्ष 1967 के अंत में राजभाषा संकल्प, 1968 पारित हुआ और वर्ष 1976 में राजभाषा नियम बनाए गए।

जून, 1975 में राजभाषा विभाग की स्थापना हुई। राजभाषा अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत वर्ष 1976 में संसदीय राजभाषा समिति का गठन हुआ जो संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए हिंदी के प्रयोग में की गई प्रगति का पुनर्विलोकन करती है और उस पर सिफारिशें करते हुए राष्ट्रपति को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करती है। समिति ने राष्ट्रपति जी को अपने प्रतिवेदन के पांच खंड प्रस्तुत कर दिए हैं। इनमें से चार खंडों पर राजभाषा विभाग द्वारा चार विस्तृत संकल्प जारी कर दिए गए हैं। प्रतिवेदन के पांचवें खंड पर राजभाषा विभाग कार्रवाई कर रहा है।

उपर्युक्त संकल्पों में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग से जुड़े विभिन्न मुद्दों पर सरकार के निर्णयों की जानकारी रखना केन्द्रीय सरकार के प्रत्येक अधिकारी और कर्मचारियों के लिए आवश्यक है। मैं एतद्-द्वारा भारत सरकार के सभी मंत्रालयों/विभागों तथा कन्याकुमारी से लेकर हिमालय की वादियों और शिखरों तक फैले केन्द्रीय सरकार के सभी कार्यालयों, उपक्रमों, निगमों, सार्वजनिक निकायों, बैंकों, प्रशिक्षण संस्थानों, संस्थाओं आदि के राजभाषा अधिकारियों से अनुरोध करता हूं कि वे संसदीय राजभाषा समिति के प्रतिवेदन के पिछले चारों खंडों पर राजभाषा विभाग द्वारा जारी किए गए सभी संकल्पों का अपने-अपने कार्यालयों में कृपया अनुपालन कराएं और निष्ठापूर्वक कृतसंकल्प होकर इस प्रयोजन के लिए अपने-अपने कार्यालयाध्यक्षों की पूरी मुस्तैदी और सक्रियता के साथ सहायता करें।

आज हमारे देश में हिंदी व भारतीय भाषाओं के लिए अनुकूल वातावरण है। अब इस बात की महती आवश्यकता है कि कंप्यूटर तथा अन्य यांत्रिक उपकरणों के क्षेत्र में भी हिंदी और भारतीय भाषाओं के प्रयोग तथा विकास को तेज़ गति प्रदान की जाए। इस दृष्टि से, मैं केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों आदि के राजभाषा अधिकारियों से विशेष रूप से अनुरोध करता हूं कि वे अपने हिंदी अधिकारियों, हिंदी सहायकों/हिंदी अनुवादकों, हिंदी आशुलिपिकों तथा हिंदी टाइपिस्टों तथा अन्य संबंधित कर्मचारियों को कंप्यूटर पर हिंदी में कार्य करने के लिए प्रेरित करें।

राजभाषा संकल्प, 1968 में संसद द्वारा दिए गए निर्देश के अनुसार सरकारी काम-काज में हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने के लिए भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा हर साल एक कार्यक्रम तैयार किया जाता है जिसमें राजभाषा के प्रगामी प्रयोग में उत्तरोत्तर अभिवृद्धि के लिए लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं। वर्ष 1994-95 का वार्षिक कार्यक्रम सभी संबद्ध अधिकारियों तक पहुंच गया होगा। मुझे विश्वास है कि देश के विविध कार्यालयों आदि में कार्यरत सभी राजभाषा अधिकारी तथा अन्य अधिकारीगण वार्षिक कार्यक्रम में दिए गए लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कटिबद्ध होंगे।

"राजभाषा भारती" के सभी पाठकों के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

(देव स्वरूप)

भारति जय विजय करे, कनक-शस्य-कमल धरे

—निराला

राजभाषा भारती

राजभाषा विभाग की त्रैमासिकी

वर्ष: 17

अंक: 65

अप्रैल-जून 1994

□ संपादक

राज कुमार सैनी
निदेशक (अनुसंधान)
फोन: 4617807

□ उपसंपादक

डा॰ गुरुदयाल बजाज
नेत्रसिंह रावत
देवीदत्त तिवारी

□ संपादन सहायक

शांति कुमार स्याल

□ निःशुल्क वितरण के लिए

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

□ पत्र-व्यवहार का पता:
संपादक, राजभाषा भारती,
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय,
लोकनायक भवन (11वां तल)
खान मार्किट, नई दिल्ली-110003
फोन: 4698054

□ संदेश—संयुक्त सचिव — पृष्ठ

□ संपादकीय

□ चिंतन

1. व्यावसायिक हिंदी बनाम प्रयोजनमूलक हिंदी — गोवर्धन ठाकुर 1
2. प्रबंधकीय दायित्व के निर्धारक तत्व —श्री राम मेहरौत्रा 6
3. राजभाषा अधिकारी की प्रबंधकीय भूमिका —डा॰ बुद्धिनाथ मिश्र 8
4. विधि-साहित्य का अनुवाद —डा॰ बलवीर सिंह भटनागर 10
5. केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो : एक रूप-रेखा —कैलाश नाथ गुप्ता 17
6. हिंदी कंप्यूटर के नए साधन —गुणाकर मुले 19
7. राष्ट्रभाषा में तकनीकी कार्य —विजय कुमार 20
8. अंक गणित संबंधी प्रथम पाठ्य-पुस्तक —डा॰ उषा माथुर 22
9. तेलुगु दैनिक पत्रों के प्रतिनिधि संपादक स्व॰ नार्ला —सुंकि वेंकटेश्वर्ल 24

□ साहित्यिकी

10. नर और नारी की समान सहभागिता : अर्द्धनारीश्वर —विष्णु प्रभाकर 27
11. जैनेन्द्र को जैसा जाना और अब जाना —प्रदीप कुमार 28
12. स्वातंत्रोत्तर हिंदी साहित्य की अंतश्चेतना —डा॰ शंकर दयाल सिंह 34

□ पुरानी यादें: नए परिप्रेक्ष्य

13. कुछ नाम प्रतीक बन जाते है —गिरिजा कुमार माथुर 37
14. जाकिर हुसैन का हिंदी के विकास में योगदान —प्रो॰ माजदा असद 40

□ विश्व हिंदी-दर्शन

15. चैक देश में हिंदी —विष्णु प्रभाकर 42

□ भारतीय भाषा संगम

° तेलुगु कविताएं —ज्वाला मुखी 58
° गुजराती कविताएं —उद्यन ठक्कर 59
° कोंकणी कविताएं —प्रकाश पाडगांवकर 60
° उर्दू कविताएं —कृष्ण मोहन 61

□ प्रेरणा-पुंज 62
1. डा॰ शंकर दयाल सिंह
2. श्री आर॰वी॰ राघवन

□ पुस्तक-समीक्षा 64

वैज्ञानिक दृष्टिकोण और धर्म निरपेक्षता (गीतेश शर्मा); एक समकालीन आंचलिक उपन्यास (द्रोणवीर कोहली); यायावरीः एक मादक गंध (शंकर दयाल सिंह); राजभाषा प्रबंध (गोवर्धन ठाकुर), राजभाषा-नीति कार्यान्वयन (हरिबाबु कंसल); जीवन-मूल्य और स्कंदगुप्त (श्रीमती कमलेश सिंह); श्रीराम वैदेही (रामचन्द्र सिंह त्यागी); नमस्कार (शान्ति प्रसाद अग्रवाल), आदमी का व्याकरण (नेम पति प्रजापति); आल्हा-ताला (श्रीराम नारायण चतुर्वेदी); पुलिस चिंतन (राजेन्द्र राजावत); भारतीय पुलिस (डा॰ ब्रजमोहन शर्मा); धरा की गोद से (विजया गोयल); कविता का सृजन और मूल्यांकन (डा॰ सुधेश); सुरभि के पंख (विजया गोयल); खाड़ी युद्ध-91 (विश्व मोहन तिवारी); कुछ कविताएं अपने लिए, कुछ तुम्हारे लिए (मस्तराम कपूर)

□ राजभाषा सम्मेलन/संगोष्ठियां 78

1. देहरादून में राजभाषा संगोष्ठी
2. "औद्योगिक क्षेत्र में अनुशासन"—राजभाषा संगोष्ठी
3. भाषा भेद-भावों को छोड़ दें
4. असम परिमंडल राजभाषा सम्मेलन एवं संगोष्ठी
5. केरल डाक सर्किल राजभाषा सम्मेलन
6. 'परा उच्च निर्वात विज्ञान' विषय पर संगोष्ठी
7. बम्बई रिफाइनरी में हिंदी उत्सव
8. हिंदी प्रयोग के लिए मानसिकता बदलने की जरूरत
9. कंप्यूटर के द्विलिपीय संचालन पर संगोष्ठी
10. मद्रास में भारतीय भाषाओं का मधुर मिलन
11. बम्बई में कवि सम्मेलन
12. ठहाका सम्मेलन
13. नोएडा में कवि सम्मेलन
14. अहमदाबाद में अभिमुखीकरण कार्यक्रम

□ समिति समाचार 87

(क) केन्द्रीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक
(ख) हिंदी सलाहकार समिति की बैठक - संस्कृति विभाग
(ग) नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की बैठकें
(घ) अन्य राज भाषा कार्यान्वयन समितियों की बैठकें

□ विविधा 98

△ समाचार दर्शन △ प्रोत्साहन/पुरस्कार योजना △ प्रशिक्षण/भर्ती परीक्षाएं और हिंदी △ आदेश-अनुदेश △ पाठकों के पत्र

संपादकीय

सरस्वती वंदना

या कुन्देन्दुतुषारहार धवलां
या शुभ्रवस्त्रावृत्ता
या वीणावर दण्डमण्डित करा
या श्वेत पद्मासना
या ब्रह्माच्युत शंकरः प्रभृतिभिः
देवैः सदावन्दिता
सा मां पातु सरस्वती भगवती
निःशेष जाड्याऽपहा ।

"राजभाषा भारती" का अंक 65 आपके हाथों में है।

केन्द्रीय कार्यान्वयन समिति की बैठक 31 मार्च, 1994 को विज्ञान भवन में सम्पन्न हुई। इस बैठक की विशेषता यह रही कि इसमें मंत्रिमंडल सचिव माननीय श्री जफ़र सैफुल्लाह ने भारत सरकार के मंत्रालयों और विभागों की राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के अध्यक्षों और सदस्य-सचिवों को राजभाषा के प्रगामी प्रयोग के संबंध में संबोधित किया। मंत्रिमंडल सचिव ने इस अवसर पर यह संदेश दिया कि हमारा लक्ष्य यह है कि सरकारी कामकाज पूरे तौर से हिंदी में होने लगे। वार्षिक कार्यक्रम और उसमें निर्धारित लक्ष्य तो उस मंजिल तक पुहंचने का ज़रिया है।

राजभाषा विभाग के नए संयुक्त सचिव श्री देव स्वरूप ने कन्याकुमारी से हिमालय तक फैले केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों, उपक्रमों, निगमों, सार्वजनिक निकायों, बैंकों, प्रशिक्षण तथा अन्य संस्थानों में कार्यरत राजभाषा अधिकारियों के नाम एक संदेश दिया जिसे हम इस अंक में प्रकाशित कर रहे हैं। इस संदेश में भी संयुक्त सचिव श्री देव स्वरूप ने सभी राजभाषा अधिकारियों से अपेक्षा की है कि वे वार्षिक कार्यक्रम में दिए गए लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कटिबद्ध होंगे। साथ ही विशेष रूप से सभी राजभाषा कर्मियों से अपील की है कि वे कम्प्यूटर पर देवनागरी में काम करने के लिए मानसिक रूप से तैयार हो जाएं तथा प्रशिक्षण प्राप्त करें।

इस अंक में प्रमुख आकर्षणों में हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार श्री जैनेन्द्र कुमार के बारे में सुपरिचित गीतकार गिरिजाकुमार माथुर का संस्मरणात्मक लेख है। इसी संदर्भ में श्री जैनेन्द्र जी के सुपुत्र श्री प्रदीप कुमार ने हमारे आग्रह पर "राजभाषा भारती" के लिए विशेष रूप से अपने पिता श्री जैनेन्द्र कुमार के बारे में एक आलेख भेजा है, जो इसी अंक में शामिल है।

"विश्व हिंदी दर्शन" स्तंभ के अन्तर्गत हिंदी के लोकप्रिय साहित्यकार **श्री विष्णु प्रभाकर** ने 'चैक देश में हिंदी' की स्थिति के बारे में विस्तृत जानकारी दी है। श्री प्रभाकर ने हमारे आग्रह पर "राजभाषा भारती" के लिए उक्त सामग्री भिजवाई थी। इसके अतिरिक्त उन्होंने साहित्य-अकादमी द्वारा इसी वर्ष पुरस्कृत अपने महाकाव्यात्मक उपन्यास "अर्द्धनारीश्वर" के बारे में (लेखकीय वक्तव्य के रूप में) एक संक्षिप्त किंतु सारगर्भित टिप्पणी भेजी है; उसे भी इसी अंक में सम्मिलित किया गया है।

संसदीय राजभाषा समिति के उपाध्यक्ष तथा उक्त समिति की तीसरी उप समिति के संयोजक माननीय **श्री शंकर दयाल सिंह** "राजभाषा भारती" के लिए नियमित रूप में हमें कुछ न कुछ देते रहते हैं। इस अंक के लिए भी उन्होंने एक रचनात्मक आलेख भेजा है, जिससे पाठक लाभान्वित होंगे। "राजभाषा भारती" परिवार माननीय श्री शंकर दयाल सिंह को संसदीय राजभाषा समिति के उपाध्यक्ष का गरिमामय पद संभालने पर बधाई देता है।

पिछले दिनों हिंदी के प्रसिद्ध लेखक और आलोचक **श्री गोपाल कृष्ण कौल** का निधन हो गया। श्री कौल आकाशवाणी पर हिंदी कार्यक्रमों के प्रसारण से दीर्घावधि तक जुड़े रहे। उनके साहित्यिक तथा सामाजिक लेख विचारोत्तेजकता और जागरूक जीवन-दृष्टि के लिए अपनी विशिष्ट पहचान रखते हैं। गणतंत्र-दिवस के अवसर पर लालकिले में आयोजित किए जाने वाले ऐतिहासिक दृष्टि से अविस्मरणीय अखिल भारतीय स्तर के कुछ कवि-सम्मेलनों का भी उन्होंने सफल और सार्थक संचालन किया और उर्दू मुशायरों के ही समकक्ष हिंदी कवि सम्मेलनों को लोकप्रिय बनाने की दिशा में उनके योगदान की याद आना स्वाभाविक है। "राजभाषा परिवार" उनके प्रति श्रृद्धानत है।

—राजकुमार सैनी

चिंतन

व्यावसायिक हिन्दी बनाम प्रयोजनमूलक हिन्दी

– गोवर्धन ठाकुर*

प्रयोजनमूलक हिन्दी, कामकाजी हिन्दी, व्यावहारिक हिन्दी आदि कुछ ऐसे शब्द हैं जिनका आज धड़ल्ले के साथ मूलतः प्रशासनिक और प्रशासन से जुड़े या राजकीय व्यवस्था से जुड़े कार्य-व्यापारों, शिक्षा अथवा तकनीक की भाषा के लिए प्रयोग होता है। श्री भैरवनाथ सिंह लिखते हैं "जब हम प्रयोजनमूलक हिन्दी अथवा व्यावहारिक हिन्दी अर्थात् functional Hindi की बात करते हैं तो हमारे सामने हिन्दी के दो रूप होते हैं—पहला उसका साहित्यिक रूप जिसकी परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है तथा जिसने भाव, रूप तथा अभिव्यक्ति की अनेक भंगिमाओं, शैलियों तथा पद्धतियों को जिया, भोगा तथा विकसित किया है। हिन्दी का यह साहित्यिक रूप बड़ा ही समृद्ध तथा सम्पन्न है। परम्परा और प्रयोग, दोनों ही स्तरों पर वह दिशा और दृष्टि प्रदान करने तथा नवोन्मेष में सक्षम है। किन्तु, आज हिन्दी का जो दूसरा रूप हमारे सामने है वह अपेक्षाकृत उसका नया रूप है किन्तु यही उसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण रूप है क्योंकि यह जीवन की विविध स्थितियों और आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रयोग किया जानेवाला भाषा—रूप है, वस्तुतः यही प्रयोजनमूलक हिन्दी (functional Hindi) है। आर्थिक—सामाजिक संदर्भों के बदलाव के साथ बदलती हुई स्थितियों की आवश्यकताओं के प्रयोजन विशेष अथवा कार्य विशेष के संदर्भ में इस्तेमाल की जानेवाली भाषा प्रयोजनमूलक भाषा होती है।"[1] प्रयोजनमूलक हिन्दी के संदर्भ में डा॰ विनोद गोदरे का विचार है कि "प्रयोजनमूलक हिन्दी, अंग्रेजी शब्द 'फंक्शनल हिन्दी' का पर्याय है। अगर शब्दार्थ की दृष्टि से देखें तो प्रयोजनमूलक हिन्दी का अर्थ हुआ—ऐसी विशेष हिन्दी जिसका उपयोग किसी विशेष प्रयोजन के लिए ही किया जाए। इसे कामकाजी हिन्दी अथवा व्यावहारिक हिन्दी भी कहा जाता है।"[2] डा॰ हरीश चन्द्र पाठक का कहना है" "भाषा संपूर्ण समाज, लघु समाज और व्यक्ति के स्तरों पर प्रयुक्त होती है। संपूर्ण समाज में विभिन्न प्रयोजनों का कारण अधिशासी अधिकारियों, इंजीनियरों, प्राध्यापकों, लिपिकों, वकीलों, व्यापारियों आदि के विशिष्ट समाज होते हैं, जिनमें विशिष्ट प्रयोजनवश विशिष्ट भाषाओं का प्रयोग किया जाता है। इन विशिष्ट लघु समाजों की भाषाओं को संपूर्ण समाज की भाषा का प्रयोजनमूलक रूप कहा जाता है।"[3] श्रीमती ना॰ज॰ राव का विचार है कि "किसी भी भाषा के दो पक्ष या प्रकार्य होते हैं, एक का सम्बन्ध हमारी संस्कृति के परिरक्षण और आनन्दानुभूति से है तो दूसरे का सम्बन्ध हमारी सामाजिक आवश्यकता और जीवन की व्यवस्था से जुड़ा होता है। यह व्यक्तिपरक होते हुए भी समाज सापेक्ष है और रोजमर्रा के कामकाज के लिए सम्प्रेषण का माध्यम है। भाषा का यही पक्ष या प्रकार्य प्रयोजनमूलक होता है।" प्रयोजनमूलक हिन्दी की चर्चा करते हुए श्री दिलीप सिंह लिखते हैं "साहित्यिक विधाओं, संगीत, बाजार, समाचार-पत्र, क्रय-विक्रय का संसार, फिल्म, चिकित्सा, व्यवसाय खेत-खलिहान इन विभिन्न प्रयोग क्षेत्रों में हिन्दी के विभिन्न प्रयोजन-मूलक रूप प्रयुक्त होते हैं।" प्रयोजनमूलक हिन्दी पर विचार करते हुए डॉ0 भोलानाथ तिवारी लिखते हैं "भाषा का प्रयोग समाज में होता है, किन्तु समाज के संदर्भ हमेशा एक नहीं होते। मानसिक, प्रयोजनिक, पारंपरिक तथा अभिव्यक्तिक दृष्टि से समाज के भी परिवर्तन होते हैं। बैंक का समाज एक है, तो किसी प्रशासनिक कार्यालय का समाज दूसरा, किसी वैज्ञानिक प्रयोगशाला का समाज तीसरा, तो किसी विशेष स्थान पर लगे सब्जियों के प्रातः कालीन बाजार का समाज चौथा। इसी प्रकार हर भाषा-भाषी वर्ग (व्यापारिक, साहित्यिक, वकीली, डाक्टरी, इंजीनियरी आदि) का अपना सीमित समाज अलग-अलग होता है। समाज के इन परिवर्तनों के विषय अलग-अलग होते हैं, अतः इनकी अभिव्यक्तिक आवश्यकताएं भी अलग-अलग होती हैं। इस अलगाव के लिए विषय के अतिरिक्त लोगों का मानसिक स्तर, इस तरह के समाज की परंपरा, मुख्यतः अभिव्यक्तिक परंपरा, उनका भूगोल, इतिहास, उनकी सभ्यता और संस्कृति आदि अनगिनत वे बातें जिम्मेदार हैं जिनसे उस समाज के अपने निजी व्यक्तित्व का निर्माण होता है। वस्तुतः जैसे हर व्यक्ति की अपनी भाषा होती है, ठीक उसी प्रकार हर विशिष्ट समाज (जो बृहत्तर समाज का किसी स्तर पर एक खण्ड है) की भी अपनी भाषा होती है, और इस "उस सीमित समाज" की "अपनी भाषा" का अपना व्यक्तित्व -उस समाज के व्यक्तित्व के अनुरूप ही-अलग भी होता है। अर्थात बृहत्तर समाज के भीतर

*प्रबंधक (राजभाषा) नेशनल मिनरल डेवल॰ कार्पोरेशन, खनिजभवन, मझाब टैंक, हैदराबाद-28

विभिन्न प्रयोजनों से जितने भी विभिन्न छोटे-छोटे समाज गठित होते हैं, उन सब की अपनी भाषा भी एक सीमा तक अलग-अलग होती है, जो प्रयोग के विशिष्ट प्रयोजन के कारण उस भाषा के सर्वमान्य रूप के परिवर्त (Variants) कहे जा सकते हैं । किसी भी भाषा के ये विभिन्न परिवर्त, उस प्रयोजन पर ही आधृत होंगे, जिसके लिए उनके अलग-अलग प्रयोग होंगे-विभिन्न प्रयोजनों के लिए गठित समाज खण्डों के द्वारा किसी भाषा के ये विभिन्न रूप या परिवर्त ही उस भाषा के प्रयोजनमूलक विभिन्न रूप हैं ।"[5]

ऊपर विद्वानों ने हिन्दी की प्रयोजनमूलकता की जो व्याख्या और परिभाषाएँ दी है, उन पर दृष्टिपात करने से निम्नांकित तथ्य सामने आते हैं:

1. हिन्दी भाषा के दो रूप हैं। कुछ विद्वानों ने साहित्यिक भाषा को हिन्दी भाषा के पहले रूप के अन्तर्गत तथा आर्थिक-सामाजिक संदर्भों में बदलाव के साथ बदलती हुई परिस्थितियों की आवश्यकताओं के अनुरूप व्यावसायिक एवं तकनीकी आदि भाषा के रूप को दूसरे रूप के अन्तर्गत अर्थात् प्रयोजनमूलक रूप के अधीन माना है। परन्तु, कुछ विद्वान हिन्दी भाषा की साहित्यिक कृतियों की भाषा और व्यावसायिक विषयों से सम्बद्ध भाषा, दोनों ही प्रकार की भाषाओं को प्रयोजनमूलक हिन्दी के रूप में स्वीकार किया है।

2. भाषा का एक वैयक्तिक स्वरूप होता है और दूसरा सामाजिक स्वरूप।

वस्तुतः वैयक्तिक स्तर की भाषा ही सामान्य भाषा हैं और सामाजिक स्तर की भाषा जो किसी विशिष्ट समाज के विशिष्ट प्रयोजन की पूर्ति का साधक होती है। इसके अन्तर्गत वकील के समाज की भाषा वकीली हिन्दी, डाक्टर के समाज की भाषा डाक्टरी हिन्दी, व्यावसायिकों के समाज की भाषा व्यावसायिक हिन्दी, इंजीनियरों के समाज की इंजीनियरी हिन्दी आदि रूप हैं। विद्वानों ने इस प्रकार की संकल्पना को भी अपने-अपने ढंग से अलग-अलग रूप में प्रस्तुत किया है।

परन्तु, इन पर व्यावहारिक रूप से विचार करने पर ऐसा लगता है कि प्रयोजनमूलक हिन्दी की व्याख्या के प्रति सजग होते हुए भी और उसकी वास्तविकता से परिचित होते हुए भी उसके व्यापक स्वरूप को हिन्दी भाषा के अन्य रूपों से अलग कर न तो सही ढंग से देखा जा सका है और न ही उस पर अभी तक गंभीरता से विचार ही किया जा सका है। हिन्दी के स्वरूप निर्धारण के प्रति इसी धारणा ने इस पर नए सिरे से विचार करने की ओर उत्प्रेरित किया है। मेरे विचार से हिन्दी को स्वरूप की दृष्टि से मोटे तौर पर तीन वर्गों में विभाजित कर देखा जा सकता है। वे हैं (क) सामान्य हिन्दी
(ख) ललित हिन्दी और (ग) व्यावसायिक हिन्दी

(क) **सामान्य हिन्दी:** व्यक्तिगत स्तर पर प्रयुक्त हिन्दी की लोभाषा अथवा बोल-चाल की भाषा का रूप सामान्य हिन्दी का रूप है। इसकी स्थिति मूलतः हिन्दी के मातृभाषिक क्षेत्र यथा; दिल्ली एवं मेरठ तथा उसके आस-पास के क्षेत्रों पर, ऐसे अन्य शहरी क्षेत्रों में भी देखी जा सकती है जो हिन्दी का मातृभाषिक क्षेत्र तो नहीं हैं किन्तु, अनेक कारणों से, जिनमें बड़े शहर होने के चलते अथवा बड़े-बड़े उद्योग स्थल होने के चलते, अनेक भाषा-भाषी क्षेत्रों के लोग, उनके परिवारों के साथ-साथ रहना और तदनुसार एक अखिल भारतीय भाषिक रूप का पनपना भी शामिल है, हिन्दी के प्रयोग की दृष्टि से मातृभाषिक क्षेत्र की भूमिका निभाने लग गया है। उदाहरण के तौर पर हैदराबाद, बैंगलूर, बम्बई, कलकत्ता आदि अनेक शहरों में भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी आपस में टूटी-फूटी हिन्दी में ही सही, आपस में हिन्दी में बातचीत करते हैं। यह भी कि ऐसे शहरों में काफी संख्या में ऐसे परिवार भी हैं, जिनके घर में मातृभाषिक क्षेत्र से काफी अरसे से कटे होने के चलते मातृभाषा के प्रयोग कम होते होते धीरे-धीरे समाप्त हो चुका है और अब हिन्दी उनके घर की भाषा बन चुकी है। हिन्दी का यही रूप सामान्य हिन्दी अथवा बोलचाल की हिन्दी का रूप है। सामान्य हिन्दी का प्रयोग किसी भी प्रकार व्याकरण के नियमों से अथवा भाषा के मानकीकरण के नियमों से अनुशासित नहीं होता। यह निर्बाध होती है और अलग-अलग स्थानों में अनायास इसके अपने अलग-अलग रूप भी होते हैं। बनारसी हिन्दी, लखनवी हिन्दी, हैदराबादी हिन्दी आदि। इसी तरह इनके स्थानीय प्रयोगपरक अलग-अलग स्वरूप के चलते अलग-अलग नाम हैं। जो लोग इन क्षेत्रों में जाते-आते रहते हैं और इनकी भाषा से परिचित हैं, वे इनके बोलनेवालों के अलग-अलग क्षेत्रों की पहचान इनकी भाषा से ही कर लेते हैं।

(ख) **ललित हिन्दी:** ललित हिन्दी से तात्पर्य उस हिन्दी से है जिसका प्रयोग ललित साहित्य में होता है। ललित हिन्दी सामान्य हिन्दी से भिन्न कलात्मक, लालित्यपूर्ण, रोचक तथा शब्दशक्ति और अलंकार आदि के चमत्कारपूर्ण कौशल से सम्पन्न युग और जीवन को दिशा देनेवाले अपरिमेय और रमणीय साहित्य की बहती गंगा है जहां अमृत ही अमृत है। यह पयस्विनी वह काम धेनु है जो न तो खाली होती, और न ही यहां से किसी को निराश लौटना पड़ता है। ऐसी ही चिर और अनन्त प्रवाहमयी अक्षय साहित्य की कमनीय हिन्दी को ललित हिन्दी से अभिहित किया जा सकता है। श्री भैरवनाथ सिंह ने ऐसी ही भाषा के सम्बन्ध में चर्चा करते हुए लिखा है "हमारे सामने हिन्दी के दो रूप होते हैं—पहला उसका साहित्यिक रूप जिसकी परंपरा प्राचीन काल से चली आ रही है तथा जिसने भाव, रूप तथा अभिव्यक्ति की अनेक भंगिमाओं, शैलियों तथा पद्धतियों को जिया, भोगा तथा विकसित किया है। हिन्दी का यह साहित्यिक रूप बड़ा ही समृद्ध तथा सम्पन्न है। परम्परा और प्रयोग दोनों ही स्तरों पर वह दिशा और दृष्टि प्रदान करने तथा नवोन्मेश में सक्षम है।"[7]

वस्तुतः ललित हिन्दी वह हिन्दी है जिसका सम्बन्ध मूलतः मानव हृदय के भाव पक्ष से है, कला पक्ष से है, न कि व्यवसाय पक्ष से अथवा यूँ कहें कि जीवन के व्यवहार पक्ष से। ललित हिन्दी के लिए डॉ॰ नगेन्द्र ने आनन्दमूलक हिन्दी का प्रयोग किया है। इस आनन्दमूलक हिन्दी को उन्होंने प्रयोजनमूलक हिन्दी के विपरीत मानते हुए लिखा है "वस्तुतः प्रयोजनमूलक हिन्दी के विपरीत अगर कोई हिन्दी है तो वह निष्प्रयोजनमूलक नहीं वरन् आनन्दमूलक हिन्दी है। आनन्द व्यक्ति सापेक्ष है और प्रयोजन समाज सापेक्ष। आनन्द स्वकेन्द्रित होता है और प्रयोजन समाज की ओर इशारा करता है। हम आनन्दमूलक हिन्दी के विरोधी नहीं है। इसलिए आनन्दमूलक साहित्य के हम भी हिमायती हैं।"[8] उपर्युक्त तथ्यों पर ध्यान देने से यह बात पूरी तरह साफ हो जाती है कि ललित हिन्दी वह हिन्दी है जो साहित्य, काव्य, संगीत आदि ललित कलाओं में प्रयुक्त होती है और

जिसमें भाषा को रोचकता और अर्थवैविध्य एवं व्यापकता देने तथा चमत्कार पैदा करने के लिए शब्द शक्ति, अलंकार, रस आदि के सम्यक परिपाक सहज स्वाभाविक होते हैं। इस सम्बन्ध में जहां तक कुछ विद्वानों का मत है कि यह मात्र वैयक्तिक हिन्दी है, मैं नहीं मानता। सफल साहित्य वही है, सफलकला वही है, जो तुलसी के स्वान्तः सुखाय की तरह सर्वान्तः सुखाय हो, और समस्त महान साहित्यकारों, कलाकारों की कृतियों में यह गुण अनायास की पाया जाता है। इसीलिए तो वे सब के हृदय को जीतने में सफल होते हैं। फलस्वरूप, ललित हिन्दी का व्यक्तिपरक की जगह समाजपरक तथा समाज के हित में होने की बात में तो मेरी दृष्टि में दो मत नहीं हो सकते; हां, इतनी बात अवश्य है कि आम तौर पर रोटी-पानी के साथ, जीवन के व्यावसायिक और तकनीकी पक्ष के साथ इस भाषा का सम्बन्ध नहीं माना जा सकता, संभव भी नहीं हो सकता।

(ग) **व्यावसायिक हिन्दीः** व्यावसायिक हिन्दी को व्यावहारिक हिन्दी, कामकाजी हिन्दी अथवा प्रयोजनमूलक हिन्दी के नाम से भी अभिहित किया जाता है। वस्तुतः इसके लिए अधिक प्रचलित नाम प्रयोजनमूलक हिन्दी ही है।

व्यावसायिक हिन्दी व्यवसाय अर्थात् वृत्तिका—रोजी, रोटी तथा जीवन के अभिप्रेत लक्ष्यों से सम्बद्ध क्षेत्रों, यथा; प्रशासन, समाज, राजनीति, कृषि, व्यापार, उद्योग, विधि, अर्थ, प्रशिक्षण, चिकित्सा, अभियांत्रिकी, ज्योतिष, अध्यात्म, दर्शन, मनोविज्ञान आदि ज्ञान-विज्ञान की विविध शाखाओं के चिंतन, मनन एवं अभिव्यक्ति की हिन्दी है। यह जीवन की दैनन्दिन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सम्पादित कार्यव्यापारों के लिए तो उपयोग में आती ही है, विराट और विस्तृत भविष्य की योजनाओं को रुपायित करने वाली प्रायोजनाओं एवं तत्सम्बन्धी तकनीकी एवं व्यावसायिक अध्ययनों और प्रचालन क्रियाकलापों की संवाहिका भाषाई माध्यम की भूमिका भी निभाती है। अतः हम कह सकते हैं कि व्यावसायिक हिन्दी, वह हिन्दी है जिसका सम्बन्ध हमारे व्यावसायिक कार्यकलापों, कार्यालयीन व्यवहारों, ज्ञान-विज्ञान एवं तकनीक से है। यह हिन्दी विशिष्ट प्रयोजन के साधक ज्ञान-विज्ञान, शास्त्र एवं व्यवहार से जुड़ी होती है, फलस्वरूप इसे विशिष्ट प्रयोजनपरक अथवा विशिष्ट प्रयोजनमूलक हिन्दी की संज्ञा भी दी जा सकती है। व्यावसायिक हिन्दी अपनी सामर्थ्य और सम्प्रेषणीयता की दृष्टि से आज इतनी विशद, सबल और सम्पन्न हो चुकी है कि यदि पूर्वाग्रह को छोड़कर इस पर तटस्थता से विचार किया जाए तो निश्चय ही यह विश्व की सर्वश्रेष्ठ भाषा सिद्ध होगी।

व्यावसायिक हिन्दी के सम्बन्ध में प्रयुक्त "व्यावहारिक हिन्दी" शब्दावली भी मेरी दृष्टि से व्यावहारिक नहीं लगती। कारण, इससे ऐसा लगता है कि इससे भिन्न क्षेत्रों की हिन्दी अव्यावहारिक है, जो उचित नहीं है। इसके अतिरिक्त व्यावहारिक हिन्दी के विरुद्ध यह तर्क भी दिया जाता है कि "व्यावहारिक हिन्दी नामकरण के साथ एक भ्रम यह भी जुड़ जाता है कि व्यावहारिक हिन्दी का अर्थ ऐसी हिन्दी से है जिसमें व्याकरण एवं सामाजिक आचरण के बजाए व्यावहारिक उपयोग पर अधिक बल दिया जाता है। व्यावहारिक हिन्दी से तात्पर्य है—दैनिक जीवन में कार्यसाधन के लिए प्रयुक्त की जानेवाली हिन्दी। ऐसी भाषा जिसकी संरचना में व्याकरण की अनिवार्यता के बजाए व्यावहारिक उपयोगिता हो। इसके विपरीत प्रयोजनमूलक भाषा में प्रशासन, संपर्क तथा संप्रेषण आवश्यक होता है और उसमें उच्चरित वाक्यप्रयोग से ले कर लिखित वाक्य तक व्याकरण सम्मत शुद्धता एवं सामाजिक भद्रता का आग्रह होता है। अतः व्यावहारिक हिन्दी की तुलना में प्रयोजनमूलक हिन्दी सम्बोधन अधिक संदर्भ संगत, अर्थगर्भित, लक्ष्यभेदी, स्पष्ट तथा सरल है।"[9] व्यावहारिक और कामकाजी, दोनों ही शब्दों का प्रयोग हिन्दी के संदर्भ में समानार्थक हुआ है, अतः इस पर अलग से चर्चा करने की आवश्यकता मुझे महसूस नहीं होती। व्यवहार की हिन्दी अर्थात् कामकाज की हिन्दी यानी कामकाजी हिन्दी, अतः इस सम्बन्ध में उपर्युक्त स्थापना को ही स्वीकार किया जा सकता है।

व्यावसायिक हिन्दी के लिए सर्वाधिक प्रचलित और बहुलांश में मान्य शब्दावली है प्रयोजनमूलक हिन्दी। श्रीमती ना०ज०राव प्रयोजनमूलक हिन्दी की चर्चा करती हुई कहती है—"जनजीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उपयोग में लाई जानेवाली तथा शिक्षित समाज द्वारा उद्योग, तकनीक, योजना, संगठन, व्यवस्था एवं प्रशासन के लिए उपयोग में लाई जानेवाली हिन्दी को प्रयोजनमूलक हिन्दी की संज्ञा देनी चाहिए। यही प्रयोजनमूलक हिन्दी अंग्रेजी के वर्तमान उस स्थान को भी लेगी जिसके माध्यम से आज देश की दो प्रतिशत जनता सामाजिक चेतना, लोक व्यवहार, उच्च शिक्षा और जीविकोपार्जन कर रही है। अतः व्यावहारिक तथा प्रयोजनमूलक हिन्दी कहा जा सकता है।"[10] प्रयोजनमूलक हिन्दी पर विस्तृत रूप से चर्चा के क्रम में श्री भैरवनाथ सिंह लिखते हैं" न्याय, तर्कशास्त्र, दर्शन, गणित, ज्योतिष, चिकित्सा शास्त्र, नाट्य शास्त्र, काव्य शास्त्र आदि ज्ञान क्षेत्रों में चिंतन की परंपरा तो प्राचीनकाल से ही भारत में विद्यमान थी और इनसे सम्बद्ध संकल्पनाओं के लिए प्रचुर मात्रा में शब्द भंडार भी उपलब्ध था। आवश्यकता उसके पुनः स्थापन, पुनः नियोजन और पुनरुत्थान की थी। किन्तु दैनन्दिन प्रशासनिक कार्यों में, जिनका ढांचा ब्रिटिश शासन के ढंग का था[11] प्रयोग के लिए हिन्दी के अनुकूलन की आवश्यकता हमें महसूस हुई और इसी व्यावहारिक प्रयोजन" के लिए प्रयोजनमूलक हिन्दी की शुरुआत हुई। इस तरह यह स्पष्ट है कि प्रयोजनमूलक हिन्दी का प्रयोग प्रयोजन विशेष से अर्थात् उद्देश्य विशेष से प्रयुक्त होनेवाली हिन्दी से ही है। सामान्य बोलचाल की हिन्दी अथवा ललित या आनन्दमूलक हिन्दी से नहीं। अतः यह तो निर्विवाद है कि सामान्य हिन्दी तथा ललित हिन्दी से भिन्न प्रयोजनमूलक हिन्दी के दायरे में आनेवाली हिन्दी व्यावसायिक हिन्दी के समकक्ष अथवा समरूप ही है। परन्तु, ऐसी हिन्दी के लिए प्रयोजनमूलक सम्बोधन पर यदि हम विचार करें तो इस सम्बोधन में भी ऐसी अनेक बातें देखने को मिलेंगी जो भ्रम पैदा कर सकती हैं अथवा इसके अन्तर्गत आनेवाले विशाल और विशद साहित्यों की व्यापकता को अपने में समेटने में असमर्थ हो सकती है। सर्वप्रथम तो यह कि प्रयोजनमूलक शब्द अपने आप में निष्प्रयोजनमूलक शब्द का विपरीतार्थक है और इस सम्बोधन के औचित्य के लिए एक लम्बी सी व्याख्या देने की जरुरत आखिरकार हो जाती है कि यह शब्द निष्प्रयोजन का विपरीतार्थक न हो कर विशिष्ट उद्देश्यपरक तथा एकार्थक हिन्दी के लिए है, आदि-आदि। दूसरी बात यह कि प्रयोजनमूलक हिन्दी के शब्दार्थ को स्वीकार करने पर सामान्य बोलचाल की हिन्दी और ललित हिन्दी भी इसके दायरे में ही आ जाती है, जो प्रयोजनसिद्ध नहीं है। यही कारण है कि कुछ विद्वानों ने ललित साहित्य को तो कुछ विद्वानों ने सामान्य व्यवहार की हिन्दी को प्रयोजनमूलक हिन्दी के अन्तर्गत ही लिया है

और ऐसी स्थिति में प्रयोजनमूलक हिन्दी के अन्तर्गत अभीष्ट विषय एवं शैलीपरक वैशिष्ट्य दब कर रह गया है। चूंकि कोई भी हिन्दी निष्प्रयोजन में प्रयुक्त नहीं होती, अतः कुछ विद्वानों द्वारा सामान्य हिन्दी को अथवा ललित हिन्दी को भी प्रयोजनमूलक हिन्दी में सम्मिलित कर देखना अस्वाभाविक नहीं है। इसके अतिरिक्त, प्रयोजन से विशिष्ट प्रयोजन का अर्थ लेना भी स्वाभाविक नहीं कहा जा सकता। फलस्वरुप, उपर्युक्त विषय पर विचार करने के पश्चात् विशिष्ट प्रयोजन के लिए प्रयुक्त प्रयोजनमूलक हिन्दी के स्थान पर व्यावसायिक हिन्दी की संज्ञा अधिक स्पष्ट,सोद्देश्य एवं सार्थक कही जा सकती है।

सामान्य हिन्दी, ललित हिन्दी और व्यावसायिक हिन्दी में अंतर

1. सामान्य हिन्दी बोलचाल और लोक व्यवहार की हिन्दी होती है। उसमें आम तौर पर अवधी का प्रयोग होता है यानी लोग अपनी बात एक दूसरे तक सीधी भाषा में सीधे ढंग से पहुंचाते हैं। हां, यदा-कदा लोक प्रचलित लक्षणा और व्यंजना का प्रयोग भी अवश्य होता है, लेकिन वह भी आम लोगों के बीच प्रचलित ही होता हैं।

परन्तु, ललित हिन्दी भाव प्रधान एवं माधुर्यपूर्ण होती है। उक्त भाषा लक्षणा, व्यंजना,अलंकार, रस आदि से संपोषित एवं चातुर्यपूर्ण होती है। उसमें भावविभोर करने की शक्ति के साथ ही चामत्कारिक प्रभाव भी होते हैं। ललित हिन्दी में एक शब्द अथवा संदर्भ के अनेक अर्थ भी हो सकते हैं और अनेक—अनेक अर्थ भी हो सकते हैं और अनेक स्थितियों में होते भी हैं। साहित्य, संगीत, नाटक, प्रहसन आदि ललित साहित्य में आते हैं।

उपर्युक्त से भिन्न व्यावसायिक हिन्दी जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बद्ध कार्यव्यापारों, उद्योगों, शास्त्रों तथा तकनीक और विज्ञान की भाषा है जिसका स्वरूप पूर्व-निर्धारित होता है और जो एकार्थक होता है। यहां अभिधा का ही प्रयोग होता है।

2. सामान्य हिन्दी में व्याकरण के बन्धन नहीं। परन्तु, ललित हिन्दी एवं व्यावसायिक हिन्दी व्याकरण सम्मत होती है।

3. सामान्य हिन्दी का क्षेत्र लोक व्यवहार तक की सीमित होता है। परन्तु, ललित हिन्दी का क्षेत्र तथा व्यावसायिक हिन्दी का क्षेत्र उसके अपरिमेय विस्तार के साथ विस्तृत और प्रांजल होता है।

4. सामान्य हिन्दी तथा व्यावसायिक हिन्दी सदा सार्थक और उपयोगी होती है। किन्तु, ललित हिन्दी कभी कभी अपने कलापक्ष के श्रृंगार से इतनी बोझिल भी हो जाती है कि उससे उसका उद्देश्य हट कर दूर चला जाता है। रीतिकालीन युग में ऐसे साहित्य का भरमार हो गया था। ऐसी स्थिति में सामान्य हिन्दी अथवा व्यावसायिक हिन्दी में जहां भाषा मात्र साधन का काम करती है, ललित हिन्दी में वही साध्य बन कर रह जाती है।

5. सामान्य हिन्दी एवं व्यावसायिक हिन्दी तथ्यात्मक संप्रेषण का साधन है, तो ललित हिन्दी आनन्दानुभूति का।

6. सामान्य हिन्दी एवं व्यावसायिक हिन्दी हमारी आवश्यकता की परिपूरक है। लेकिन ललित हिन्दी मनोरंजन, विनोद एवं चातुर्य का साधक।

7. सामान्य हिन्दी आम जनता के बीच की होती है, व्यावसायिक हिन्दी प्रशासनिक तन्त्रों एवं विविध ज्ञान-विज्ञान एवं शास्त्रों के अध्येताओं, प्रयोक्ताओं के बीच की होती है, तो ललित हिन्दी रसिकों एवं भक्तों के बीच की।

8. सामान्य हिन्दी का उपजीव्य लोक भावना एवं व्यवहारपरक विषय होते हैं; व्यावसायिक हिन्दी का उपजीव्य प्रशासनिक, औद्योगिक, वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषय होते हैं; किन्तु ललित हिन्दी के उपजीव्य अखिल ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत विद्यमान समस्त विषय होते हैं।

9. सामान्य हिन्दी की अभिव्यक्ति शैलियां अनौपचारिक होती हैं, व्यावसायिक हिन्दी की अभिव्यक्ति शैलियां सीमित और औपचारिक होती है; लेकिन ललित हिन्दी की अभिव्यक्ति शैलियां, अनौपचारिक, विवर्तमान और अनन्त होती हैं।

व्यावसायिक हिन्दी के स्वरूप और सामान्य हिन्दी एवं ललित हिन्दी की अपेक्षा उसमें अन्तर पर विचार करने के पश्चात् इसके प्रकार अथवा वर्ग पर भी विचार कर लेना आवश्यक हो सकता है। राजभाषा हिन्दी के सम्बन्ध में विद्वानों ने इस मुद्दे पर अपने-अपने ढंग से विचार करने का प्रयास किया भी है।

डॉ॰ भोलानाथ तिवारी ने प्रयोजनमूलक रूप में इसे सात वर्गों में विभाजित किया है। वे लिखते हैं "समवेततः हिन्दी के मुख्य प्रयोजनमूलक रूप सात हैं। आगे इन के उप रूप भी हो सकते हैं, जिसका संकेत कोष्ठकों में है: (1) बोलचालीय हिन्दी, (2) व्यापारी हिन्दी (इसमें भी मंडियों की भाषा, सर्राफे के दलालों की भाषा, सट्टा बाजार की भाषा आदि कई उपरूप हैं), (3) कार्यालयीन हिन्दी की भाषा आदि कई प्रकार के होते हैं और उनमें भी भाषा के स्तर पर कुछ अंतर है), (4) शास्त्रीय हिन्दी (विभिन्न शास्त्रों में प्रयुक्त भाषाएं भी शब्द के स्तर पर कुछ अलग हैं। इसमें संगीतशास्त्र, काव्यशास्त्र, भाषा शास्त्र, दर्शन शास्त्र, योगशास्त्र, राजनीति शास्त्र, विधि शास्त्र आदि की भाषाएं हैं), (5) तकनीकी हिन्दी (इंजीनियरी, बढ़ईगिरी, लुहारी, प्रेस, फैक्टरी, मिल आदि की तकनीकी भाषा), (6) समाजी हिन्दी (इसका प्रयोग सामाजिक कार्यकर्ता करते हैं), तथा (7) साहित्यिक हिन्दी (इसमें कविता कला साहित्य तथा नाटक की भाषा आदि में अंतर होता है।" इसी प्रसंग में श्री दिलीप सिंह का कहना है "भाषा प्रकार्य के आधार पर हिन्दी के कुछ निम्नलिखित प्रयोजनमूलक वर्ग है। 1. साहित्यिक हिन्दी 2. विज्ञान और तकनीकी हिन्दी 3. विधि कार्यों से सम्बद्ध हिन्दी 4. प्रशासनिक/कार्यालयीन हिन्दी 5. जन संचार के माध्यम (पत्रकारिता, रेडियो) के रूप में हिन्दी (6) वाणिज्य और व्यवसाय की हिन्दी। साहित्यिक हिन्दी में कविता, कथा साहित्य, आलोचना, नाटक, निबन्ध की भाषा, वैज्ञानिक और तकनीकी हिन्दी में विज्ञान से सम्बद्ध इंजीनियरी, लुहारी, प्रेस, फैक्टरी, मिल की प्रयोजनसिद्ध शैलियों, विधि से सम्बद्ध वर्ग में न्यायालय,कानून की हिन्दी, कार्यालयी हिन्दी के अंतर्गत विभिन्न सरकारी, अर्ध सरकारी कार्यालयों में प्रशासनिक कार्यों के लिए प्रयुक्त हिन्दी,जनसंचार के माध्यम के रूप में पत्र-पत्रिकाओं में और रेडियो पर प्रस्तुत हिन्दी का रूप, व्यवसायों से जुड़ी व्यावसायिक हिन्दी में वाणिज्य, व्यापार की भाषा मंडियों की भाषा, सर्राफे की भाषा, बैंकों की भाषा के रूप हिन्दी के प्रयोजनमूलक वर्गों के अन्तर्गत आते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इन वर्षों में हिन्दी का विकास इन सभी प्रयोजनमूलक वर्गों में हुआ है और हिन्दी के इन प्रयोजनसिद्ध विद्वानों ने दफ्तरों में बाबुओं की बातचीत, अखबारी हिन्दी, संसद, विधानमंडलों, जिला परिषदों, ग्राम पंचायतों विभिन्न स्तरों पर व्यापारियों द्वारा प्रयुक्त हिन्दी के आकलन पर बल देते हुए हिन्दी के विस्तृत और व्यापक प्रयोजनमूलक रूपों के अध्ययन-विवेचन को नई दृष्टि दी है। साहित्यिक विधाओं, संगीत, बाजार, समाचार पत्र, क्रय-विक्रय का संसार, फिल्म, चिकित्सा, व्यवसाय, खेत-खलिहान इन विभिन्न प्रयोग क्षेत्रों में हिन्दी के विभिन्न प्रयोजनमूलक रूप प्रयुक्त होते हैं।[12]

ऊपर प्रयोजनमूलक हिन्दी अर्थात् व्यावसायिक हिन्दी के वर्ग विभाजन पर दृष्टिपात करने पर स्पष्ट हो जाता है कि डॉ० भोलानाथ तिवारी ने कहने के लिए वर्गीकरण तो प्रयोजनमूलक हिन्दी का किया है, परन्तु उन्होंने समस्त हिन्दी का ही वर्गीकरण प्रस्तुत कर दिया है और वह भी सर्वांग को ध्यान में रखकर वैज्ञानिक ढंग से वर्गीकृत किया जाना सम्भव नहीं हुआ है। उदाहरणार्थ, उन्होंने प्रयोजनमूलक हिन्दी का वर्गीकण करते समय उसके अंतर्गत एक वर्ग बोचाल की हिन्दी का और एक वर्ग साहित्यिक हिन्दी का भी दर्शाया है। बोलचाल की हिन्दी अथवा साहित्यिक हिन्दी किसी भी तरह प्रयोजनमूलक हिन्दी या यूँ कहें कि व्यावसायिक हिन्दी नहीं हो सकती, फिर इन्हें प्रयोजनमूलक हिन्दी के वर्ग अर्थात् प्रकार के रूप में दर्शाने का क्या तुक हो सकता है। स्पष्ट है कि इनके मस्तिष्क में वस्तुतः प्रयोजनमूलक हिन्दी अथवा व्यावसायिक हिन्दी के स्वरूप का सही चित्र है ही नहीं। यही कारण है कि कथ्य कुछ और है और विवेचन कुछ और। इसी तरह, श्री दिलीप सिंह ने भी प्रयोजनमूलक हिन्दी के अन्तर्गत साहित्यिक हिन्दी को भी सम्मिलित कर लिया है जो उचित नहीं है।

मेरी राय से प्रयोजनमूलक हिन्दी अथवा व्यावसायिक हिन्दी को इन वर्गों में विभाजित कर देखा जा सकता है: 1. कार्यालयी हिन्दी 2. सूचनार्थक एवं प्रचारात्मक हिन्दी 3. औद्योगिक हिन्दी 4. शास्त्रीय हिन्दी 5. वैज्ञानिक हिन्दी 6. तकनीकी हिन्दी तथा 7. योगपरक एवं आध्यात्मिक हिन्दी

1. **कार्यालयी हिन्दी:** सरकारी, गैर सरकारी कार्यालयों में प्रशासनिक कार्यों तथा कार्मिक प्रबन्धन, औद्योगिक सम्बन्ध आदि से सम्बद्ध कार्यव्यापारों को निपटाने के लिए प्रयुक्त होने वाली हिन्दी कार्यालयी हिन्दी है। कार्यालयी हिन्दी के अन्तर्गत टिप्पणियां, पत्राचार, बैठकों की कार्यसूची, कार्यवृत्त, ज्ञापन, अनुस्मारक, कार्यालय आदेश, निविदा-सूचना तथा निविदा सम्बन्धी अन्य कागजात, करार, ठेका आदि से सम्बन्धित कागजात आदि सम्मिलित हैं।

2. **सूचनार्थक एवं प्रचारात्मक हिन्दी:** सूचनार्थक एवं प्रचारात्मक हिन्दी के अन्तर्गत प्रेस-विज्ञप्ति, विज्ञापन, समाचार, रिपोर्ट, आकाशवाणी एवं दूर-दर्शन के उद्घोषित और प्रसारित विभिन्न सूचनार्थक, शैक्षणिक मद आदि आ सकते हैं। परन्तु, इसके अन्तर्गत इन माध्यमों से प्रसारित मनोरंजन कार्यक्रम नहीं आ सकते।

3. **औद्योगिक हिन्दी:** औद्योगिक हिन्दी के अन्तर्गत उद्योगों, व्यापारों, बाजारों आदि की हिन्दी सम्मिलित है। इसके अन्तर्गत छोट-छोटे ग्रामीण हाट बाजारों से लेकर सट्टा-बाजारों, मंडियों से ले कर अनाज, कपड़े, बर्तन, साज-सामान, इलेक्ट्रानिक—उपकरणों आदि सभी तरह के व्यापारों को, क्रय-विक्रय को सम्पादित करनेवाली हिन्दी को सम्मिलित किया जा सकता है।

4. **शास्त्रीय हिन्दी:** शास्त्रीय हिन्दी का क्षेत्र बड़ा ही व्यापक है और इसके अन्तर्गत समाज शास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, नीतिशास्त्र, तर्कशास्त्र, दर्शन शास्त्र, संगीतशास्त्र, काव्यशास्त्र, भाषा शास्त्र, विधि शास्त्र आदि समस्त शास्त्रीय विषय सम्मिलित हैं। निश्चय ही इन शास्त्रों की अपनी शब्दावलियां हैं और उनके अपने-अपने पृथक संदर्भ भी हैं।

5. **वैज्ञानिक हिन्दी:** शास्त्रीय हिन्दी की तरह ही वैज्ञानिक हिन्दी का क्षेत्र भी बड़ी ही विशद और व्यापक है। आज के वैज्ञानिक पुनरुत्थान के युग में इस क्षेत्र में नए नए प्रयोग और नई-नई खोज के परिणामस्वरूप नई नई उपस्थापनाओं/संकल्पनाओं का तेजी से विकास हो रहा है। अतः इसका महत्व और भी अधिक हो गया है। कारण, विज्ञान की इस द्रुतगामी प्रगति के साथ ही साथ अन्य जीवन्त भाषा की तरह हिन्दी में भी नई-नई संकल्पनाओं को अभिव्यक्ति देनेवाली नई-नई शब्दावलियां अनायास ही आती जा रही हैं और हमारा वैज्ञानिक साहित्य इनसे संपुष्ट होकर और भी सबल होता जा रहा है। वैज्ञानिक हिन्दी के अन्तर्गत भौतिक विज्ञान, जीव विज्ञान, नृ-विज्ञान, मनोविज्ञान, ध्वनि विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान आदि सम्मिलित हैं।

6. **तकनीकी हिन्दी:** वस्तुतः आज की सर्वाधिक जीवन्त और अत्यधिक कामकाजी हिन्दी है। इसके अन्तर्गत बढ़ईगिरी, लुहारी, फैक्टरी, मिल आदि से लेकर वैमानिकी, जलयानिकी, खान कर्म आदि से सम्बद्ध हिन्दी सम्मिलित है। कर्मशाला (वर्कशॉप) ऊष्मरुह (रिफ्रैक्टरीज), संयंत्र (प्लॉट) आदि की हिन्दी तथा अभियान्त्रिकी से सम्बद्ध हिन्दी इसी के अन्तर्गत आती है।

7. **योगपरक एवं आध्यात्मिक हिन्दी:** इसके अन्तर्गत पतंजलि के योगशास्त्र से ले कर वेद, उपनिषद, ब्राह्मण, पुराण आदि ग्रन्थों की योग से सम्बद्ध एवं आध्यात्मिक ऐसी शब्दावलियां सम्मिलित हैं जो हिन्दी में अपने मूल रूप (तत्सम रूप) में अथवा परिवर्तित रुप (तद्भव रूप) में अपने मूल अर्थ में ही प्रयुक्त हो रही हैं। हिन्दी में यौगिक क्रियाओं, आसन, प्राणायाम, इन्द्रिय निग्रह तथा आध्यात्मिक चिंतनपरक साहित्य एवं व्यवहार में प्रयुक्त शब्दावलियां इसी कोटि की हैं।

सन्दर्भ

1. "प्रयोजनमूलक हिन्दी और उसमें अन्तर्निहित अनुवाद की प्रक्रिया" **राजभाषा भारती** अक्टूबर-दिसम्बर, 1984
2. प्रयोजनमूलक हिन्दी पृ० 1
3. हिन्दी भाषा पृ० 214-215
4. प्रयोजनमूलक हिन्दी: प्रशिक्षण के संदर्भ में—"राजभाषा भारती" अप्रैल-जून 1979
5. व्यावसायिक हिन्दी पृ० 8
6. हिन्दी भाषा—पृ० 325
7. प्रयोजनमूलक हिन्दी और उसमें अन्तर्निहित अनुवाद की प्रक्रिया—"राजभाषा-भारती" अक्टूबर-दिसम्बर, 1984

शेष पृष्ठ 16 पर

प्रबंधकीय दायित्व के निर्धारक तत्व

–श्रीराम मेहरोत्रा*

किसी भी संस्थान या संगठन में नीतियों का अनुपालन और कार्यान्वयन कराने के लिए विशिष्ट उत्तरदायित्व का निर्धारण और प्रबंधकीय तंत्र द्वारा उनका अनुपालन कराना आवश्यक होता है। संस्था के संरचनात्मक स्वरूप में नीतियों के अनुपालन के जो दिशा-निर्देश प्राप्त होते हैं। वे किसी अधिनियम, नियमावली, आचार संहिता, अनुदेशों-आदेशों आदि के रूप में होते हैं। सरकारी उपक्रमों के कार्यालयों/विभागों में कार्य करने के भाषा संबंधी माध्यम के दिशा निर्देश मूलतः हमें भारतीय संविधान से प्राप्त होते हैं। इसके अनुसार संघ सरकार की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी लिपि होगी। इस नीति के अनुपालन का उत्तरदायित्व संघ सरकार और उनके अधीन आनेवाले कार्यालयों का होगा। इस आधार पर बैंकों में कार्य करने का भाषा माध्यम हिंदी है और इस नीति के अनुपालन का पूर्ण दायित्व उसके प्रबंधन तंत्र का ही है। राष्ट्रीयकरण के बाद बैंकों के लिए भी संघ सरकर की राजभाषा नीति का अनुपालन अनिवार्य हो गया। संविधान द्वारा निर्धारित राजभाषा नीति, राष्ट्रपति द्वारा समय-समय पर जारी विभिन्न आदेश, राजभाषा अधिनियम 1963 (यथा संशोधित 1967), राजभाषा संकल्प 1968, राजभाषा नियम 1976 तथा समय-समय पर राजभाषा विभाग द्वारा जारी कार्यान्वयन संबंधी विभिन्न आदेशों का अनुपालन सांविधिक दायित्व है और कोई भी किसी भी सूरत में इसकी अवहेलना नहीं कर सकता। यह उपलब्धि का एक विषय है कि बैंकों में राजभाषा संबंधी इस नीति का औसतन गंभीरता के साथ अनुपालन हो रहा है। तथापि हमें इस दिशा में अभी बहुत कुछ करना है और अनुपालन के मूलभूत दायित्व के तत्वों से प्रबंधन वर्ग के लोगों को और गहराई से परिचित कराना है जिससे उनके अधीनस्थ उनकी कम जानकारी या अज्ञानता का अनुचित लाभ न उठा सकें। इस कारण प्रबंधन करने वाले व्यक्ति को राजभाषा नियमों की व्यापक जानकारी होनी चाहिए, साथ ही अनुपालन कराने की अपने सामर्थ्य और अधिकारों की भी पूरी जानकारी होनी चाहिए। इस विषय में नीति निर्धारक पहले से ही स्पष्ट और सतर्क थे, इस कारण राजभाषा नियम बनाते हुए उन्होंने यह स्पष्ट किया कि:—

"केन्द्रीय सरकार के प्रत्येक कार्यालय के प्रशासनिक प्रधान का यह उत्तरदायित्व है कि वह सुनिश्चित करे कि राजभाषा अधिनियम और राजभाषा नियमों के अधीन जारी किए गए निर्देशों का समुचित अनुपालन हो। **यदि कोई कर्मचारी या अधिकारी जानबूझकर राजभाषा के बारे में लागू प्रावधानों की अवहेलना करता है तो प्रकरण से संबंधित नियमों और आदेश के उल्लंघन होने के आधार पर कार्रवाही की जा सकती है।** (राजभाषा विभाग, का०ज्ञा० सं० 12019/19/3/89 रा० भा० (भा०) दि० 22.8.89 तथा का०ज्ञा०सं० 14012/8/92-रा०भा० (ग) दि० 19.5.92)

गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा जारी उपरोक्त आदेश राजभाषा नियम 1978 के नियम 12 में प्रबंधकीय भूमिका अदा करने वाले उन अधिकारियों को स्पष्ट दिशा निर्देश देता है जिन्हें राजभाषा प्रयोग की जवाबदारी करनी पड़ती है और जो आवश्यकता होने पर जरूरी हो।

अनुपालन का दायित्व

केन्द्रीय सरकार प्रत्येक कार्यालय के प्रशासनिक प्रधान का यह दायित्व है कि वहः—

1. यह सुनिश्चित करे कि अधिनियम और उन नियमों के उपबंधों का समुचित रूप से अनुपालन सुनिश्चित किया जाता है और
2. इस प्रयोजन के लिए उपयुक्त और प्रभावकारी जांच पड़ताल करे, तथा
3. केन्द्रीय सरकार अधिनियम और इन नियमों के उपबंध के अनुपालन के लिए अपने कर्मचारियों को समय-समय पर ऐसे निर्देश जारी कर सकती है जो कि आवश्यक हो।

उपरोक्त दिशा निर्देश और दायित्व निर्धारण से स्पष्ट है कि अपने-अपने कार्यालय में कार्यालय प्रधान की महत्वपूर्ण भूमिका और जवाबदेही है। यद्यपि इस पर बहुत गंभीरता से कभी ध्यान नहीं दिया गया लेकिन अब जिस प्रकार से हिंदी प्रयोग के प्रति गंभीरता से प्रयास किया जा रहा है और सरकार की भी समय-समय पर जवाबदेही करनी पड़ती है उसे देखते हुए शाखा/कार्यालय प्रधान को हिन्दी प्रयोग के प्रति सदैव चौकन्ना और सजग रहने की आवश्यकता है। ऐसे उदाहरणों की अब कमी नहीं है जब अपने उत्तरदायित्व को अच्छी तरह न जानने के कारण कई स्थानों पर कार्यालय प्रमुखों को सांविधिक समस्याओं का अनावश्यक और अनपेक्षित सामना करना पड़ा है। ऐसी स्थितियों से बचने के लिए प्रबंधन तंत्र को कार्यालय की सामान्य आचार संहिताओं की जानकारी की भांति राजभाषा नियमावलियों का भी समुचित ज्ञान और प्रशिक्षण आवश्यक है।

हर प्रबंधन तंत्र को नीति नियोजकों द्वारा उनके मूल कार्यों का समयपरक (पीरिआडिकल) लक्ष्य दिया जाता है और उसी के अनुसार उनकी उपलब्धियों की समीक्षा होती है। हिंदी कार्यान्वयन के लिए भी नीति नियोजक (सरकार) द्वारा कार्यालयों और क्षेत्रों की प्रकति के अनुसार लक्ष्य दिए जाते है जिसे **"वार्षिक कार्यक्रम"** कहा जाता है। इस कार्यक्रम की उपलब्धि की नियमित समीक्षा का भी स्पष्ट प्रावधान है जिसके अंतर्गत "राजभाषा कार्यान्वयन समितियां" गठित की जाती है। प्रत्येक कक्ष या कार्यालय प्रभारी को इस समिति के प्रति उत्तरदायी होना पड़ता है। इस

* प्रबंधक, (राजभाषा) पंजाब एण्ड सिंध बैंक (मु०), 21-राजेन्द्रा प्लेस, नई दिल्ली-110008

कारण उन्हें राजभाषा नियमों की जानकारी आवश्यक है। लक्ष्यों के अतिरिक्त समय-समय पर जो सामान्य नियम/उपबंध बनाए जाते है उनकी सही जानकारी के बिना लक्ष्यों की पूर्ति संभव नहीं है। राजभाषा अधिनियम 1963 के उपबंधों के आधार पर 1976 में जो राजभाषा नियम बनाए गए वे इस प्रकार बनाए गए है कि राजभाषा नीति/नियमों संबंधी लगभग सभी बातें उसमें समाहित हो जाती हैं। इन पर ध्यान देने से राजभाषा कार्यान्वयन में आसानी होती है। ऐसे मुख्य नियमों का विवरण नीचे दिया जा रहा है—

1. हिंदी में प्राप्त पत्रों का उत्तर हिंदी में दिया जाना अनिवार्य है। ऐसा करने का कारण यह है कि जिसने हिंदी में पत्र लिखा, वह हमसे हिंदी में ही उत्तर की अपेक्षा रखता है और इसी आधार पर पत्रोत्तर देने वाला हिंदी में उत्तर देने के लिए प्रयास करेगा। इसलिए नियम 5 में यह आवश्यक बताया गया है और इसका उल्लंघन गंभीर अवहेलना माना जाता है।

2. अंग्रेजी में उपलब्ध सभी प्रकार के नियम, आचार संहिताएं, मैनुअल, कार्यालय आदेश, परिपत्र, प्रक्रिया साहित्य, टेंडर आदि द्विभाषिक — हिंदी-अंग्रेजी में जारी होने अनिवार्य है। ऐसा करने से एक तो जो लोग हिंदी उपयोग के प्रति अभ्यस्त नहीं है उन्हें कोई कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ेगा, दूसरे वे हिंदी भाषा के स्वरूप और शैली से धीरे-धीरे परिचित हो जाएंगे। यह एक वैधानिक आवश्यकता है और इसका पालन हो रहा है या नहीं, यह देखने की जिम्मेदारी हस्ताक्षरकर्त्ता (कार्यालय प्रधान) की है। इस विषय में कहा गया है कि उक्त प्रकृति के कागजातों पर हस्ताक्षर करने से पहले यह सुनिश्चित कर लिया जाए कि वे द्विभाषिक जारी हो रहे हैं या नहीं। राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा 3 (3) में इस कार्य को वैधानिक दर्जा दिया गया है और प्रत्येक प्रबंधन तंत्र को इसके पालन के लिए सरकार और संसदीय समिति के प्रति जवाबदार होना पड़ता है।

3. जो आवेदन, अभ्यावेदन हिंदी में किए गए हो या हिंदी में हस्ताक्षरित हों, उनका उत्तर हिंदी में ही दिया जाना अनिवार्य है। ऐसा नियम बनाते समय अन्य बातों के अतिरिक्त इस पहलू पर भी गंभीरता से ध्यान दिया गया था कि भारत की अधिकांश जनता अशिक्षित या अर्द्धशिक्षित है। उसे अपने प्रार्थना पत्र के लिए अर्जी नवीसों या पड़ोसी से पत्र लिखकर टूटी-फूटी भाषा में हस्ताक्षर करना पड़ता है या अंगूठा लगाता है तो पाने वाले को समझ लेना चाहिए कि कि अभ्यावेदन की भाषा वही है जिसमें उसने हस्ताक्षर किए हैं और उसको जो उत्तर दिया जाना है वह हिंदी में हो। नियम 7 (1) और (2) में यही स्पष्ट निर्देश दिया गया है।

इसी नियम में प्रबंधक वर्ग के लिए यह भी निर्देश है कि जब कोई कर्मचारी यह चाहता है कि सेवा विषयों (जिसमें अनुशासनिक कार्रवाइयां सम्मिलित है) से संबंधित कोई आदेश या सूचना जिसका कर्मचारी पर तामील किया जाना अपेक्षित है, यथास्थिति हिंदी में या अंग्रेजी में होनी चाहिए तो वह उसे बिना किसी अनुचित विलम्ब के उसी भाषा में दी जाएगी। यह बहुत महत्वपूर्ण और सावधानी भरा निर्देश है क्योंकि यह किसी व्यक्ति की सेवा स्थितियों और न्यायिक प्रक्रिया से जुड़ा उसके निर्णायक भविष्य का प्रश्न हो सकता है। और उसे नए नैसर्गिक न्याय दिलाने का प्रश्न हो सकता है। इसलिए यदि इसका असावधानी के कारण या जानबूझ कर उल्लंघन किया जाता है तो प्रत्येक प्रबंधक (अनुशासनिक अधिकारी) के लिए अपने आप में परेशानी का विषय बन सकता है। इसलिए इस बात पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए कि कार्मिक को उनके सेवा संबंधी और अनुशासनिक पत्रादि हिंदी में दिए जाने चाहिए। यह राजभाषा नियम 7(3) है।

4. कार्यालयों में हिंदी के प्रयोग को निर्णायक दिशा देने के लिए नियम 8(1) में यह निर्देश दिया गया है कि कर्मचारी किसी फाइल पर टिप्पणी या कार्यवृत्त हिंदी या अंग्रेजी में लिख सकता है और उससे यह अपेक्षा नहीं की जाएगी कि वह उसका अनुवाद दूसरी भाषा में भी प्रस्तुत करे। इस नियम के अनुसार कोई वरिष्ठ अधिकारी अपने कनिष्ठ द्वारा हिंदी में लिखी टिप्पणी पर भाषा संबंधी कोई नाराजगी नहीं जाहिर कर सकता। नियम में यह भी स्पष्ट है कि कोई भी कर्मचारी/अधिकारी जिसे हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त है, किसी हिंदी दस्तावेज के अंग्रेजी अनुवाद की मांग तभी कर सकता जब दस्तावेज विधिक या तकनीकी प्रकृति का हो। साधारण अवस्था में अंग्रेजी अनुवाद की मांग नियमों का उल्लंघन कहलाएगी।

प्रबंधन वर्ग को उपरोक्त नियमों की बड़ी स्पष्ट जानकारी होना अति आवश्यक है। प्रबंधकों के पक्ष में इस कानून की यह स्थिति अत्यंत सौभाग्यपूर्ण है कि जन सामान्य को राजभाषा कानून की बातें अभी लोकप्रिय तरीके से मालूम नहीं है, सेवाओं का उपभोक्ता वर्ग या स्वयं कर्मचारी वर्ग इससे निकट से परिचित नहीं है, यह प्रबंधन तंत्र के हित में है अन्यथा दैनंदिन कार्यों में भाषा संबंधी मुद्दे को आड़ बनाकर प्रायः ही विवाद खड़ा किया जा सकता है और मूल कार्य के शीघ्र निपटारे को इच्छानुसार लटकाए रखा जा सकता है। ऐसा समय आए और प्रबंधक वर्ग की कमजोरी का यह एक हिस्सा बने, इससे अच्छा हो कि वे अपने दायित्व को भली भांति पहचान कर उस पर आचरण करे।

इस विषय में एक बात और महत्वपूर्ण है। प्रबंधन वर्ग/कार्यालय प्रधानों को सभी प्रकार की नीतियों/निर्देशों के अनुपालन और कार्यान्वयन के लिए जन-शक्ति के मनोविज्ञान को समझना और भौतिक परिस्थितियों को अनुकूल बनाकर कार्य लेना पड़ता है। आज जो जनशक्ति और कर्मचारी संघों का संगठित ताना-बाना है, कर्तव्य से अधिक अधिकार-स्थितियों पर विचार किया जाता है, ऐसी स्थिति में अधिकारों का तालमेल बैठाना कार्यालय प्रधान की मनोवैज्ञानिक पकड़ पर निर्भर करता है। यह मनोविज्ञान राजभाषा कार्यों में किसी भी सामान्य कार्य से अधिक महत्वपूर्ण है। जो लोग वर्षों से आदतों से मजबूर है, हिंदी प्रयोग को आसानी से स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है, उनसे हिंदी में कार्य कराना आसान बात नहीं है। प्रबंधन तंत्र को यह बहुत बड़ी चुनौती है और जब तक कार्यालय प्रधान इसमें पहल नहीं करेगा, उसके अधीनस्थ उस पर आचरण नहीं करेंगे। इसलिए कार्यालय प्रधान को स्वयं हिंदी के प्रयोग के लिए राजभाषा नीतियों के पालन की पहल करनी पड़ेगी, तब वह उत्प्रेरण और प्रोत्साहन द्वारा इसका अनुपालन करा सकेगा। राजभाषा कार्यान्वयन धैर्य , समझदारी और प्रबंधकीय कौशल का कार्य है। बार-बार इन्कार सुन कर पुनः अनुरोध करने के लिए तैयार रहने वाले सफलता से इस कार्य को पूरा कर सकेंगे।

शेष पृष्ठ 21 पर

राजभाषा अधिकारी की प्रबंधकीय भूमिका

-डॉ॰ बुद्धिनाथ मिश्र*

भारत सरकार के कार्यालयों और सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों में प्रबंधक वर्ग में राजभाषा अधिकारी के पद संविधान के भाषा संबंधी निर्देशों और राजभाषा अधिनियम, 1963 व राजभाषा नियम, 1976 के प्रावधानों के अनुपालन के लिए पिछले दो दशकों से सर्जित किये जा रहे हैं। सम्प्रति केन्द्र सरकार के सभी मंत्रालयों/विभागों तथा उनके अधीनस्थ कार्यालयों और उपक्रमों में "संघ" की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन की व्यवस्था करने के लिए राजभाषा संवर्ग में विभिन्न स्तरों के पदों पर अधिकारी कार्यरत हैं। इस संवर्ग में सर्वोच्च पद सचिव (राजभाषा) का है, जो गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग में है और जिस पर वरिष्ठ आई॰ए॰एस॰ अफसर नियुक्त किए जाते हैं। अन्य मंत्रालयों/विभागों में सहायक निदेशक से निदेशक स्तर के पद तथा अधीनस्थ कार्यालयों में वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी या सहायक निदेशक स्तर के पद सर्जित किये गये हैं। जहां तक सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों, बैंकों आदि का प्रश्न है, वहां उच्चतम पद संबंधी कोई सरकारी गाइड-लाइन न होने के कारण राजभाषा अधिकारी (ई-1) से प्रबंधक (ई-5) स्तर तक के पद प्रबंधक वर्ग ने स्वविवेक से सर्जित किये हैं। इस प्रकार सरकारी प्रबंध तंत्र में राजभाषा अधिकारी के पद सामान्यतः निम्न श्रेणी या मध्यम श्रेणी के प्रबंधक के रूप में हैं। इन पदों पर सेवारत अधिकारी यद्यपि प्रशासनिक दृष्टि से रिपोर्ट अपने से दो-तीन श्रेणी ऊंचे पद पर कार्यरत किसी अन्य विभाग के कार्यपालक को करते हैं, लेकिन राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य-सचिव के रूप में उनका सीधा सम्पर्क कार्यालय के सर्वोच्च कार्यपालक से रहता है। यह एक ऐसी व्यवस्था है, जिसके कारण राजभाषा अधिकारी को निम्न श्रेणी के पदों पर आसीन होना आड़े नहीं आता और वह अपनी क्षमता से कई गुना अधिक भार उठा सकता है।

प्रारंभ में इस संवर्ग के पदों पर नियुक्ति मात्र एक साक्षात्कार के द्वारा हो जाया करती थी। कवि दिनकर जी और "बच्चन" जी से लेकर कथाकार शिवसागर मिश्र तक की नियुक्ति इसी "स्वयंवर" पद्धति से हुई थी। ये सभी प्रतिष्ठित साहित्यकार थे। आई॰ए॰एस॰ अफसरों में श्री रमा प्रसन्न नायक ने सचिव (राजभाषा) के रूप में श्रेयस्कर कार्य किया था। बाद में राजभाषा अधिकारी पद के लिए न्यूनतम अर्हता और अनुभव निर्धारित किया गया। यह अर्हता है — हिंदी या अंग्रेजी में स्नातकोत्तर डिग्री तथा दोनों में से एक भाषा में स्नातक स्तर की शिक्षा। इस प्रकार जूनियर मैनेजमेंट ग्रूप के लिए जहां सामान्यतः स्नातक स्तर की शिक्षा अर्हणीय है, वहां विधि आदि परामर्श-मूलक संवर्गों की तरह राजभाषा संवर्ग के लिए स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा न्यूनतम अर्हता के रूप में निर्धारित है। इस पद पर भर्ती के लिए कुछ वर्षों के अनुवाद का अनुभव या एक स्तर निचले पद पर तीन वर्ष तक काम करने का अनुभव मांगा जाता है। अभ्यर्थियों की संख्या बढ़ने पर भर्ती के लिए साक्षात्कार से पूर्व एक लिखित परीक्षा भी ली जाने लगी है, जिसमें मुख्यतः अभ्यर्थी के हिंदी और अंग्रेजी भाषाओं के ज्ञान, उसकी अनुवाद क्षमता एवं राजभाषा अधिनियम व नियमों की जानकारी का मूल्यांकन किया जाता है। अधिकतर कार्यालयों में राजभाषा अधिकारी एक्स-कैडर में रखे गये हैं, जिसके अपने गुण-दोष हैं। इसकी सबसे बड़ी अच्छाई यह है कि यदि प्रबंधन की दृष्टि में अधिकारी अपनी कार्यक्षमता और उपलब्धियों के बल पर पदोन्नति के योग्य है, तो पंक्ति से अलग रहने के कारण उसकी पदोन्नति में कोई बाधा या देरी नहीं होती।

भर्ती के बाद परिवीक्षा काल में कार्यपालकों को कार्यालय के बारे में कार्य की प्रकृति और प्रविधि के बारे में प्रशिक्षण दिया जाता है, ताकि वे अपने पद से की जाने वाली अपेक्षाओं को ठीक से समझ कर काम शुरू कर सकें। अभी तक राजभाषा संवर्ग में नवनियुक्त अधिकारियों को इस प्रकार का प्रशिक्षण देने की कोई व्यवस्था नहीं है। परिणामस्वरूप, जिन कार्यालयों में पहले से राजभाषा कक्ष कार्यरत नहीं है, वहां समुचित मार्ग-दर्शन के अभाव में राजभाषा अधिकारी अपनी दिशा भूल जाते हैं और "किसी तरह दिन काटने" की आत्मघाती मानसिकता ओढ़ लेते हैं। ऐसे अधिकारी अपने कार्यालय की "आस्ति" के बजाय "देयता" मद में गिने जाते हैं। कोई भी विकासशील राष्ट्र अपनी कीमती जनशक्ति को इस तरह झोली में भरकर ज्यादा दूरी तय कर सकता। नहीं

राजभाषा अधिकारी कार्यालय के प्रबंधतंत्र का अंग होता है और एक प्रबंधक के रूप में उसकी भूमिका जितनी महत्वपूर्ण है, उतनी ही कठिन भी। सामान्यतः प्रबंधक से तीन अपेक्षाएं की जाती हैं:

1. वह अपने काम के बारे में पूरी जानकारी रखे।
2. वह अपने दायित्व के दबाव से ऊपर उठकर अधिकारियों और अधीनस्थ कर्मचारियों को प्रभावी ढंग से संप्रेषित करे।
3. वह अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए स्वविवेक से प्रक्रिया अपनाए।

सरकारी कार्यालयों में राजभाषा का अपेक्षित प्रयोग न होने का एक कारण यह भी है कि राजभाषा अधिकारी को अपने विषय की पूरी जानकारी नहीं होती है। चूंकि "ज्ञान ही शक्ति है", इसलिए जानकारी के अभाव में अपनी भूमिका सही-सही निभाने में वे अपने को "अशक्त" पाते हैं। एक प्रबंधक के रूप में राजभाषा अधिकारी की सबसे बड़ी जिम्मेदारी यह है कि वह एक ओर राजभाषा संबंधी निर्देशों की अद्यतन जानकारी रखे और दूसरी ओर भाषा के क्षेत्र में होने वाले नए-नए प्रयोगों से अवगत हो। तभी वह व्यावहारिक स्तर पर हिन्दी को अपने कार्यालय में आगे बढ़ा सकता

*सहायक प्रबंधक (राजभाषा), हिन्दुस्तान कापर लि॰, 10-कैमेक स्ट्रीट, कलकत्ता-700017

है। अपने काम की जानकारी के अलावा उसमें कर्तव्य-निष्ठा का होना अत्यावश्यक है। जहां कर्तव्यनिष्ठ अधिकारी सेवारत हैं, वहां उन्होंने अपनी सूझबूझ और लगन से हिन्दी का काम आगे बढ़ाया है। जहां केवल नौकरी करने की भावना से कार्यरत अधिकारी हैं, वहां हिन्दी की प्रगति खाना-पुरी की सीमा से आगे नहीं बढ़ पायी है।

कागजी तौर पर प्रत्येक कार्यालय में राजभाषा के कार्यान्वयन का दायित्व कार्यालय-प्रधान को सौंपा गया है, लेकिन वस्तुतः इसका सारा दायित्व उस कार्यालय में कार्यरत राजभाषा अधिकारी पर होता है। उसे एक ओर जहां सरकार के मार्गदर्शी सिद्धान्तों का अनुपालन करना होता है, वहीं दूसरी ओर कर्मचारियों के प्रशिक्षण तथा सामान्य आदेशों के अनुवाद की भी व्यवस्था करनी होती है। इस त्रिविध दायित्व का निर्वाह वह तभी कर सकता है, जब वह अपने काम के दबाव को ठीक से ऊपरी अधिकारियों और अधीनस्थ कर्मचारियों तक संप्रेषित कर सके। इसके लिए उच्च स्तर की प्रबंधकीय क्षमता उसमें होनी चाहिए और जहां अभिप्रेरण (मोटिवेशन) की कमी दिखायी दे, वहां उसके कारणों को जानने और उन्हें दूर करने के लिए समुचित उपाय करने की भी दक्षता उसमें होनी चाहिए। इसी प्रकार अन्य विभागों से अपेक्षित राजभाषा-संबंधी कार्यों को भी वह सही समय पर और सही ढंग से दबाव डालकर ही करा सकता है। यह दबाव संयत मन से और काफी सोच-विचार कर डालना होता है, ताकि प्रतिकूल प्रतिक्रिया न हो।

राजभाषा अधिकारी के लिए लक्ष्य सामान्यतः सरकार द्वारा निर्धारित लक्ष्य हैं, जिन्हें प्राप्त करने के लिए उसे अपने कार्यालय की कार्य संस्कृति एवं परिस्थिति के अनुसार अपनी प्रक्रिया निर्धारित करनी होती है। जो प्रक्रिया "क" क्षेत्र में अपनायी जा सकती है, वही प्रक्रिया "ग" क्षेत्र में प्रतिकूल परिणाम दे सकती है। इसलिए प्रक्रिया के चयन में काफी चिंतन और विद्यमान स्थिति के विश्लेषण की जरूरत होती है।

एक प्रबंधक के रूप में राजभाषा अधिकारी का सबसे पहला काम अंतःकरण से यह अनुभव करना है कि वह बाहर से आया हुआ देवदूत नहीं, बल्कि एक संयंत्र का पुर्जा है। संयंत्र से अलग हटकर निष्क्रिय हो जाना उसकी नियति है। वह कार्यालयीन काम को तभी पूरा कर सकता है, जब वह अपनी जगह पर फिट हो। यह कहना इसलिए आवश्यक है कि बहुत से राजभाषा अधिकारी इस धारणा के अभाव में बाहरी मंचों पर अपने प्रबंधक वर्ग के खिलाफ बोलने लगते हैं, जबकि वस्तुतः वे वहां पर अपने कार्यालय के प्रबंधक वर्ग के प्रतिनिधि होते हैं और उनका प्रथम कर्तव्य अपने प्रबंधन के पक्ष को सही परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करना होता है।

सामान्यतः सरकारी कार्यालयों में और विशेषकर राजभाषा कक्ष में परम्परा से प्राप्त प्राधिकारी की अपेक्षा अर्जित प्राधिकार का वर्चस्व होता है। इसलिए जो राजभाषा अधिकारी यह अनुभव करते हैं कि उनके पास कोई प्राधिकार (अथारिटी) नहीं है, उन्हें एक गृहिणी से सबक लेना चाहिए, जिसके पास कागजी तौर पर कोई प्राधिकार नहीं होता, लेकिन वास्तविक रूप में वह घर और परिवार को अपने कार्य द्वारा अर्जित प्राधिकार से संचालित करती है। अपना प्राधिकार अर्जित करने के लिए वह न केवल अपनी "ड्यूटी" का विस्तार करती है और कई प्रकार की भूमिकाओं को एक साथ निभाकर परिवार के सदस्यों में अपने को अपरिहार्य बना लेती है, बल्कि पति, संतान आदि के कल्याण के लिए व्रत उपवास रखकर वह अपनी वफादारी का ऐसा अमोघास्त्र चलाती है, जिसके सामने बड़े से बड़े कमाऊ सदस्य भी स्वयं को निस्तेज अनुभव करते हैं। कार्यालय की परिधि में इस प्रकार की अपरिहार्य जगह बनाने के लिए राजभाषा अधिकारी को अपनी ड्यूटी का आयतन बढ़ाना होगा और अपने कार्यालय के हित के लिए वे कष्ट भी उठाने होंगे, जो उनके लिए बाध्यकर नहीं हैं।

सतही तौरपर "मैनेजर" का काम ही है "मैनेज" कर लेना यानी दिये गये काम को करा लेना। अच्छा कर्मचारी वह है जो "जितना काम कहा जाए, उतना समय से कर दे"। लेकिन, अच्छा अधिकारी वह है जो अपने काम को बेहतर ढंग से निबटाने के लिए नयी सोच, नयी समझ का उपयोग करे। चूंकि भाषा का सम्बंध मनुष्य की भावना से है और ज्यादातर सरकारी कार्यालयों में कार्यरत कर्मचारी कुर्सी पर बैठते समय अपनी वैयक्तिक भावना की पगड़ी उतार कर रखना भूल जाते हैं, इसलिए राजभाषा अधिकारी को अपनी भूमिका निभाते समय ऐसा कोई कदम नहीं उठाना चाहिए, जिससे किसी की भावना को ठेस लगे। महात्मा गांधी की तरह बिना ढाल और तलवार के वह तभी लड़ाई जीत सकता है, जब अपने विरोधियों के विचारों को समुचित आदर देते हुए अपनी वांछित दिशा में उन्हें मोड़ने की दृढ़ आत्मिक शक्ति उसमें हो। पिछले वर्षों में भारतीय प्रबंधन की सोच और दृष्टिकोण में भी काफी अंतर आ गया है। अंग्रेजों के जमाने में प्रबंधन की नीति "हायर एंड फायर" की थी। वह नीति अब थोड़े से प्राइवेट आफिसों में ही देखने को मिलेगी। आज का प्रबंधन सभी वर्गों की समुचित प्रतिभागिता का प्रबंधन है, जिसमें कोई भी नया प्रयोग सबको समझा-बुझाकर, सबको विश्वास में लेकर ही किया जा सकता है। राजभाषा अधिनियम का प्रावधान भी है कि किसी कर्मचारी को हिन्दी या अंग्रेजी में काम करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। हां, उसे विभिन्न प्रोत्साहनों और प्रयत्नों द्वारा हिन्दी में काम करने के लिए प्रेरित अवश्य किया जा सकता है। कर्मचारियों के मन में इस अंतः प्रेरणा को उपजाने में राजभाषा अधिकारी के व्यक्तित्व का बहुत बड़ा योगदान होता है। यदि राजभाषा अधिकारी बहुसंख्यक कर्मचारियों के भाषिक समुदाय का है, यदि हिन्दी के साथ अंग्रेजी और स्थानीय भाषा में भी वह पारंगत है, यदि कार्यालय के बाहर भी वह अपनी सामाजिक/रचनात्मक गतिविधियों के कारण कर्मचारियों की दृष्टि में "उपयोगी" या "सहायक" है, यदि वह अपनी सक्रियता से अपने आसपास के वातावरण को "जीवित" बनाये रखता है, तो वह राजभाषा के मिशनरी काम में सफल हो सकता है।

प्रबंधकीय भूमिका में राजभाषा अधिकारी एक ऐसा नाविक है, जिसे अपनी नाव को उस पार ले जाने के लिए दिशा का ज्ञान तो है, पर जिसकी बाजुओं में इतना जोर नहीं है कि वह बड़ी नाव को स्वयं खे सके। ऐसी परिस्थिति में उत्तम नाविक वह है जो अपने दायित्व और चिन्ता को नाव में बैठे सभी छोटे-बड़े व्यक्तियों में इस तरह न्यस्त कर दे कि सभी लोग अपने को नाविक मानकर निर्दिष्ट दिशा में पतवार चलाने लगें। जिन कार्यालयों में प्रशासन, कार्मिक वित्त आदि विभाग अपने राजभाषा-सम्बंधी कार्यों को राजभाषा अधिकारी की सहायता की आवश्यकता अनुभव किये बिना सम्पन्न करते हैं, वहां के राजभाषा अधिकारी निस्संदेह उत्तम कोटि के नाविक हैं। सबसे बड़ा नायक वही है, जो सबको आगे करके स्वयं पीछे-पीछे चले। मध्यम श्रेणी का नाविक वह है जो अपने दायित्व का निर्वाह स्वयं इसलिए करता है, ताकि नाव को पार ले जाने का श्रेय केवल, उसी को मिले, उसके सहयात्रियों को नहीं। अपनी अनावश्यक सक्रियता द्वारा वह सभी को यह जताना चाहता है कि नाव का खेवनहार वही है

शेष पृष्ठ 16 पर

विधि-साहित्य का अनुवाद

– डा॰ बलवीर सिंह भटनागर*

विधि का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। कानून बनाने से ले कर वे समस्त कार्य इसके क्षेत्र में आ जाते हैं, जिनसे सीधा सम्बन्ध नहीं होता। विधि का तात्पर्य कानून सम्मत ऐसी कार्यप्रणाली से है जिसका अनुपालन चाहे वह नागरिक हो अथवा सरकारी मुलाजिम या न्यायालय का कोई न्यायाधीश सभी को सम्यक रुप से करना पड़ता है। जिस बात को लेकर न्यायालय में मुकदमा दायर किया जा सकता है तथा पक्ष और विपक्ष में लिखित अथवा मौखिक किसी भी प्रकार के साक्ष्य हो सकते हैं, वह समस्त सामग्री विधि का क्षेत्र हो सकती है। मनुष्य जीवन के अंतरंग से अंतरंग तथा सूक्ष्म से सूक्ष्म विषय विधि में विचारणीय होते हैं।

सबसे पहले तो विधि स्वयं प्रत्यक्ष रूप से इस क्षेत्र में आ जाती है। विधि की भाषा, उसका लिखित रूप, उसका निर्वचन, पूर्व के निर्णय, न्यायाधिकारी द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया, बयान, साक्ष्य आदि सभी विधि के क्षेत्र से प्रत्यक्ष जुड़े हुए विषय हैं। इन सब में सबसे महत्वपूर्ण है विधि का लिखित रूप। क्योंकि न्याय प्रक्रिया का प्रथम आधार उसका लिखित विधान ही है। विधि का निर्माण संविधान के अन्तर्गत निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार होता है। अतः संविधान, अधिनियम, नियम, विनियम, स्थायी आदेश, सेवा तथा सेवा से सम्बन्धित मामले, अनुबंध एवं करार, आदि से सम्बन्धित तमाम कागज-पत्र विधि साहित्य के अन्तर्गत गिने जा सकते हैं।

परन्तु उक्त सभी कागज-पत्रों का सम्बन्ध विधि से प्रत्यक्षतः उतना नहीं है, जितना न्यायालय तथा न्यायालयों को चलाने वाले कानून तथा कानूनी प्रक्रिया से है। सामान्य कार्यालयों के अधिकांश कागजात गैर-संवैधानिक किस्म के दस्तावेजों में गिने जाते हैं। परन्तु जब इनके निर्वचन अथवा विवाद को लेकर न्यायालय में कोई वाद दायर कर दिया जाता है तो ये विधिक सीमाओं में आ जाते हैं।

सीधे विधि से सम्बन्धित कागजात अर्थात् सांविधिक तथा विधि के नियम-उपनियमों के अनुवाद का उत्तरदायित्व सीधा केन्द्र सरकार के विधि, न्याय एवं कम्पनी कार्य मंत्रालय के राजभाषा खंड का है। शेष सरकारी दस्तावेजों के अनुवाद के लिए केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो से सेवाएं ली जा सकती हैं। परन्तु दैनंदिन कार्य यथा पत्र, प्रपत्र, परिपत्र, तथा अन्य कार्यालय नियमों आदि के अनुवाद की व्यवस्था तत्सम्बन्धी कार्यालयों को करनी पड़ती है। इसके लिए भी आजकल कार्यालयों में अनुवादक तथा हिन्दी अधिकारियों के पद सृजित किये गये हैं। इस प्रकार विधि साहित्य का अनुवाद कार्य एक विशिष्ट कार्य हो चुका है।

विधि-साहित्य : संवैधानिक स्थिति

भारत के संविधान-निर्माताओं ने भारत को एक संप्रभुता सम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य के रूप में देखना चाहा था। वे चाहते थे कि राष्ट्र का समस्त कार्य जनता की अपनी भाषा अर्थात् राजभाषा हिन्दी में किया जाये। संविधान में यह व्यवस्था की गई है कि प्रत्येक राज्य अपनी भाषा में कार्य करने के लिए निर्णय ले सकते हैं और संघ सरकार का काम-काज एक निश्चित योजना के अनुसार हिन्दी में सम्पादित किया जायेगा।

संविधान के अनुच्छेद 343 में कहा गया है संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। अनुच्छेद 348(1) में यह व्यवस्था की गई है कि जब तक संसद कोई दूसरी व्यवस्था न करे, तब तक उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों की समस्त कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में होंगी तथा संघ और राज्यों के समस्त विधेयक, अधिनियम, अध्यादेश आदि के प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होंगे। आगे खंड (2) में यह भी उपबंध किया गया है कि राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से किसी राज्य का राज्यपाल हिन्दी-भाषा का या उस राज्य में राजकीय प्रयोजन के लिए प्रयुक्त होने वाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग उस राज्य के उच्च न्यायालय की कार्यवाहियों के लिए प्राधिकृत कर सकता है।

राजभाषा (संशोधन) अधिनियम 1967 की धारा 7 द्वारा की गई व्यवस्था के अनुसार किसी राज्य के राज्यपाल राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से उस राज्य के उच्च न्यायालय द्वारा किये गये किसी निर्णय, डिक्री अथवा आदेश के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी अथवा राज्य की राजभाषा के प्रयोग को प्राधिकृत कर सकता है और जहां कहीं ऐसा किया जायेगा, वहां हिन्दी आदि के पाठ के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद भी दिया जायेगा। इस व्यवस्था के अधीन उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, और बिहार के राज्यपालों ने अपने-अपने अधिकारों का प्रयोग करते हुए अपने प्रान्तों में स्थित उच्च न्यायालयों में हिन्दी के प्रयोग के लिए राष्ट्रपति से अनुमति प्राप्त कर ली है।

संविधान तथा राजभाषा अधिनियम के अंतर्गत इस प्रकार विधान पालिका और न्यायपालिका के स्तर पर अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी अथवा राज्य की राजभाषा के अबाध प्रयोग का रास्ता खोल दिया गया है। परन्तु हिन्दी को एक विकल्प के रूप में रखा गया है। यदि कोई चाहे तो फैसला हिन्दी में भी दिया जा सकता है, परन्तु उसका अंग्रेजी अनुवाद भी देना आवश्यक है। ऐसी स्थिति में दो भाषाओं में फैसला तैयार करना कौन चाहेगा?

यह संतोष की बात है कि सभी संघ कानूनों/अधिनियमों का हिन्दी अनुवाद किया जा चुका है, परन्तु पूरे विधि-साहित्य का अनुवाद तो कभी हो भी नहीं पायेगा। पुराने जितने फैसले हैं जो अब नये फैसलों के लिए विधि बन चुके हैं तथा अधिकांश फैसले इन्हीं पुराने फैसलों को ध्यान में रख कर किये जाते हैं। ऐसी स्थिति में राष्ट्रीय एकता और अखंडता को बनाये रखने के लिए अंग्रेजी को एक लम्बे समय तक उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों की भाषा के रूप में बनाये रखने की आवश्यकता बनी रहेगी। क्योंकि जब तक सारे भारत वर्ष में संघ तथा राज्य स्तर पर

*राजभाषा अधिकारी, ज़िंक स्मेल्टर, विशाखापट्टनम-530015

विधि के क्षेत्र में हिन्दी को स्वीकार कर नहीं लिया जाता तब तक यह स्थिति बनाये रखने के अलावा कोई अन्य चारा नहीं है।

विधि के क्षेत्र में जहां तक अध्ययन और अध्यापन का प्रश्न है उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान और बिहार में स्थित विश्वविद्यालयों ने हिन्दी को अपनाया है। इन राज्यों में विधि का साहित्य भी तैयार हो रहा है। कभी छुट-पुट फैसले हिन्दी में देने के समाचार भी मिलते हैं। परन्तु विधि के मामले में अभी हम संक्रमण के दौर से ही गुजर रहे हैं। अतः ऐसे अनुवाद पर हमारी निर्भरता और भी बढ़ जाती है। आजकल विधि मंत्रालय से विधि से सम्बन्धित पत्रिका का प्रकाशन भी किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त अन्य निजी प्रयास भी चल रहे हैं। इन पत्रिकाओं में पुराने फैसलों के हिन्दी संक्षेप अथवा पूर्व फैसलों का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया जाता है। इन फैसलों के अनुवाद के लिए भी विधि क्षेत्र में अनुवादकार्य के नये क्षेत्र खुलते जा रहे हैं।

विधि-साहित्य : अनुवाद-कला

विधि अनुवाद का कार्य अपने-आप में एक अत्यन्त जटिल एवं कठिन कार्य है। अनुवाद में यदि स्रोत भाषा को लक्ष्य भाषा मानकार अनुवाद किया जाता है तो अनुवाद कार्य की जटिलता बढ़ जाती है। साथ ही भाषा की स्वाभाविकता में कमी आ जाती है। वाक्य रचना अटपटी बन कर रह जाती है। यदि भाषा की जगह केवल भाव लिये जाते हैं तो अनुवाद एक सरल प्रक्रिया अवश्य बन जाता है परन्तु उसका विधि मूल्य कम हो जाता है। इसके अतिरिक्त अनुवादक को स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा का अच्छा ज्ञान तथा विधि का ज्ञान चाहे वह शैक्षणिक योग्यता के रूप में हो अथवा अनुभव जन्य, होना आवश्यक हो जाता है। विधि साहित्य एक ऐसी कला है जो अभ्यास से सीखी जा सकती है। परन्तु इस क्षेत्र में परिश्रम की अपेक्षा कुछ अधिक ही है।

विधि-साहित्य का अनुवाद : व्याकरण का ज्ञान

विधि का अनुवाद कार्य करने के लिए विधि के ज्ञान के साथ-साथ अंग्रेजी तथा हिन्दी दोनों ही भाषाओं का सम्यक ज्ञान अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। स्रोत भाषा के वाक्य विन्यास को लक्ष्य भाषा में यथावत लाने का प्रयास एक द्रविड़ प्राणायाम है। परन्तु विधि में शब्द, शब्दों का क्रम भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। अंग्रेजी वाक्य रचना जहां विषय या उद्देश्य क्रिया तथा विधेय या पूरक के क्रम का अनुसरण करती है वहीं हिन्दी उद्देश्य विधेय तथा क्रिया का अनुसरण करता है। वाक्यों में उपवाक्यों को समझ कर, अनुवाद करना पड़ता है। क्रिया संयुक्त तथा एकल हो सकती है। अनुबंध या उपबंध (adjunct) के लिए हिन्दी में क्रिया से पूर्व वाक्य के प्रारंभ में अथवा कर्म के प्रश्चात् लिखने की परम्परा है। इसका ज्ञान न होने पर वाक्य रचना अटपटी हो जाने का खतरा है।

विधि साहित्य का अनुवाद : शब्दों का महत्व, चयन, पुनरूक्ति, प्रणाली

अंग्रेजी शासन प्रणाली विधि के एक विशेष प्रकार के निर्वचन पर आधारित थी। अंग्रेजी शासन के दौरान भारत को वर्तमान राजनीतिक एकता में आबद्ध होने का सुअवसर प्राप्त हुआ। पहली बार भारत को एक विधि प्रणाली की आवश्यकता महसूस हुई। इसके लिए उसके पास भारतीय कानूनों के ब्रितानी प्रतिरूप (माडल) उपलब्ध थे।

भाषा उपयोग की टकसाल में ढल कर परवान चढ़ती है। शासन और व्यवस्था का जो प्रतिरूप ब्रितानी शासन काल में अपनाया गया वह आज भी बरकरार है। भारतीय शासन-व्यवस्था में हिन्दी प्रयोग न बढ़ पाने का कारण भी यही है कि यह व्यवस्था ब्रिटेन में पैदा-हुई व पली-बढ़ी है। अतः अंग्रेजी इसके लिए स्वाभाविक सी भाषा बन गई है। दीर्घकालीन प्रयोग के फलस्वरूप अंग्रेजी की संकल्पनाएं लगभग सुस्थापित और सुनिर्वचनीय हैं। जहां तक हिन्दी में इन संकल्पनाओं को अनुवाद के माध्यम से उतारने के प्रयास का प्रश्न है, यह शुरू में अस्वाभाविक सा लगता है। हिन्दी भाषी प्रांतों में अभी निचली अदालतों का काम-काज हिन्दी में हो रहा है, वरन भारत की अधिकांश अदालतों का काम-काज अंग्रेजी में ही करने की परिपाटी और सुविधा है। कुछ विश्वविद्यालयों में कानून की पढ़ाई भी अब हिन्दी में होने लगी है। अभी हाल ही बम्बई विश्वविद्यालय ने एक छात्र की उत्तर-पुस्तिका का मूल्यांकन करने से यह कह कर इन्कार कर दिया क्योंकि उसने उत्तर हिन्दी में दिये थे। ऐसी स्थिति में हिन्दी माध्यम से कानून की पढ़ाई करना कौन छात्र चाहेगा। जब तक कानून की पढ़ाई हिन्दी माध्यम से नहीं होगी, फैसले हिन्दी में नहीं दिये जायेंगे तब तक हिन्दी विधि की शब्दावली का विकास भी कैसे होगा।

विधि के क्षेत्र में शब्दों का ही महत्व है। विधि में ऐसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है जो अतिव्याप्ति और अल्पव्याप्ति के दोषों से मुक्त होते हैं। विधि में वाक्य विन्यास और प्रारूपण पूर्णतया अलग प्रकार का होता है। शब्द बोल-चाल के नहीं होते हैं। साहित्य में एक ही शब्द का अथवा समानार्थी भिन्न शब्दों का प्रयोग बार-बार नहीं किया जाता परन्तु कानून की भाषा में एक ही शब्द के अनेक पर्यायों का एक साथ प्रयोग कर उस बात को केन्द्रित और सुपरिभाषित किया जाता है। कानून की यह एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। विधि का अनुवाद करते समय अनुवादक को शब्द चयन की उतनी स्वतंत्रता नहीं होती, अस्वाभाविक और अप्रचलित शब्दों के प्रयोग से वह नहीं बच सकता। इसके लिए विधायी आयोग द्वारा जो शब्दावली तैयार की गई है, केवल उसे प्रयोग किया जाना चाहिए। यदि अनुवादक अत्यन्त कुशल तथा इस क्षेत्र का अच्छा जानकार है तो वह नियत शब्दों को लेकर भी स्वाभाविकता उत्पन्न कर सकता है। एक बार अनुवाद करने के बाद उसे बार-बार पढ़ कर देखना होगा ताकि वाक्य-रचना और शब्द-रचना के दोषों को दूर किया जा सके तथा प्रयुक्त शब्दों का चतुर से चतुर अधिवक्ता भी अन्यथा अर्थ नहीं निकाल सके।

अन्य क्षेत्रों की तुलना में विधि क्षेत्र में शब्द चयन का महत्व इसलिए अधिक है कि इस क्षेत्र के पारिभाषिक शब्दों का चयन न्यायालय स्वयं तय करता है। विधि से अधिकारों का सृजन और विनियमन होता है। उसके प्रभाव आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक सभी क्षेत्रों पर समान रूप से पड़ते हैं। अतएव शब्दों या पदों का प्रयोग और अर्थान्वयन दोनों ही प्रारूपण और निर्वचन के सिद्धान्तों से शासित होते हैं। दूसरा इसकी शब्दावली निर्माण के कार्य में पहले से उपलब्ध साहित्य का अनुवाद कार्य करने के उपरान्त उसमें से शब्दों को चयन किया गया है। विधि क्षेत्र में कुछ शब्दों की परिभाषा अधिनियम में ही दे दी जाती है, तथा उनके अर्थ उस परिभाषा से सीमित कर दिये जाते हैं। अधिनियमों, नियमों तथा विनियमों में प्रयुक्त शब्द अधिनियम का ही अंग होते हैं, अतः विधि के क्षेत्र में उन्हीं शब्दों का प्रयोग विधितः बाध्यकारी हो जाता है।

संकल्पना से सम्बन्धित सभी शब्दों का अनुवाद विधि शब्दावली में दिये गये पर्यायों के एकदम अनुरूप होना चाहिए। संज्ञा शब्दों का अनुवाद करने की आवश्यकता नहीं होती है। दैनंदिन जीवन के बहुत से शब्द जैसे पेंसिल, निब, कार, बटन, पेंट, कोट, टिकट, रेल, प्लेटफार्म आदि शब्दों को देवनागरी में लिख देना काफी होता है। इनका अनुवाद करना न तो आवश्यक है और न वांछनीय। परन्तु अन्य भाषा के संकल्पनात्मक शब्दों का अनुवाद आवश्यक हो जाता है। उदाहरणार्थ- right, duty, property, transfer, law, contract, tort आदि के लिए क्रमशः अधिकार, कर्तव्य, सम्पत्ति, अंतरण, विधि, संविदा, और अपकृत्य पर्याय निर्धारित किये गये हैं। अंग्रेजी के कुछ लेटिन ग्रीक अभिव्यक्तियों के लिए पर्याय निर्धारित कर दिये गये हैं, जैसे ex post facto के लिए कार्योत्तर या भूतलक्षी प्रभाव, de novo के लिए नए सिरे से, mens trea के लिए आपराधिक मनः स्थिति,persona grata के लिए ग्राह्य व्यक्ति आदि।

"एपियर" के लिए विधि शब्दावली में "उप संजात होना" पर्याय के रूप में दिया गया है। प्रश्न उठता है कि क्या इसे हम "उपस्थित होना" से स्थानापित नहीं कर सकते? परन्तु इसके लिए इसके अन्य सदृश्य शब्दों के प्रयोग और अर्थ को भी ध्यान में रखना होगा। सिविल प्रक्रिया संहिता में अंग्रेजी के तीन शब्द आते हैं-"प्रजेंट", "अटेंड, और "एपीयर"। इन तीनों के भावों में अन्तर है। कोई भी दर्शक न्यायालय में प्रजेंट हो सकता है, परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि उसने न्यायालय "अटेंड" किया और कोई वकील न्यायलय "अटेंड" करके कह सकता है, मैं इस मुकदमें में "एपियर" नहीं होता हूं। ऐसी अवस्था में यह आवश्यक हो जाता है कि इन अंग्रेजी शब्दों के लिए अलग-अलग पर्याय रखे जायें। अनुवादक को संदर्भ के अनुसार इन शब्दों के पर्यायों का बड़ी ही सतर्कता से चयन करना होता है। उदाहरण के लिए appear at an interview के लिए साक्षात्कार में हाजिर होना, appear by pleader के लिए प्लीडर के द्वारा हाजिर होना, appear in public के लिए लोगों के सम्मुख आना अभिव्यक्तियों का प्रयोग किया जा सकता है।

विधि साहित्य के अनुवाद के एक उदाहरण का विश्लेषण करने का प्रयास नीचे किया जा रहा है।

> The President may, after consideration of the report, referred to in sub-section (3) and the views, if any expressed by the State Government thereon, issue direction in accordance with whole or any part of that report, provided that the directions so issued shall not be inconsistent with provisions of section 3.

राष्ट्रपति उपधारा (3) में विनिर्दिष्ट प्रतिवेदन पर और उस पर राज्य सरकारों ने यदि कोई मत अभिव्यक्त किए हुए हों तो उन पर विचार करने के पश्चात् उस समस्त प्रतिवेदन के या उसके भाग के अनुसार निदेश निकाल सकेगा, परन्तु इस प्रकार के निकले गए निदेश धारा 3 के उपबंधों से असंगत नहीं होगें।

यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि refer का पर्याय भी विनिर्दिष्ट करना दिया गया है और specify का पर्याय भी विनिर्दिष्ट करना होती है। अतः यह अनुवादक को भ्रम नहीं होना चाहिए। Provision का पर्याय उपबंध करना दिया गया है, इसकी जगह प्रावधान करना भी हो सकता है परन्तु हमें उपबंध करना पर्याय का ही प्रयोग करना चाहिए। प्रावधान सामान्य पारिभाषिक शब्द है जब कि उपबंध विधि का पारिभाषिक शब्द।

एक अन्य उदाहरण द्रष्टव्य है:

> AND WHEREAS the said A.B..... has, in pursuance of Rule 270 of the General Financial Rules, 1963 delivered to and deposited with..... the above mentioned..... sum of ..... Rupees ..... (Rupees .....) in cash as security for the due and faithful performance by the said A.B..... of the duties of his said office and of any other office requiring security to which he may be appointed at any time and of other duties which may be required of him while holding any such office as aforesaid and for the purpose of securing and indemnifying the Government against all loss, injury, damage, costs or expenses which the Government may, in any way, suffer sustain or pay, by reason of the Misconduct, neglect, oversight, or any other act or omission of the said A.B..... or of any person or persons acting under him or for whom he may be responsible.

उक्त.....ने साधारण वित्तीय नियम 1963 के नियम 270 के अनुसरण में उक्त नकद.....रू०(.....रू०) का उक्त..... द्वारा अपने उक्त पद के और किसी ऐसे अन्य पद के जिसके लिए प्रतिभूति अपेक्षित है और जिस पर उसे किसी भी समय नियुक्त किया जाए, कर्त्तयों के और अन्य कर्त्तव्यों के, जिनकी अपेक्षा पूर्वोक्त किसी पद पर रहने के दौरान उससे की जाए, सम्यक रूप से और निष्ठापूर्वक पालन करने के लिए और ऐसी सब हानि, क्षति, नुकसान, खर्चे या व्ययों के प्रति, जो उक्त.....के या उसके अधीन कार्य करने वाले किसी व्यक्ति या किन्हीं व्यक्तियों के या उन व्यक्तियों के जिनके लिए वह उत्तरदायी है अवचार, उपेक्षा, असावधानी या किसी अन्य कार्य या लोग के कारण किसी रूप में सरकार को किसी प्रकार उठाने पड़े, सरकार को प्रतिभूत और क्षतिपूरित करने के प्रयोजन के लिए प्रतिभूति के रूप में ..... को परिदान कर दिए हैं और उसके पास जमा कर दिए हैं।

यहां for due a faithfully; all loss, injury, damage, costs of expenses; suffer, sustain or pay, misconduct, neglect, oversight or any other act or omission का अनुवाद क्रमशः सम्यक रूप से और निष्ठापूर्वक; ऐसी सब हानि, क्षति, नुकसान खर्चे या व्यय, उठाने पड़े या संदत्त करने पड़े, अवचार, उपेक्षा,

असावधानी या किसी अन्य कार्य का लोप पर्यायों की आवृत्तियां द्रष्टव्य है। अंग्रेजी भाषा के सभी पदों का अनुवाद करना आवश्यक नहीं है। यहां AND WHEREAS के अनुवाद की आवश्यकता नहीं समझी गई। पूरे अनुच्छेद का एक ही वाक्य है जो हिन्दी में जस का तस एक वाक्य में आ गया है।

परस्पर सम्बन्धित भिन्न संकल्पनाओं के लिएं ऐसी संज्ञाएं/धाराएं रखी गई हैं, जो सदृश होते हुए भी उपसर्ग एवं प्रत्ययों के प्रयोग द्वारा सुभिन्न कर दी गई है। जैसे-

(1) Act = अधिनियम
(2) rule = नियम
(3) Sub-rule = उप-नियम
(4) statute (of a University) = परिनियम
(5) regulatins = विनियम

तथा-

(1) adjourn = स्थगन
(2) defer = आस्थगन
(3) abeyance = परस्थगन
(4) postpone = मुल्तवी करना या रखना

अकेले शब्द का विचार करके पर्याय स्थिर नहीं किये गये हैं। संस्पर्शी शब्दों पर एक साथ विचार करने के उपरान्त पर्याय सुस्थिर किये गये हैं अंग्रेजी के प्रत्येक पारिभाषिक शब्द के लिए हिन्दी में भी एक शब्द स्थिर किया गया है। अंग्रेजी के शब्दों में जहां अर्थ की छटा भिन्न है, वहां हिंदी में भी अभिव्यक्ति की उस छटा को प्रकट करने के लिए अलग-अलग शब्द स्थिर किये गये हैं। जैसे-

(1) right = अधिकार
(2) prerogative = परमाधिकार
(3) previledge = विशेषाधिकार

अंग्रेजी में कुछ शब्द ऐसे होते हैं जो एकाधिक पारिभाषिक अर्थ दर्शानेवाले होते हैं, ऐसे शब्दों के लिए एकाधिक समानार्थी शब्द उपलब्ध हैं, जिनका प्रसंगानुकूल चयन करने की अपेक्षा की जाती है। यथा—

(1) interest = हित, ब्याज
(2) constitution = संविधान, गठन
(3) charge = भार, आरोप, भारबोधन, भार साधन
(4) execution = निष्पादन, फांसी
(5) invalidity = अविधि मान्य, अशक्तता
(6) return = विवरणी, निर्वाचित होना, लौटना, लौटाना

हिन्दी में मौलिक विधि बनाने की कोई परम्परा नहीं है। चूंकि विधि की मूल भाषा अंग्रेजी ही है। अतः हिन्दी में विधि को अनुवाद के माध्यम से ही प्रस्तुत किया जा सकता है। अनुवाद के कारण अभिव्यंजनाशैली पर अंग्रेजी का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। यह बात नहीं है कि हिन्दी में मूल विधि का प्रारूपण हो ही नहीं सकता। पर हममें शायद उतना आत्मविश्वास नहीं है कि हिन्दी में विधि प्रारूपण तैयार कर सकें। परम्परा को तोड़ पाना खास कर विधि के क्षेत्र में जरा कठिन है। एक बार यदि इस साहस का यत्किंचित प्रदर्शन हो सकता तो विधि की अनुवादाश्रितता समूल नष्ट हो सकती। परन्तु अभी तो हमारे तमाम राज्यों ने हिन्दी को राज्य भाषा के रूप में स्वीकार नहीं किया है। जब तक ऐसा नहीं हो जाता हिन्दी सही अर्थों में संघ की राज्य भाषा भी मुश्किल से कही जा सकती है।

फिलहाल तो हमारे पास अनुवाद के अलावा कोई दूसरा विकल्प नहीं है। अतः जो भी साधन-सुविधाएं हमारे पास उपलब्ध है उनके ठीक-ठीक प्रयोग के बारे में सोचना अधिक अच्छा होगा।

विधि-साहित्य : अनुवाद की कठिनाई

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है विधि क्षेत्र का सारा कार्य व्यापार शब्दों का लेकर है। अंग्रेजी भाषा और हिन्दी भाषा में कुछ संरचनात्मक भेद है जो अनुवाद में जैसे का तैसा नहीं आ सकता। अंग्रेजी में preposition का प्रयोग बड़ा रूढ़िगत है तथा नियमों से परे है। इस preposition तथा to infinitive का अनुवाद करने में कठिनाई रहती है। क्योंकि हमारी हिन्दी भाषा की संरचना भिन्न प्रकार की है। prepositions हिन्दी के कारक चिह्नों से मिलते जुलते हैं परन्तु उनका पूर्ण पर्याय नहीं। अंग्रेजी में prepositions अन्य शब्दों के साथ मिल कर pharase बनाते हैं जिससे उनके मूल अर्थ में परिवर्तन हो जाता है। यहां एक उदाहरण दिया जा रहा है। जिसमें for एवं to पर न्यायालय में विवाद हुआ और अंत में इस पर निर्णय भी हुआ। परन्तु अनुवाद करते समय इनके समानार्थी शब्द हिन्दी में ढूंढने में कुछ कठिनाई हो सकती है। अतः ऐसे में अनुवादकर्ता को मूल अंग्रेजी के शब्दों को उद्धरण चिह्नों में रखना पड़ेगा तथा मूल रूप में ही उद्धृत करना पड़ेगा।

Before we proceed further we may mention here that a distinction is to be drawn between a 'contract for service' and 'contract of service.' "In the one case the master can order or require what is to be done while in the other case he can not only order or require what is to be done but how itself it shall be done" (Per Hilbery, J. in Collins V. Hertfordshire Country Council, 1947 KB 598 at page 615 quoted in Dharangadhra Chemical Works Ltd. V. State of Saurashtra & Ors, 1957 S.C. 264 at p. 267)

In oxford Compadium to Law (page 1134) contract for services has been defined as follows:

"In Roman Law-looatio operis faciendi, the contract whereby one party undertakes to render services, e.g. professional or technical services, to or for another in the performance of which he is not subject to detailed direction and control but exercises professional or technical skill and uses his own knowledge and discretion. There are two Major groups of such services, professional services of lawyers, accountants, surgeons and the like and technical services of builders, garages and Many More."

In Strounds Judical Dictionary (Page 540, 5th Edn.) it is mentioned:

"A contract to render services is not the same thing as a 'contract of service'; semble, the latter implies some relationship of Master and Servant and involves an obligation to obey orders in the work to be

performed and as to its Mode and Manner of performance."

अब जब कि केवल शब्दों को लेकर विधि में इतना विचार किया जा रहा है। फिर जहां विषय किसी भाव का नहीं बल्कि भाषा के सूक्ष्म से सूक्ष्म विषयों पर आ जाता है तो अनुवादक को अंग्रेजी के पदबंध (Pharase) को अनुवाद के साथ कोष्ठक में दे देना ठीक रहेगा। यदि कोई लेटिन और ग्रीक पदबंध है और शब्दकोश में उसका पर्याय नहीं दिया हुआ है तो उसे देवनागरी में लिख देना काफी होगा। उक्त उद्धरण का अनुवाद यहां नीचे दिया जा रहा है:

इससे पहले कि हम आगे विचार करें, हम यहां यह उल्लेख करना चाहेंगे कि **सेवाओं के वास्ते संविदा तथा सेवा की संविदा** के बीच विभेद करना होगा। एक मामले में स्वामी जो कुछ किया जाना है इस बारे में आदेश दे सकता है अथवा अपेक्षा कर सकता है, जब कि दूसरे मामले में वह जो कुछ किया जाना है इसके बारे में न केवल आदेश दे सकता है या अपेक्षा कर सकता है वरन् यह कैसे किया जायेगा इसके बारे में निर्देश दे सकता है। (पर हिलबरी, जे. कालिन्स बनाम हर्टफोर्डशायर कंट्री काउंसिल, 1947 के०बी०548 पृष्ठ 615 तथा धरंगधार केमिकल वर्क्स लि० बनाम स्टेट आॅफ सौराष्ट्र और अन्य, 1957 उच्चतम न्यायालय 264, पृ. 267 पर उद्धृत किया गया)

आक्सफोर्ड कम्पेडियम टू लॉ (पृष्ठ 1134) में सेवाओं के वास्ते संविदा को इस प्रकार से परिभाषित किया गया है।

"रोमन विधि में लोकेशिओ ओपरिस फेसिंडी (location operis faciendi) संविदा जिसके द्वारा एक पक्ष सेवाओं यथा व्यावसायिक अथवा तकनीकी सेवाओं का सम्पादन दूसरों के लिए या को करता है जिसके सम्पादन में उसे विस्तृत निर्देश एवं आदेश प्राप्त नहीं होते वरन् व्यावसायिक अथवा तकनीकी कुशलता का निष्पादन करता है तथा अपना स्वयं के ज्ञान और स्वविवेक का इस्तेमाल करता है। ऐसी सेवाओं-वकीलों, लेखाकारों, सर्जनों तथा अन्य समकक्ष व्यावसायिक सेवाओं तथा भवन निर्माताओं गेरेज तथा अन्य बहुत से ऐसी सेवाओं के दो वृदह् समूह होते हैं। स्ट्रांड जूडिशियल डिक्शनरी (पृ० 540, पंचम संस्करण) में यह उल्लिखित है। सेवा संपादन हेतु संविदा और "सेवा की संविदा" का तात्पर्य एक ही नहीं है। कुल मिलाकर "सेवा की संविदा" का आशय स्वामी तथा सेवक के कतिपय सम्बन्धों से है तथा इसमें किये जाने वाले कार्य तथा इसके निष्पादन की विधि तथा तरीका इसमें सन्निहित है।

विधि दस्तावेजों के मानक प्रारूप दो जिल्दों में राजभाषा खंड, भारत सरकार, विधि, न्याय एवं कम्पनी कार्य मंत्रालय, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित करवाये गये हैं। इसी प्रकार शब्दावली का भी प्रकाशन उपलब्ध है। जहां तक हो सके विधिक दस्तावेजों में अनुवादकर्ता को इनका अनुसरण करते हुए अन्य दस्तावेजों को अनुवाद करना चाहिए ताकि एकरूपता बनाये रखी जा सके। इसी प्रकार भारत सरकार ने विभिन्न कानूनों तथा अधिनियमों के पाठ द्विभाषी करवाये हैं जिनकी सहायता अनुवादक ले सकता है।

विधि साहित्य : अनुवाद के कुछ उद्धरण

1. It is hereby enacted as follows.....

   एतद्द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित किया जाता है.....

2. It extends to the whole of India except the Andaman and Nicobar Islands; but the Central Government may, from time to time, by notification in the official Gazette extend it to the Andaman and Nicobar Islands or to any part thereof.

   इसका विस्तार अण्डमान और निकोबार द्वीपों के अतिरिक्त सम्पूर्ण भारत पर है, किन्तु केन्द्रीय सरकार अण्डमान और निकोबार द्वीपों पर या उनके किसी भी भाग पर इसका विस्तार, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, समय-समय पर कर सकती है।

3. In section 36 AA of the principal Act—

   (e) in sub-section (7), for the words "director or chief executive officer", wherever they occur, the words "chairman, director, or chief executive officer" shall be substituted.

   मूल अधिनियम की धारा 36 क क में—

   (ड) उपधारा (7) में जहां कहीं "निदेशक या मुख्य कार्यपालक अधिकारी" शब्द आए हैं। उनके स्थान पर "अध्यक्ष, निदेशक या मुख्य कार्यपालक अधिकारी" शब्द प्रतिस्थापित किए जाएंगे।

4. Any person aggrieved by the decision of the licencing authority refusing to grant a licence or cancelling or suspending a licence may, within such time as may be prescribed, prefer an appeal to the State Government and the decision of the State Government on such appeal shall be final.

   अनुज्ञापन अधिकारी के अनुज्ञप्ति देने से इन्कार या अनुज्ञप्ति रद्द या निलम्बित करने के विनिश्चय से व्यथित कोई व्यक्ति, उतने समय के भीतर जो विहित किया जाए राज्य सरकार को अपील कर सकेगा और ऐसी अपील पर राज्य सरकार का विनिश्चय अंतिम होगा।

5. In disposing of an appeal the appellate authority shall follow such precedure as may be prescribed.

   अपील निपटाने में अपील अधिकारी ऐसी प्रक्रिया का अनुकरण करेगा, जैसी विहित की जाए।

6. "WHEREAS under article 343 of the Constitution, Hindi shall be the official language of the Union, and under article 351 thereof it is the duty of the Union to promote, to spread of the Hindi Language and the develop it, so that it may serve as a medinm of expression for all the elements of the composite culture of India;

   "जबकि संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार संघ की राजभाषा हिन्दी रहेगी और उसके अनुच्छेद 351 के अनुसार हिन्दी भाषा की प्रसारवृद्धि करना और उसका विकास करना, ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके, संघ का कर्तव्य है।

7. Short title, extent and commencement—(i) These

rules may be called the official Languages (Use for official purposes of the Union) Rules 1976.

(2) They shall extend to the whole of India, except the State of Tamil Nadu.

(3) They shall come into force on the date of publication in the Official Gazette

संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारम्भ

(1) इन नियमों का संक्षिप्त नाम राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम 1976 है।

(2) इन नियमों का विस्तार, तमिलनाडु राज्य के सिवाय, सम्पूर्ण भारत पर होगा।

(3) ये, राजपत्र में प्रकाशन की तारीख को प्रवृत होंगे।

8. Provided also that nothing in this sub-section shall be construed as preventing a State which has not adopted Hindi as its Official Language for using Hindi for purposes of communication with the Union or with a State which has adopted Hindi as its offcial language or by agreement with any other state, and in such a case, it shall not be obligatory to use the English language for purposes of communication with that State.

परन्तु यह और भी कि इस उपधारा की किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी ऐसे राज्य को, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संघ के साथ या किसी ऐसे राज्य के साथ जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है, या किसी अन्य राज्य के साथ, उसकी सहमति से पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी को प्रयोग में लाने से निवारित करती है और ऐसे किसी मामले में उस राज्य के साथ पत्रादि के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग बाध्यकर न होगा।

9. Memorandun of agreement made on the .....day..... one thousand nine hundred and..... between .....a company incorporated under the Indian Companies Act, 1913 the Companies Act, 1956 having its registered office at ..... a body corporate incorporated under the same name and style by and under..... (Act No.....of.....) having its office at..... a society registered under the Societies Registeration Act (21 of 1860) having its office at..... (hereinafter called the "Comany / Corporation / Society" which expression shall include its successors and assigns) of the one part AND the President of India (hereinafter called "the President" which expression shall include his successors and assigns) of the other part;

एक पक्षकार के रूप में.....जो भारतीय कम्पनी अधिनियम, 1913 / कम्पनी अधिनियम, 1956 के अधीन निगमित कम्पनी है और जिसका रजिस्ट्रीकृत कार्यालय .....में है / जो.....(.....का अधिनियम सं०.....) द्वारा और इसके अधीन उसी नाम और अभनाम से निगमित निकाय है और जिसका कार्यालय.....में है/जो सोसाइटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम (1860 का 21) के अधीन रजिस्ट्रीकृत सोसाइटी है और जिसका कार्यालय.....में है (जिसे इसमें आगे "कम्पनी/ निगम/ सोसाइटी" कहा गया है और इसके अन्तर्गत उसके उत्तरवर्ती और समनुदेशिती भी हैं) के बीच तारीख.....को किए गए करार का ज्ञापन;

10. The surety hereby covenants with the Government that if the borrower fails to pay the full price of the land and to obtain the Deed of Transfer of the land or complete the construction the said house or to execute the Mortgage deed as in this agreement contained or if the borrower becomes insolvent or ceases to be in Government service for any reason whatsoever or dies, the amount of the loan then due together with the interest accruing thereon shall immediately become due and payable to the Government and recoverable from the surety and the surety hereby authorises Government to recover the same from his monthly pay, leave salary and subsistence allowance bills in instalments as may be decided by the Government and the balance remaining unpaid at the time of his retirement or death preceding retirement from the death-cum-retirement gratuity that may be sanctioned to him.

प्रतिभू सरकार के साथ यह प्रसंविदा करता है कि यदि उधार लेने वाला इस करार के उपबंध के अनुसार भूमि की पूरी कीमत का संदाय करने में और भूमि का अन्तरण-विलेख प्राप्त करने में या उक्त मकान का निर्माण पूरा करने में या बन्धक-विलेख का निष्पादन करने में असफल रहता है या उधार लेने वाला दिवालिया हो जाता है या किसी भी कारण से सरकारी सेवा में नही रहता है या उसकी मृत्यु हो जाती है तो उस देय उधार की रकम और उस पर लगाया गया ब्याज सरकार को तुरन्त शोध्य और संदेय हो जाएगा और वह प्रतिभू से वसूल किया जा सकेगा। प्रतिभू सरकार को इस बात के लिए प्राधिकृत करता है कि वह उसके मासिक वेतन, छुट्टी वेतन और जीवन-निर्वाह भत्ते के बिलों से ऐसी किस्तों में जो सरकार द्वारा विनिश्चत की जाएं उसे वसूल करले तथा उसकी सेवा-निवृत से पूर्व उसकी मृत्यु के समय शेष रकम की, जिसका संदाय न किया गया हो उसके मृत्यु तथा सेवा निवृति उपदान में से जो उसे मंजूर किया जाए वसूल कर ले।

11. Provided further that where the period between the date on which the workman was suspended from duty pending the enquiry or investigation or trial and the date on which an order of suspension was passed under this clause exceeds four days, the workman shall be deemed to have been suspended only for four days or for such shorter period as is specified in the said order of suspension and for remaning period he shall be entitled to the same wages as he would have received if he has not been placed under suspension, after deducting the subsistence allowance paid to him for such period.

और यह भी शर्त होगी कि जांच या तफतीश या परीक्षण का निर्णय होने तक जिस तारीख को कर्मकार ड्यूटी से निलम्बित किया गया था, और जिस तारीख को इस खण्ड के अधीन निलम्बन का आदेश पारित किया गया था, दोनों तारीखों के बीच की अवधि यदि चार दिन से अधिक हो जाती है, तो उस कर्मकार के संबंध में यह माना चाएगा कि उसे केवल चार दिन के लिए या निलम्बन के उक्त आदेश में विनिर्दिष्ट अल्प अवधि के लिए निलम्बित किया गया है और शेष अवधि के लिये वह उसी मजदूरी का हकदार होगा जो उस अवधि के लिए दिये गये निर्वाह भत्ते की कटौती करने के बाद तब प्राप्त हुई होती जब कि वह निलम्बित न हुआ होता।

□

पृष्ठ 5 का शेषांश

8. प्रयोजनमूलक हिन्दी, डा॰ विनोद गोदरे, पृ॰ 9 (अध्याय-1)
9. प्रयोजनमूलक हिन्दी—डा॰ विनोद गोदरे, पृ॰ 10
10. प्रयोजनमूलक हिन्दी— 'प्रशिक्षण' के संदर्भ में'—राजभाषा भारती—अंक—अप्रैल-जून, 79
11. प्रयोजनमूलक हिन्दी और उसमें अन्तर्निहित अनुवाद की प्रक्रिया राजभाषा भारती, अंक—अक्तूबर—दिसम्बर 1984
12. व्यावसायिक हिन्दी—पृ: 7-6

□

पृष्ठ 9 का शेषांश

और यदि वह न हो तो नाव डूब जाए। इस श्रेणी के राजभाषा अधिकारी अपने कार्यालय में राजभाषा के कार्यों के एकमात्र पर्याय बन बैठते हैं। परिणामतः जिनसे काम लेना चाहिए, वे निष्क्रिय दर्शक बने रहते हैं और जूता सिलाई से लेकर चंडीपाठ तक राजभाषा के सारे कार्य अकेले राजभाषा अधिकारी करता दिखाई देता है। प्रबंधकीय क्षमता काम लेने में देखी जाती है, काम करने में नहीं। विभिन्न कार्यालयों के राजभाषा समारोहों में "कोई सहयोग नहीं देता लगता है, मेरे बाप का श्राद्ध है"। इस तरह के आक्रोशयुक्त वाक्यों से दूसरों को कोसते हुए और राजभाषा की प्रगति का सारा श्रेय अपने सिर थोपते हुए राजभाषा अधिकारी बहुतायत में मिलते हैं। अधम श्रेणी के वे नाविक हैं जो नाव को हवा के रुख और बैठने वालों के भाग्य पर छोड़कर स्वयं गांजा पीकर सो जाते हैं। अकुशलता और अकर्मण्यता के कारण परम निश्चिंत से दिखने वाले ऐसे नाविक संकट के क्षणों में निर्भर योग्य नहीं होते और नाव के साथ-साथ अपने समुदाय का नाम भी डुबो देते हैं। दुर्भाग्यवश, इस कोटि के राजभाषा अधिकारी भी काफी संख्या में हैं, जो केवल सरकारी सुविधा और मलाईदार वेतन पाने के लिए नौकरी करते हैं, जिन्हें न तो राजभाषा से कोई लेना-देना है, न कार्यालय के हितों से। जोंक की तरह कुर्सी से चिपके इन राजभाषा अधिकारियों से ही पूरे समुदाय की छवि धूमिल होती है। एक योग्य प्रबंधक बनने के लिए हर राजभाषा अधिकारी को आत्मनिरीक्षण करना होगा और अधम से मध्यम तथा मध्यम से उत्तम कोटि का नाविक बनने के लिए भीतरी मन से प्रयत्न करना होगा।

भारत की अर्थव्यवस्था को सुधारने के लिए इन दिनों सरकार की ओर से जो आर्थिक उदारीकरण और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के अधिकतम समावेश की नीति अपनायी गयी है, उसमें राष्ट्रीयकृत बैंकों और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के कार्य-निष्पादन का मूल्यांकन उनके द्वारा किये गये समाज-कल्याण के कार्यों से नहीं, बल्कि उनकी लाभप्रदता से किया जा रहा है। जिन सरकारी उपक्रमों की स्थिति लाभप्रद नहीं हैं, उनके बंद कर दिये जाने या निजी क्षेत्र में धकेल दिये जाने की आशंका चारों दिशाओं में व्याप्त है। इसके बावजूद राजभाषा की प्रगति में कोई अड़चन नहीं आनी चाहिए, क्योंकि हिन्दी आज मात्र संघ या सात प्रदेशों की राजभाषा ही नहीं, आम आदमी से जुड़ने की राष्ट्रीय माध्यम-भाषा भी है। जब ब्रिटिश शासन काल में भी प्रशासकों को आम जनता से जुड़ने के लिए हिन्दी का प्रशिक्षण लेना होता था, तब कोई कारण नहीं है कि सार्वजनिक उपक्रम या बहुराष्ट्रीय कम्पनियां हिन्दी की उपेक्षा करके अपने कार्य का विस्तार कर सकें या संतोषजनक ग्राहक सेवा दे सकें। इसलिए, आज की "पछवा हवा" में न तो राजभाषा हिन्दी का महत्व कम होता है, न उसके प्रचार-प्रसार में अपनी पूरी प्रशासकीय क्षमता और रचनात्मक ऊर्जा के साथ लगे राजभाषा अधिकारियों का। कुशल प्रशासक जिस क्षेत्र में रहेगा, अपने व्यक्तित्व की छाप अवश्य छोड़ेगा। □

केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो : एक रूपरेखा

– कैलाशनाथ गुप्ता*

मूलतः केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की स्थापना एक भ्रष्टाचार निवारण एजेंसी के रूप में की गई थी। समय के साथ-साथ इसकी भूमिका में अत्यधिक बदलाव आया है। यद्यपि सरकार और केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के कर्मचारियों से संबंधित अपराधों की जांच के अपने मूल स्वरूप को इसने बनाए रखा है तथापि यह ब्यूरो आर्थिक तथा वित्तीय कानूनों के संवेदनीय और जटिल प्रकृति के विशिष्ट अपराधों, आतंकवादी और नशीले पदार्थों से संबंधित अपराधों के अलावा उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों द्वारा सौंपे गए मामलों की भी जांच करता है। इसके अधिकतर क्षेत्र में विशेष रूप से निम्नलिखित किस्म के मामले आते हैः—

(1) केन्द्रीय सरकार के नियंत्रण में आने वाले सरकारी कर्मचारियों के घूस लेने, भ्रष्टाचार एवं दुराचार से संबंधित मामले।

(2) केन्द्रीय सरकार अथवा केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित और वित्तपोषित किसी भी सार्वजनिक क्षेत्र, परियोजना अथवा उपक्रम या वैधानिक निगम से संबंधित मामले।

(3) राज्य सरकारों के अनुरोध पर जांच के लिए भ्रष्टाचार आदि के ऐसे मामलों की भी जांच करता है जिनमें राज्य सरकार के वरिष्ठ अधिकारी तथा अन्य महत्वपूर्ण व्यक्ति संलिप्त हों।

(4) अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर व्याप्त अपराधों सहित आर्थिक अपराध के मामले। अनिवार्य वस्तुओं, सीमा शुल्क, केन्द्रीय उत्पाद शुल्क, आयकर, विदेशी मुद्रा विनियमन तथा आयात एवं निर्यात अधिनियम इत्यादि से संबंधित मामले।

(5) केन्द्र अथवा राज्य सरकारों द्वारा सौंपे गए हत्या, बलात्कार, दहेज-मृत्यु जैसे अपराधों से संबंधित मामले।

(6) बैंकों, बीमा एवं संयुक्त शेयर कम्पनियों इत्यादि में धोखाधड़ी के मामले।

(7) उपविष (नार्कोटिक्स), मादक औषधि एवं साइकोट्रोपिक पदार्थ अधिनियम, शस्त्र अधिनियम, गोपनीयता अधिनियम और पुरातत्व वस्तुओं की चोरी, जाली मुद्रा और बैंक नोट, विदेशियों की अप्राधिकृत घुसपैठ तथा जासूसी कार्यकलापों से संबंधित विशेष अपराधों के विशेष अधिनियमों के मामले।

(8) आतंकवादियों के विरुद्ध मामले।

(9) उच्चतम न्यायालय अथवा उच्च न्यायालयों द्वारा सौंपे गए मामले।

(10) केन्द्र/राज्य सरकारों तथा उच्चतम न्यायालय/उच्च न्यायालयों द्वारा सौंपे गए महिलाओं के विरुद्ध मामले।

इस प्रकार मुख्यतः एक भ्रष्टाचार निवारण एजेंसी के रूप में केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की मूलभूत भूमिका में बड़ा परिवर्तन आया है। केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो अब विभिन्न प्रकार के विशेष अपराध मामलों की जांच करता है।

केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो : इतिहास

सन् 1941 में द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान रक्षा सेनाओं को आपूर्ति की जाने वाली आवश्यक वस्तुओं की चोरी को रोकने और मुख्य रूप से युद्ध विभाग तथा उसके सहायक संगठनों में घूसखोरी और भ्रष्टाचार के अपराधों की जांच के लिए लाहौर में पुलिस उपमहानिरीक्षक (श्री कुर्बान अली) के अधीन अन्वेषण अधिकारियों की एक इकाई की स्थापना की गई। बाद में रेल विभाग को भी इसकी जांच के दायरे में लाया गया। इस इकाई का नाम दिल्ली विशेष पुलिस संगठन रखा गया। यही संगठन केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो का पूर्ववर्ती संगठन है।

संथानम समिति की सिफारिशों के आधार पर पहली अप्रैल 1963 को केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की स्थापना की गई। इसका कार्य क्षेत्र बढ़ाने के साथ ही यह केन्द्रीय जांच एजेंसी एवं अपराधों की सूचना के केन्द्रीय वितरण केन्द्र, दोनों ही के रूप में कार्य करने लगा। इस प्रकार दिल्ली विशेष पुलिस संगठन केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो का भाग बन गया।

केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो : मुख्यालय

इस संगठन का मुख्यालय दिल्ली में है और इसका अध्यक्ष एक निदेशक है। निदेशक के कार्य में सहयोग करने के लिए दो अतिरिक्त निदेशक, नौ संयुक्त निदेशक तथा बीस उप-निदेशक/पुलिस उप-महानिरीक्षक हैं।

केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की शाखाएं अधिकांश राज्यों की राजधानियों के मुख्यालयों तथा दिल्ली में स्थित हैं। इसके अतिरिक्त राज्यों की राजधानियों के अलावा अन्य नगरों अर्थात धनबाद, जोधपुर, नागपुर, सिल्चर, रांची, देहरादून, जबलपुर, कोचीन, विशाखापत्तनम में भी शाखाएं कार्य कर रही हैं। गुवाहावटी, इटानगर, इम्फाल, एज़वाल, बाड़मेर, भुज, श्रीगंगानगर, सिलीगुडी, राउरकेला, अगरतला, जम्मू तथा शिमला में भी उप-एकक हैं।

केन्द्रीय अवेषण ब्यूरो के प्रभाग

विधि प्रभाग केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के विधि अधिकारी कानूनी सलाह देते हैं और न्यायालयों में मुकदमों की पैरवी करते हैं। एक विधि सलाहकार इस प्रभाग का प्रमुख होता है।

* सहायक निदेशक, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो, 8वां तल, लोक नायक भवन, खान मार्किट, नई दिल्ली

अतिरिक्त विधि सलाहकार, उप-विधि सलाहकार तथा सरकारी अभियोजक इस प्रभाग के अन्य विधि अधिकारी हैं।

तकनीकी प्रभाग तकनीकी प्रभाग अन्वेषण अधिकारियों का करों की चोरी, घोषित आय के साधनों से अधिक आय संबंधी खातों, दस्तावेजों तथा रिकार्डों की छान-बीन करने, सम्पत्तियों के मूल्यांकन एवं इंजीनियरी कार्यों के तकनीकी परीक्षण करने आदि में सहायता प्रदान करता है। इस प्रभाग के कर्मिकों में चार्टेड एकाउन्टेंट, आय-कर अधिकारी तथा सरकारी विभाग के लेखा अधिकारी और सिविल अभियन्ता शामिल हैं। लेखा अनुभाग के प्रमुख एक तकनीकी सलाहकार तथा इंजीनियरी प्रकोष्ठ के प्रमुख कार्यकारी अभियन्ता हैं।

समन्वय प्रभाग आधुनिक संचार व साधनों के विकास और सड़क, रेल तथा वायु मार्ग से यात्रा की सुविधाओं की बदौलत अपराधियों की गतिविधियां अब केवल अपने निवास स्थान या पास-पड़ोस तक ही सीमित नहीं रह गई हैं। इस तरह के अपराधी संगठनों के अपराधों का पता लगाने के लिए उनकी कार्य प्रणाली, चोरी के माल को ठिकाने लगाने और उनके छिपने के अड्डों आदि से संबंधित बिखरे हुए तथा जटिल आंकड़ों का सावधानी से अध्ययन करने एवं गहन विश्लेषण की आवश्यकता होती है। पिछले कुछ वर्षों के दौरान केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो एक समन्वय एजेंसी के रूप में उभरा है। केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो का कम्पयूटर स्कंध (विंग) अपराध तथा अपराधियों का कम्पयूटरीकृत रिकार्ड रखता है। यह स्कंध अपराधियों की पहचान करने के निरन्तर प्रयत्नों में केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की विभिन्न शाखाओं की भी सहायता करता है।

समन्वय स्कंध अपराधों की रोकथाम के लिए समय-समय पर छापा मारने और अपराधों की रोकथाम तथा सामाजिक सुरक्षा उपाय करने में राज्यों की सहायता करता है। इस संबंध में इस ने अश्लील साहित्य जब्त करने और अपहृत बच्चों को बरामद करने के लिए देश भर में छापे मारे हैं। यह राष्ट्रीय पुलिस संग्रहालय की भी देखरेख करता है जिसमें पुलिस के लिए उपयोग की वस्तुओं का प्रदर्शन किया जाता है। इसके अलावा यह स्कंध "केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो बुलेटिन" नामक मासिक पत्रिका प्रकाशित करता है जिसमें व्यावसायिक महत्व के विषयों एवं अंतर्राष्ट्रीय तथा अंतर्राज्यीय अपराधियों से संबंधित अपराधिक सूचनाएं देने वाले लेख छपे होते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग भारत अंतर्राष्ट्रीय पुलिस संगठन, जिसे आमतौर पर "इन्टरपोल" के नाम से पुकारा जाता है, का एक सदस्य है। इस संगठन का मुख्यालय लियोन्स में है। इन्टरपोल के सदस्य देशों के साथ संपर्क बनाए रखने के लिए केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो भारत का राष्ट्रीय केन्द्रीय ब्यूरो है। राज्य पुलिस तथा केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो जिन मामलों की छानबीन करते हैं, उनके बारे में अपेक्षित सूचना एवं न्यायिक सहायता प्राप्त करने हेतु केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो का इन्टरपोल प्रभाग संबंधित देश के राष्ट्रीय केन्द्रीय ब्यूरो के साथ पत्र-व्यवहार करता है। इन्टरपोल अन्तर्राष्ट्रीय तस्करी-स्वर्ण, मादक द्रव्यों आदि के अवैध व्यापार के बारे में सूचनाओं के आदान-प्रदान में भी सहायता करता है।

केन्द्रीय न्यायवैद्यक वैज्ञानिक प्रयोगशाला: अपराधों की छानबीन करने वाली और कानून प्रवर्तन एजेंसियों द्वारा अपराधों से संबंधित भौतिक सबूतों का मूल्यांकन करने के लिए विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी यंत्रों का अधिकाधिक प्रयोग किया जा रहा है। न्यायवैद्यक विज्ञान अपराधों, विशेष रूप से विश्वव्यापी जटिल अपराधों, की छानबीन करने में महत्वपूर्ण योगदान करता है। दिल्ली स्थित केन्द्रीय न्यायवैद्यक विज्ञान प्रयोगशाला मुख्य रूप से दिल्ली पुलिस तथा केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की आवश्यकताओं को पूरा करती है। भौतिक सबूतों के वैज्ञानिक विश्लेषण के मामलों में राज्य न्यायवैद्यक विज्ञान प्रयोगशालाएं, रक्षा विभाग, सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों तथा अन्य सरकारी अभिकरण भी इसकी सेवाओं का लाभ उठाते हैं। यह देश का प्रमुख न्यायवैद्यक विज्ञान संस्थान हैं और इसके एक ही भवन में नौ प्रभाग हैं। ये प्रभाग हैं: रसायन प्रभाग, भौतिकी प्रभाग, जीव-विज्ञान प्रभाग, सीरोलोजी प्रभाग, दस्तावेज प्रभाग, अस्त्र विज्ञान प्रभाग, झूठ अभिज्ञान प्रभाग, अंगुलीछाप प्रभाग तथा फोटो और वैज्ञानिक सहायता प्रभाग।

आपका बहुमूल्य सहयोग: केन्द्रीय अन्वेषण भ्रष्टाचार तथा अन्य असामाजिक अपराधों के विरुद्ध अपनी सतत लड़ाई में सरकारी सेवाओं में व्याप्त कदाचार और दुराचार के बारे में सूचना तथा सबूत उपलब्ध कराने के लिए आपके सहयोग तथा तत्परता पर अत्यधिक निर्भर करता है। आपके इस सकारात्मक सहयोग के बिना केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो अथवा राज्य में कार्यरत भ्रष्टाचार निवारण एजेंसियों को भ्रष्ट तत्वों का पर्दाफाश करने के प्रयासों में काफी असुविधा होगी। बाद में दंडित किए जाने तथा सूचना देने के भेद खुल जाने के डर से प्रायः नागरिक सहयोग और सहायता देने से कतराते हैं। केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के अधिकारियों को इस बात की सख्त हिदायतें दी गई हैं कि सूचना को गुप्त रखा जाए।

अपराध की रोकथाम के लिए यह जरूरी है कि गलत कार्य करने वालों का भंडा-फोड़ किया जाए। प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य है कि वह समाज को ऐसे तत्वों से छुटकारा दिलाए जो सरकारी सेवाओं की प्रतिष्ठा पर धब्बा लगाते हैं।

यदि आपके पास किसी सरकारी कर्मचारी के दुराचार या उसके द्वारा अर्जित भारी परिसम्पत्तियों के संबंध में ऐसी विश्वसनीय तथा सटीक जानकारी है जिससे यह मालूम होता हो कि उसकी आय ज्ञात साधनों से बहुत अधिक है तो इसकी सूचना आप लिखित रूप में अथवा स्वयं आकर केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की निकटतम शाखा के प्रभारी पुलिस उप-महानिरीक्षक अथवा पुलिस अधीक्षक को दे सकते हैं।

हिंदी कंप्यूटर के नए साधन

—गुणाकर मुले

कंप्यूटर की अपनी एक स्वतंत्र 'भाषा' है। अतः कंप्यूटर के लिए संसार की कोई भी भाषा बड़ी या छोटी नहीं है। कंप्यूटर टेक्नालाजी का विकास मुख्यतः अंग्रेजी माध्यम में हुआ है, इसीलिए आज "अंग्रेजी कंप्यूटर" का बोलबाला है और इस भाषा में बहुत सारे कंप्यूटर साधन उपलब्ध हुए हैं। स्पष्ट है कि कंप्यूटर टेक्नालाजी ने अंग्रेजी भाषा को अधिक प्रभावकारी बना दिया है।

मगर कंप्यूटर किसी एक भाषा का पक्षपाती नहीं है। यह शक्तिशाली आधुनिक टेक्नालाजी अंग्रेजी को बलशाली बना सकती है, तो हमारी भारतीय भाषाओं को भी बल प्रदान कर सकती है, अधिक समर्थ बना सकती है। आज यदि हम अपनी भाषाओं के लिए कंप्यूटर साधनों को बड़े पैमाने पर नहीं अपनाते, तो संसार की उन्नत भाषाओं की तुलना में हमारी भाषाएं लगातार पिछड़ती जाएंगी, भारत में "अंग्रेजी कंप्यूटर" का ही प्रभुत्व बना रहेगा।

दस साल पहले अंग्रेजी और हिन्दी या तमिल में एक साथ काम करने वाले द्विभाषी कंप्यूटरों का पहली बार देश में प्रदर्शन हुआ था। तब से विश्व स्तर पर कंप्यूटर टेक्नालाजी का खूब विकास हुआ है, अधिकाधिक शक्तिशाली बनते जा रहे पर्सनल कंप्यूटर, टेलीविजन व वीडियो की तरह, एक आम चीज बनते जा रहे हैं।

इन दस सालों में भारतीय भाषाओं के संसाधन के लिए बहुत सारे कंप्यूटर साधन उपलब्ध हुए हैं। शब्द-संसाधन और डेस्क टॉप पब्लिशिंग के लिए कई साफ्टवेयर पैकेज उपलब्ध हैं और मुद्रण में इनका खूब इस्तेमाल हो रहा है। मगर इसे कंप्यूटर की अपार क्षमताओं का एक सीमित इस्तेमाल ही समझना चाहिए। जरूरत है ऐसी टेक्नालाजी की, जो कंप्यूटर की व्यापक क्षमताओं को भारतीय भाषाओं के लिए उपलब्ध कराती रहे। जरूरत है ऐसी टेक्नालाजी की, जो भारतीय भाषाओं के लिए भी वे पैकेजेज उपयोगी बना दे जो कि अंग्रेजी के लिए उपलब्ध हैं।

सौभाग्य से ऐसी एक समर्थ टेक्नालाजी की जड़े अब हमारे देश में जम गई हैं। यह है—**जिस्ट टेक्नालाजी**। **जिस्ट** का मतलब है—**ग्राफिक्स एंड इंटेलिजेंस बेस्ड टेक्नालाजी**। जिस्ट की नींव आई०आई०टी०, कानपुर में पड़ी थी, करीब दस साल पहले। सन् 1988 से जिस्ट टेक्नालाजी का विकास पुणे के सरकारी संस्थान **सी-डैक** की छत्रछाया में हो रहा है। सी-डैक ने एक ओर **परम सुपर कंप्यूटर** के निर्माण में सफलता प्राप्त की है, तो दूसरी ओर जिस्ट टेक्नालाजी के जरिए भारतीय भाषाओं के संसाधन के लिए कई नए तथा क्रांतिकारी कंप्यूटर-साधन उपलब्ध करा दिए हैं।

भारतीय लिपियों के टाइपराइटरों में अनेक दिक्कतें हैं, इसलिए अक्सर कहा जाता है कि ये लिपियां कंप्यूटर के लिए भी कठिनाइयां पैदा करती हैं। बात कुछ हद तक सही भी है। मगर हमें यह सदैव स्मरण रखना चाहिए कि कंप्यूटर एक माने में बुद्धिसंपन्न मशीन है। जिस्ट टेक्नालाजी की यह एक बड़ी उपलब्धि है कि उसने भारतीय लिपियों की त्रुटियों को एक वरदान में बदल दिया है।

सभी भारतीय लिपियां, अरबी-फारसी, अरबी-लिपि को छोड़कर, ब्राह्मी लिपि से विकसित हुई हैं। अन्य शब्दों में, सभी भारतीय लिपियों की वर्णमाला मूलतः एक है। इस विशेषता के कारण सभी भारतीय लिपियों के लिए एकरूप कोड की व्यवस्था करके सभी के लिए एक मानक कुंजीपटल का आयोजन करना संभव हुआ है। सरल शब्दों में कहें तो अब देवनागरी के 'क' अक्षर और बांग्ला, तमिल आदि अन्य सभी भारतीय लिपियों के 'क' अक्षर के लिए एक ही कोड है, जिसे इलेक्ट्रानिक विभाग ने सुनिश्चित कर दिया है। भारतीय लिपियों की इस बुनियादी एकरूप विशेषता के कारण सभी को एक ही कुंजीपटल पर स्थापित कर देना संभव हुआ है।

अब आप एक ही कंप्यूटर-कुंजीपटल पर अंग्रेजी के अलावा देवनागरी और भारत की सभी प्रमुख भाषाओं/लिपियों में काम कर सकते हैं। इसके लिए अब जिस्ट-कार्ड उपलब्ध हैं। आज देवनागरी, बांग्ला, तमिल आदि के लिए अलग-अलग टाइपराइटर-कुंजीपटल प्रचलित हैं। मगर अब जिस्ट टेक्नालाजी के जरिए ऐसा एकरूप कंप्यूटर-कुंजीपटल उपलब्ध हो गया है जिस पर एक ही व्यक्ति एक साथ कई भारतीय भाषाओं में कार्य कर सकता है।

सभी भारतीय लिपियों को एक ही कंप्यूटर-कुंजीपटल पर स्थापित कर देना एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। इसके साथ ही लिप्यंतरण का एक बहुत बड़ा साधन भी उपलब्ध हो गया है। इस नई व्यवस्था के अंतर्गत जो नया कंप्यूटर कुंजीपटल अस्तित्व में आया है उसमें भी कई सुविधाएं हैं। नया कुंजीपटल वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित है। इसमें भारतीय वर्णमाला के सभी अक्षरों के लिए स्थान हैं। इसकी मुख्य विशेषता यह है कि आप जिस क्रम में शब्दाक्षरों का उच्चारण करते हैं, ठीक उसी क्रम में अक्षर और मात्राएं स्पर्श-टंकित की जाती हैं।

जिस्ट टेक्नालाजी का लक्ष्य है—भारतीय भाषाओं के साथ संसार की सभी भाषाओं को एक कंप्यूटर-मंच पर खड़ा कर देना। तिब्बती, सिंहली तथा दक्षिण-पूर्व एशिया की कई लिपियां भी ब्राह्मी से विकसित हुई हैं। जिस्ट टेक्नालाजी के जरिए तिब्बती, सिंहली तथा थाई लिपि को भारतीय लिपियों के साथ कंप्यूटर पर स्थापित कर देना संभव हुआ है। अरबी-फारसी लिपि को भी उसी कंप्यूटर कुंजीपटल पर स्थान मिल गया है।

शेष पृष्ठ 26 पर

राष्ट्रभाषा में तकनीकी कार्य

-विजय कुमार

प्रायः यह कहा जाता है कि तकनीकी कार्य (टेक्नॉलॉजी, टेक्निकल वर्क्स) राष्ट्रभाषा (हिन्दी) में नहीं किये जा सकते, इसके लिए अंग्रेजी अनिवार्य है। ऐसे विचार रखने वाले मुझे क्षमा करें, क्योंकि मेरा विचार है कि "यह कहना कि तकनीकी कार्यों के लिए जनभाषा उपयुक्त नहीं हो सकती या तकनीकी कार्य किसी भाषा विशेष की मोहताज है", किसी व्यक्ति या समाज के स्वतन्त्र और स्वस्थ मानसिकता की कोख से जना विचार नहीं है। मेरी दृष्टि में उपर्युक्त तर्क न तो किसी भाषा विशेष की सम्पन्नता का द्योतक है और न ही तकनीकी के भाषा पर आश्रित होने का।

सच में देखा जाए तो यह तर्क जितना किसी भाषा के तकनीकी पक्ष के लिए अनिवार्यता का संदर्भ लिए हुए है उतना ही उसके अन्योन्याश्रिता का भी। यह बात इस लेख के माध्यम से स्पष्ट हो जाएगी। यदि तकनीकी, विज्ञान किसी भाषा का मोहताज होता तो फिर आधुनिक गणित एवं बीजगणित का माध्यम अरबी होना चाहिए। प्राचीन मौलिक गणित, ज्योतिष एवं नक्षत्र विज्ञान की प्रारंभिक खोजें भारत में हुई, तो इसकी भाषा तो संस्कृत होनी चाहिए। **विज्ञान व तकनीकी के दो तिहाई से अधिक खोजें, अथवा विकास तो उन लोगों ने ही किया है जो अंग्रेज नहीं थे, अंग्रेजी नहीं जानते थे,** फिर उनका माध्यम अंग्रेजी कैसे बन गई। वास्तविकता है कि उपर्युक्त तर्क हमारे जैसे नव-स्वतन्त्र एवं उपनिवेशवादी संस्कृति के पृष्ठपोषक देश के लोग ही देते हैं। वर्तमान तकनीकी और विज्ञान अपने आप में सबूत है कि दुनिया के ढेर सारे देश इन कार्यों को अपनी भाषाओं में कर रहे हैं।

तकनीकी विज्ञान की सबसे मौलिक विशेषता है, उसका क्रमबद्ध ज्ञान, तर्कों पर आधारित अनुसंधान एवं विकास। इसके लिए मौलिक कल्पनाशीलता और संवेदनशीलता की आवश्यकता होती है, जिसे कोई देश, समाज अपनी भाषा में ही प्राप्त कर सकता है। तकनीकी व विज्ञान के अनुसंधान, विकास की स्वस्थ फसल उसके संचार व अभिव्यक्ति के माध्यम (भाषा) की उर्वरा भूमि में ही पैदा हो सकती है। किसी और की जमीन से पैदा की गई फसल का मात्र रखरखाव करें, यह तकनीकी सम्पन्नता का द्योतक नहीं हो सकता। कौन नहीं जानता कि हम जिस तकनीक के बल पर अपने को तकनीकी सम्पन्न होने का गर्व करते हैं वह अन्य किसी देश के दशाब्दियों, अर्द्धशताब्दियों पुराने एवं उधार के हैं और जिस स्तर के नए तकनीक दुनिया के कतिपय देश प्राप्त कर चुके हैं उन तक पहुंचने में हमें दशाब्दियां व अर्द्धशताब्दियां लगेंगी।

भाषा की अपनी जातीय प्रतिबद्धता भी होती है और भाषा अपने माध्यम से अपने आधारभूत मूल्यों, संस्कृति एवं अपने नियामकों के उद्देश्यों, अभिप्रायों की वाहक होती है। इसका प्रभाव अन्य क्षेत्रों में जैसे, सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक क्षेत्रों में भी देखा जा सकता है। प्रायः हर साम्राज्यवादी, उपनिवेशवादी भाषा अपने उपनिवेशों, विजित प्रदेशों एवं उसके जानने, पढ़ने वाले अन्य लोगों को उनकी जड़ों से काटने का कार्य करती है। इस प्रकार राष्ट्रभाषा से इतर किसी भाषा विशेष के माध्यम से कोई निरपेक्ष चीज नहीं पा सकते हैं। भाषा की प्रतिबद्धता का ही उदाहरण है जब "अन्तरिक्ष यात्री" के लिए अमरीका ने "एस्ट्रोनॉट" शब्द बनाया तो रूस ने इसे अस्वीकार करते हुए उसने अपना नया शब्द "कास्मोनौट" ईजाद किया, जो उसकी राष्ट्रीय अस्मिता को भी प्रतिबिम्बित करता है। विश्व के तमाम तकनीकी में विकसित देश इस बात के ज्वलन्त उदाहरण हैं कि वे चाहे कोई तकनीक किसी भी देश से क्यों न लिए हों, किन्तु उसका भाषायी रूपान्तरण उन्होंने अपनी भाषा में अवश्य किया और उसे अपने पर्यावरण की अपनी जमीन मुहैया की। तकनीक यदि भाषा की मोहताज होती तो स्विटजरलैण्ड का चरवाहा तक घड़ियां कैसे बना लेता? जापान के घर-घर में जन-जन तक कम्प्यूटरी तकनीक का आविर्भाव कैसे हो सकता था?

फिर विज्ञान व तकनीकी का उद्देश्य भी क्या है? यदि इसका उद्देश्य प्रकृति के रहस्यों को खोजकर उसे मानव हित में उपयोगी बनाना है तो उसके लिए अवश्य ही भाषायी पूर्वाग्रह के स्थान पर स्वभाषा प्रतिबद्धता की आवश्यकता होगी। दूरदर्शन पर कुछेक कार्यक्रम देखे जा सकते हैं, जो भाषायी पूर्वाग्रह के कारण निरर्थक हो जाते हैं। टी०वी० पर दिखाया जाता है कि गांव में मिट्टी के देशी चूल्हे पर उपले जलाकर लोग खाना बनाते हैं, जिससे एक तरफ स्वास्थ्य को उससे निकलने वाले धुएं से नुकसान होता है, तो दूसरी तरफ आग की लौ के आंशिक उपयोग होने के कारण ऊर्जा की बरबादी होती है। साथ ही यह भी इस कार्यक्रम में दिखाया जाता, बताया जाता है कि हानिकारक धुओं से बचने एवं ऊर्जा की बरबादी रोकने के लिए नए वैज्ञानिक चूल्हे आविष्कृत हैं। किन्तु यह सारा कार्यक्रम अंग्रेजी में प्रदर्शित किया जाता है तो क्या यह मौलिक सवाल नहीं उठता कि देश में कितने अंग्रेजी जानने वाले मिट्टी के देशी चूल्हे पर उपले (काउडंग केक्स) जलाकर खाना बनाते हैं, जिन्हें ऐसे कार्यक्रम का लाभ दूरदर्शन पहुंचाना चाहता है? हम अंग्रेजी परस्त लोग नहीं समझ पाते हैं कि अंग्रेजी में प्रसारित बच्चों के वैज्ञानिक कार्यक्रम एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी प्रसारण से किन्हें शिक्षित करते हैं? हमारे ढेर सारे होने वाले वैज्ञानिक आविष्कार, जरूरत के उपकरण, जिनके साहित्य विवरण, निर्देश अंग्रेजी में देकर क्यों इनकी उपयोगिता चन्द अंग्रेजी जानने वालों तक के लिए सीमित कर देते हैं? हम कोई नया विभाग खोलते हैं, कोई नई वस्तु, उपकरण बनाते हैं तो उसका नाम अंग्रेजी में ही रखते हैं, क्यों? क्या अपनी राष्ट्रभाषा, देशज भाषाओं के शब्दों का प्रयोग करने मात्र से उसकी गुणवत्ता कम हो जाती है?

सच में देखा जाए तो तकनीकी, वैज्ञानिक कार्य जनभाषा में न करके हम इसे साधारण जनता तक पहुंचने नहीं देना चाहते हैं, फिर हमारे तकनीकी वैज्ञानिक उन्नति का क्या मोल? हम यह भूल जाते हैं कि "अंग्रेज" और "अंग्रेजी" आने के पूर्व भी हम तकनीकी स्तर पर कम

विकसित नहीं थे और हमारी तकनीकी, औद्योगिक विकास को ही देखकर बाहरी, साम्राज्यवादी इस देश में आए। हमने गणित, ज्योतिष एवं अन्तरिक्ष विज्ञान में अभूतपूर्व सफलताएं प्राप्त की थीं, विश्व को चौंकाया था किन्तु क्या उस समय हम किसी विदेशी भाषा के मोहताज थे? अब भी क्यों हैं?

हमारे देश में अपनी भाषा (हिन्दी) में विज्ञान के हर विषयों की शब्दावलियां बन चुकी हैं, पाठ्य पुस्तकें (विश्वविद्यालय स्तर तक की) छप चुकी है, स्कूलों/कालेजों में पढ़ाई भी अंग्रेजी से इतर भाषाओं में हो रही है। इतना ही नहीं कुछ उत्साही, स्वाभिमानी लोग अनुसंधान तक भी हिन्दी/भारतीय भाषाओं में कर रहे हैं। फिर हम इस पूर्वाग्रह से ग्रस्त क्यों हैं कि अंग्रेजी के बिना वैज्ञानिक प्रगति नहीं हो सकती। मुझे अन्य तकनीकी विभागों की जानकारी तो नहीं है किन्तु केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग (सी॰पी॰डब्ल्यू॰डी॰) में हिन्दी में तकनीकी कार्य करने की हर व्यवस्था व सुविधा उपलब्ध हो चुकी है। यहां दर-विश्लेषण (एन-लिसस आफ रेट्स), विर्निदेश (स्पेसिफिकेशन), दर अनुसूचियां (शिड्यूल आफ रेट्स), नक्शे आदि सभी राष्ट्रभाषा में उपलब्ध हैं और काफी सीमा तक इनका उपयोग भी हो रहा है, किन्तु जरूरत है अपने पूर्वाग्रहों को छोड़ने की और अपनी झिझक मिटाने की।

हम स्वतन्त्र भारत में जहां अपनी भाषा के माध्यम से ज्ञान-विज्ञान के पठन-पाठन एवं शिक्षण-प्रशिक्षण के ढेर सारे नए आयाम खोले हैं, वहीं अंग्रेजी के प्रति ऐसे लगाव क्या अपने देश की बौद्धिक क्षमता को कुंठित नहीं कर रहे हैं? हमारे देश में अनेक विद्यार्थी (प्रथम श्रेणी एवं विशेष योग्यता प्राप्त करने वाले भी) केवल इसलिए अनेक उच्च श्रेणी के प्रतियोगिताओं, चुनावों में नहीं चुने जा पाते क्योंकि उन्हें अच्छी अंग्रेजी नहीं आती, वे अंग्रेजी माध्यम से पढ़े नहीं हैं। ज्ञान-विज्ञान की प्रगति की खुली हवा को हम जन-जन के दिल-व-दिमाग तक क्यों नहीं पहुंचने देते, इसे कुछ वर्ग विशेष (अंग्रेजीदां लोगों) तक ही क्यों सीमित रखना चाहते हैं? हमें विज्ञान तकनीकी को सही अर्थों में समझने, समझाने एवं उपयोगी बनाने हेतु इसका जन-भाषायीकरण करना होगा, तभी हम अपने प्राकृतिक साधनों एवं बौद्धिक अपार क्षमता का उपयोग कर पाएंगे, वरना "भोपाल की कारबाइड त्रासदी" के रूप में केवल उधार की तकनीक का दूसरों के लाभ के लिए, हजारों की जान गंवाकर मात्र विकास की कीमत चुकाते रहेंगे।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट हो जाता है कि तकनीकी, विज्ञान सम्बन्धी कार्यों का माध्यम राष्ट्रभाषा ही हो सकती है अन्यथा दूसरों के पिछलग्गू एवं नकलची होने के सिवा हम कुछ नहीं हो सकते। विज्ञान तकनीकी का माध्यम विदेशी भाषा होने के कारण ही देश में यह विधा कुछ खास लोगों की सेवा एवं संरक्षण में है और उन्हीं के विकास का मार्ग प्रशस्त कर रही है। विदेशी भाषा अथवा "अंग्रेजियत" के कारण ही हमारे देश का वैज्ञानिक, डाक्टर और इन्जीनियर, भले ही वह इसी धरती की मिट्टी में और देश की कीमत पर तैयार होता है, यहां रहने एवं कार्य करने में घुटन महसूस करता है। आज हमारे देश के हजारों वैज्ञानिक, इन्जीनियर और डाक्टर, विदेशों में पड़े हैं, जबकि हमारे देश के करोड़ों जरूरतमन्द नागरिकों की उनकी सेवाओं के जरूरत हैं। इसका कारण मात्र यही है कि वे, डाक्टर इन्जीनियर, वैज्ञानिक बनते ही इस शर्त पर हैं कि वे आम नागरिक, उनके रहन सहन व उनकी भाषा से कटेंगे। उनकी लाचारी (थोपी गई) है कि वे बाहर व भीतर से यदि थोड़ा भी अपनी जड़ों से जुड़ने की कोशिश करेंगे तो वे वैज्ञानिक, इन्जीनियर व डाक्टर बन ही नहीं सकते। यह कैसी विडम्बना है? क्या इस मायाजाल को तोड़ा नहीं जा सकता? क्या हम दूसरों की पुरानी खोजों के मात्र वाहक बनकर वैज्ञानिक, तकनीशियन कहलाते रहेंगे, दूसरों (जैसे अन्तर्राष्ट्रीय संस्थान, बहुराष्ट्रीय कंपनियां) के स्वार्थ साधन का कारण बने रहेंगे? विज्ञान एवं तकनीकी के सही अर्थों व उपयोगों को अपने देश व देशवासियों के लिए समझने-समझाने को तैयार नहीं होंगे? यह सब ज्वलन्त सवाल हमारे देश के इन्जीनियरों, तकनिशयनों, वैज्ञानिकों, डाक्टरों एवं भावी प्रतिभाशाली नागरिकों के समक्ष, भाषा के परिप्रेक्ष्य में हैं, जिनका समाधान हमें ढूंढ़ना है। □

पृष्ठ 7 का शेषांश

इस विषय में इस बात पर भी ध्यान दिलाना जरूरी है कि प्रबंधक वर्ग के समक्ष यदि कार्यान्वयन के जानबूझ कर अवहेलना के प्रसंग आते ही हैं और व्यक्ति समझाने-बुझाने पर भी मानने को तैयार न हो तो इसमें दो मत नहीं हो सकते कि ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध सामान्य से ले कर गंभीर स्तर तक की कोई भी कार्रवाई किसी भी समय की जा सकती है। इसके लिए कोई अन्यथा प्रावधान ढूंढना आवश्यक नहीं है। कर्मचारी/अधिकारी वर्गों के विभिन्न सेवा नियमों और आचार संहिताओं में आदेशों की अवहेलना, जानबूझकर वरिष्ठ के आदेशों के उल्लंघन आदि के प्रकरणों के संबंध में अनुशासनिक/दण्डात्मक कार्रवाई करने के जो प्रावधान हैं वे सभी ही सामान्य रूप से राजभाषा संबंधी नियमों/आदेशों के उल्लंघन पर भी लागू होंगे। इस संदर्भ में की गई कार्रवाइयों के भी उदाहरण सामने आए हैं। एक प्रसंग में किसी वरिष्ठ अधिकारी ने किसी कर्मचारी के विरुद्ध अंग्रेजी में एक आरोप पत्र जारी किया। कर्मचारी ने अनुरोध किया कि उसे हिंदी में आरोप पत्र दिया जाए। किंतु इसके उत्तर में अधिकारी ने अंग्रेजी में उत्तर देते हुए उसे लिखा कि चूंकि आप पढ़े लिखे व्यक्ति है इस कारण हिंदी में आरोप पत्र की आवश्यकता नहीं है। इस पर कर्मचारी ने गृह मंत्रालय तक शिकायत कर दी। परिणामस्वरूप अधिकारी द्वारा इस विषय में किए गए दो उल्लंघनों के कारण उन्हीं के विरुद्ध जांच हो गई और उन्हें अनुशासनिक चेतावनी का सामना करना पड़ा। अतः ऐसे प्रसंगों में बहुत सोच समझ कर कार्रवाई करनी चाहिए।

हिंदी के सफल कार्यान्वयन के लिए और अधिकारियों की सहायता करने के उद्देश्य से राजभाषा विभाग ने कुछ जांच बिंदु बनाए हैं जिनके पालन पर यदि समुचित ध्यान दिया जाए तो अपने कार्य में आसानी से सफलता प्राप्त की जा सकती है। इसमें कार्यालयों में प्रयोग में आ रही रबड़ की मुहरों, साइन बोर्डों; नाम पट्ट, पत्र शीर्ष से लेकर द्विभाषिकता की आवश्यकता संबंधी समस्त प्रसंगों का भी विवरण है जिनके अनुपालन से कार्यालय में हिंदी प्रयोग पर प्रभावी नियंत्रण रखा जा सकता है। □

अंकगणित संबंधी प्रथम पाठ्य-पुस्तक

-डॉ॰ उषा माथुर*

गणित के एक पहलू अंकगणित के प्रारंभिक सूत्रों पर प्रकाश डालने वाली तथा उसके शुद्ध स्वरूप के सिद्धान्त बताने वाली हिन्दी की प्रथम प्रकाशित रचना "गणितांक की पुस्तक" है। यह अंकगणित संबंधी प्रथम पाठय-पुस्तक भी है। इसके लेखक रेवरेंड एम॰ टी॰ एडम हैं। यह 147 पृष्ठों की डिमाई आकार की रचना है जो 1827 ई॰ में कलकत्ता स्कूल बुक सोसाइटी से प्रकाशित हुई थी।

1. अंक गणित में प्रकृत-अंकों या गणना-अंकों और संख्याओं की गणना-विधि का वर्णन होता है। ज्योतिष-शास्त्र और खगोल-शात्र आदि विषयों में अंकगणित की विधियों और सिद्धान्तों का प्रयोग होता है। इन विषयों से जुड़े, गणित से गणना-अंकों का भेद दिखाने के लिए लेखक ने 'गणितांक' शब्द बनाया। यह शब्द अर्थ के अधिक निकट भी है।

2. गणित का अनुप्रयुक्त रूप खगोल शास्त्र और ज्योतिष शास्त्र आदि विषयों में देखा जा सकता है।

इसमें अंकगणित संबंधी सभी मूलभूत सिद्धान्तों का तथा अंकगणित के प्रारंभिक क्षेत्र प्रकृत-अंकों को गणना करने का, उन्हें खड़ी बोली में लिखने की विधि का तथा अंकगणित को चार मूलभूत संक्रियाओं (Fundamental Rules)—जोड़, घटाना, गुणा और भाग—से लेकर विभिन्न वस्तुओं के मापों और तौलों का वर्णन सरल एवं रोचक शैली में किया गया है। विभिन्न सिद्धान्तों का स्पष्टीकरण अनेक उदाहरणों द्वारा किया गया है।

यद्यपि अंकगणित संबंधी इन चारों संक्रियाओं का वर्णन, एडम अपनी 1824 ई॰ में प्रकाशित रचना 'पाठशाला के बैठावने को और बालकन के सिखावने की रीति का बखान' में कर चुके थे, परन्तु इसमें रचना के विवेच्य विषय-विद्यालय की स्थापना और संगठन आदि का वर्णन होने के कारण उक्त चारों संक्रियाओं का वर्णन अत्यंत संक्षेप में दिया गया है। इससे इतना पता चलता है कि इस समय पाठय-पुस्तकों में अंकगणित पर एक पृथक एवं स्वतंत्र प्रकरण रखना, शिक्षा-प्रणाली में अनिवार्य था। विद्यार्थी के मानसिक अनुशासन को बनाए रखने के लिए उसमें तर्क शक्ति और विचार-विमर्श को क्षमता जागृत करने के लिए अंकगणित के प्रारंभिक ज्ञान की महती आवश्यकता अनुभव की जा चुकी थी।

संपूर्ण रचना दो भागों में विभाजित है। जिसमें विद्यार्थी की मनोवैज्ञानिकता को ध्यान में रखकर प्रमेयों (Theorems) को सरल एवं सुगम विधि से हल करना बताया गया है। प्रथम भाग में पचास पाठ हैं। जिनमें संख्याओं को खड़ीबोली (हिन्दी) में गिनने और उन्हें देवनागरी लिपि में लिखना बताया गया है। इकाई-दहाई, सैंकड़ा आदि अंक-स्थानों के नाम और उनके निश्चित-स्थान भी इसमें बताए गए हैं। इकाई के लिए 'एक स्थानीय', दहाई के लिए 'दशस्थानीय' और सैंकड़े के लिए शतस्थानीय शब्दों का प्रयोग मिलता है। संख्या-वाचक सभी शब्द संस्कृत भाषा के हैं। विभिन्न अंकों के पहाड़े लिखना और उन्हें कंठस्थ करने को सरल शैली इसी प्रकरण में बताई गई है। इस प्रकार गणित के अन्य सिद्धान्तों को बताने से पूर्व उसकी प्रारंभिक बातों का परिचय प्रथम पाठ में करवा देना अनिवार्य होता था।

इसके पश्चात अन्य पाठों में अंकगणित को मूलभूत चारों संक्रियाओं के सामान्य-भेद, उनकी परिभाषाओं के साथ बताए गए हैं। इस प्रकार समस्याओं को हल करने से पूर्व, उनके सिद्धान्त जानना और परिभाषाएं बता देना, गणित-शिक्षा में आवश्यक होता था। जोड़ने के लिए 'संकलन', गुणा करने के लिए 'गुणन' और भाग करने के लिए 'हरण' शब्दों का प्रयोग लेखक ने किया है। प्रश्नों को हल करने के लिए संख्याओं में 'क्रमविधि' का महत्वपूर्ण स्थान था। इसे 'दक्षिणावधि' अर्थात इकाई से दहाई की ओर अग्रसर होने की विधि भी कहा गया है। प्रश्नों का हल निकालने के पश्चात उसकी पुनः परीक्षा करना अनिवार्य था। इसके किए 'यथार्थता' 'शुद्धता' और 'फल की सिद्धि' आदि शब्दों का प्रयोग मिलता है। भागफल से 'हारक' का गुणा करने पर प्राप्त फलको 'मिलित' कहा गया है।

इन मलूभूत संक्रियाओं के सामान्य भेदों का विवेचन करने के पश्चात् लेखक ने क्रमशः कौड़ी, गुण्डे, काकिशी, पणा चौथ, विश्वे, सेर, पहाड़े, सवैये, डेढ़े, अढ्इया, हूंठा, पहुँचा, पौना, आधा, पावा, इग्यारही, एथना, अद्धी, दमड़ी, टुकड़े, धेले, पैसे, पाव आने से दो रुपैये, आदि का विवेचन एवं माप तथा बाजार की चलन, टके, छटांक से लेकर दो सेर, पाव से 20 सेर, सेर से मण तक की गिनतियों का वर्णन विस्तार पूर्वक विवेचन किया है। इसके पश्चात विभिन्न प्रकार की तौलों में बाजार की चलित तौल, कपड़े के माप, बंग देश की रीति से चावल आदि के विशेष माप, बंग देश से लेकर दक्षिण तक के माप, सोने चाँदी की तौल, मार्ग के माप, वैद्य की तौल, भूमि का माप, समय का माप, नगर भेद से तौलों के भेद बताए गए हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि इस समय विभिन्न प्रदेशों के अपने-अपने पैमाने होते थे, जिनसे विभिन्न वस्तुओं को मापा और तौला जाता था। इसी भाग में लेखक ने मूलभूत संक्रियाओं के मिश्र-भेदों का वर्णन इसके पश्चात किया है।

रचना के दूसरे भाग में छः पाठ हैं। जिनमें रूपभाग-अर्थात बड़े माप या बड़े सिक्कों को छोटे टुकड़ों या भागों में बाँटने की विधि का विवेचन है। इसे उच्चपद से मध्यपद, तृतीयपद और चतुर्थपद कहा गया है। इसमें रुपए को अद्धी तक में परिवर्तन करने की प्रक्रिया पूर्णतः स्पष्ट हो गई है। साथ ही छोटे सिक्कों या छोटे मापों को बड़े सिक्कों या बड़े मापों में परिवर्तित करने को प्रक्रिया भी बता दी गई है। इस प्रक्रिया को 'आनयन' कहा गया है। इसके पश्चात लेखक ने त्रैराशिक, समस्त त्रैराशिक और व्यस्त

* हर निवास, 47-पान दरीवा, चारबाग, लखनऊ-226004

त्रैराशिक को क्रमशः बीस और अट्ठारह प्रकार के उदाहरणों द्वारा स्पष्ट किया है।

उक्त दोनों प्रकरणों से स्पष्ट होता है कि इस समय अंकगणित को प्रारंभिक ज्ञान की उपयोगिता प्रत्येक ज्ञान क्षेत्र में बढ़ती जा रही थी। राजकाज, शासन और महाजनी आदि व्यावहारिक क्षेत्रों में इसकी उपयोगिता आंकी जा चुकी थी। इसके अतिरिक्त, सम्पत्ति के विभाजन में, कपड़े आदि के माप में बाजार से सामान खरीदने में, सोने-चांदी के व्यापार में, आयुर्वेद को तौलों में तथा समय, आयु, वर्ष, महीना, दिन, घड़ी, पल आदि को गणना में अंकगणित का महत्व सर्वविदित था। इनमें अंकगणित के प्रारंभिक सिद्धान्त काम में आते थे। विचारों में व्यावहारिकता लाने, चारित्रिक और नैतिक विकास करने के लिए भी गणित के सिद्धान्त प्रभावी सिद्ध होते थे। अंकगणित के अनुप्रयुक्त स्वरूप का विभिन्न वैज्ञानिक विषयों यथा ज्योतिषशास्त्र, खगोलशास्त्र, भूगोल आदि के अध्ययन में उपयोग होने लगा था। इन विषयों में हिन्दी में पुस्तकें लिखी जाने लगी थीं।

गणना में हाथ, अंगुली, मुट्ठी, बालिश्त तथा चावल और धान का तथा सोने-चांदी आदि की तौल में रत्ती का उपयोग होता था। यह गणना के हिसाब को याद रखने के महत्वपूर्ण संबल और साधन थे। ये सब उद्योग और व्यापार में पग-पग पर सहायक होती थीं। इनसे अंकगणित की समस्याओं एवं प्रमेयों को दक्षतापूर्ण शैली से हल कर लिया जाता था। इन विधियों से कोई भी विधार्थी गणित संबंधी पहेलियों और समस्याओं को बिना शिक्षक की सहायता के सुविधा पूर्वक हल कर लेता था। ये प्रश्न हल करने को सुगम विधियां थी जो किसी योग्य शिक्षक की भूमिका बड़े कौशल के साथ निभाने में समर्थ होती थीं। इसका एक उदाहरण निम्नलिखित है;

"संकलन की रीति
2 और 2 हुए 4
+ 3 = 5
+ 4 = 6 " इत्यादि।
(गणि०, पृ० 3)

इसमें संख्या '2' के पश्चात समुच्चयबोधक अव्यय 'और' का प्रयोग है जो दो संख्याओं को जोड़ने या संकलन करने का भाव बता रहा है। प्रथम पंक्ति में अंतिम संख्या "2" के पश्चात किया गया रूप "हुए" जहां एक और वाक्य की पूर्णता का द्योतक है वहीं दूसरी ओर हल तक पहुँचने की प्रक्रिया बताता है। इसके बाद बाकी पंक्तियों में

1 और 2 "गणना के द्वारा जो संख्या होती है, उसके जानने के लिये जो संकेत विशेष उसका नाम है अंक; राजकर्म और महाजनी इत्यादि समस्त-व्यावहारिक कर्म्मों के लिये उसका सदा प्रयोजन है"

(गणि०, पृ० 1)

"और" के स्थान पर संकेत—चिह्न "+" का और 'हुए' के स्थान पर "=" चिह्न का प्रयोग है। प्रश्न हल करते समय विधार्थी पुनरावृति प्रक्रिया द्वारा "और" के स्थान पर "+" चिह्न का और "हुए" के स्थान पर "=" का प्रयोग करना सीख लेता है। विदित हो इस समय पुनरावृत्ति द्वारा पाठ याद करवाना शिक्षा-पद्धति का अंग बन चुका था। समयान्तर पर विद्यार्थी ने शब्दों के स्थान पर संकेत-चिह्नों का आगे करना भली भांति सीख लिया और इनका प्रयोग जोड़, गुणा, घटाने और भाग करने के लिए करने लगा। इस प्रकार गणित की शिक्षा में विस्तृत विधि के स्थान पर लाघव विधि आ गई जिससे गणित में शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण होती गई। शिक्षक के अभाव में प्रमेयों को हल करना सरल नहीं रह गया। विदित हो कि भारत के प्राचीन शास्त्रीय ग्रंथों में लाघव विधि को स्थान दिया गया था इसमें सिद्धान्तों से निष्कर्ष तक पहुंचने को पूरी प्रक्रिया सूत्रों में बताई जाती थी। ये सूत्र संक्षिप्त होने के कारण कंठस्थ करने में तो सरल होते थे, परन्तु अपनी संक्षिप्ता के कारण सहज बोधगम्य नहीं होते थे।

लेखक ने प्रमेयों को हल करने के लिए जिन सूत्रों का प्रयोग किया है वे प्राचीन सूत्र-शैली के समान अंक संक्षिप्त न होकर किंचित विस्तृत हैं और एक परिभाषा के रूप में उभरकर आए हैं। इन परिभाषाओं का प्रयोग प्रश्न हल करने के पूर्व किया जाता था। प्रश्न कहीं कहीं पहेली के रूप में भी हैं जिसमें एक कथा भी पूरी हो गई है।

"राधावल्लभ मुखोपाध्याय कर्के एक ब्राहमण अपने पुत्रों के लिये बहुत धन को रखके मर गया। उसके पुत्रों ने उस धन को विभाग के अनुसार से बांट लिया तिसमें प्रत्येकों का बांट यह है। सबसे ज्येष्ठ गौरीनाथ उसका अंश 98796. मंझला उमानाथ 99699. तीसरा कालीनाथ 99476 चौथा काशीनाथ 99255 पांचवां शिवनाथ 98349 छठा रामनाथ 9923 सातवां कनिष्ठ हरिनाथ 99126 सब कितने रुपैये थे.

ठीक 604614" (गणि०, पृ० 10)

इस प्रकार के कथायुक्त प्रश्न विद्यार्थी का मानसिक विकास तो करते ही थे, उसके मनोरंजन के साधन भी थे। इस प्रकार के प्रश्नों से तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था पैतृक संपत्ति का विभाजन केवल पुत्रों तक सीमित रहना—का ज्ञान भी होता है। प्रत्येक प्रकरण और पाठों के पश्चात् उनमें वर्णित सिद्धान्तों पर आधारित प्रश्न पूछने की शैली सम्पूर्ण रचना में मिलती है। पाठों की तथा सिद्धान्तों की पुनरावृत्ति करवाना शिक्षण-शैली का प्रधान अंग था। इसलिए एक प्रकार के कई प्रश्न पूछ कर विद्यार्थी को विषय का ठोस ज्ञान देने का प्रयास किया जाता था।

रचना के अंत में शब्दांक पद्धति का वर्णन है। इसे 'अंकों का सांकेतिक नाम' शीर्षक दिया गया है। अंक-गणना की यह पद्धति स्कूली-पाठ्यक्रम में स्वीकृत थी। इस पद्धति में अंकों को सूचित करने के लिए जीवों और वस्तुओं का सहारा लिया गया है। इससे बड़ी संख्याओं को याद रखने में सहायता मिलती थी। काव्य रचना में भी सहायक होती थीं।

रचना की एक अन्य विशेषता अंकगणित संबंधी प्रारंभिक संक्रियाओं के साथ उनसे जुड़े पारिभाषिक और तकनीकी शब्दों के लक्षण स्पष्ट करना भी है। हिन्दी के राजभाषा घोषित होने के पूर्व अंकगणित संबंधी तकनीकी शब्द और परिभाषाएं स्थिर हो चुकी थीं। हिन्दी में आज से लगभग सौ दो सौ वर्ष पूर्व तकनीकी स्थायित्व आ चुका था। उसमें वैज्ञानिक संकल्पनाओं को रूप देने की क्षमता विकसित हो चुकी थी। कुछ शब्द निम्नलिखित हैं, संकलन, जमा-खर्च, गुणन, हरण, एक स्थानीय, दशस्थानीय, शत-स्थानीय यथार्थता, शुद्धता, फल की सिद्धि, मिलित, न्यूनांक, कब्ध अंक, दक्षिणावधि, गणितांक। इसी प्रकार हासिल के लिए 'हाथ लगा', 'हाथ में रहना', 'हाथ के अंक' आदि प्रयोग इस

शेष पृष्ठ 26 पर

तेलुगु दैनिक पत्रों के प्रतिनिधि संपादक स्व॰नार्ला

-सुंकि वेंकटेश्वर्लु *

प्रमुख तेलुगु पत्रकार, कवि और लेखक नार्ला वेंकटेश्वर राव जन्म से हिन्दी भाषी और कर्म से तेलुगु भाषी थे। उन्होंने पत्रकारिता को जीवन का पुरुषार्थ मान कर अपने जीवन को तो सार्थक बना ही लिया है, साथ-ही-साथ अशेष लोगों से मैत्री के साथ दुश्मनी भी मोल ली। फिर भी आज उनकी अनुपस्थिति में उनके मित्र और शुत्र उनकी यादों में भावविह्वल हो जाते हैं। उनका जीवन, उनकी संपादकीय कार्यविधि और लेखकीय ढंग तेलुगु पत्रकारिता के इतिहास में मील के पत्थर बन गये हैं और ये नयी पीढ़ी के पत्रकारों को प्रेरणा देने साथ दिशा-निर्देश भी करते हैं।

तेलुगु में सन् 1906 के आस-पास दैनिक "देशाभिमानी" के प्रकाशन के साथ दैनिक पत्रों का युग जो आरंभ हुआ था, उसके आरंभिक दौर के दीपस्तंभों में नार्ला जी प्रमुख थे। उन्होंने प्रवर संपादक सिंहाद्रि गोविंदाचार्य और तापि धर्माराव से प्रेरणा और दिशा-बोध पाकर तेलुगु जन-पत्रकारिता को लोकप्रिय बनाया था। साथ ही उन्होंने प्रथम श्रेणी के तेलुगु दैनिक पत्र "आंध्रप्रभा" और "आंध्रज्योति" को जन्म और जीवन भी दिया था। इन दोनों दैनिकों के अलावा आज दर्जन भर तेलुगु दैनिक पत्र उनके दिखाये मार्ग पर संवर्द्धित हुए हैं।

नार्ला जी का जन्म 1 दिसम्बर, 1908 को मध्यप्रदेश स्थित जबलपुर में हुआ था, तब तेलुगु पत्रकारिता में साप्ताहिक पत्रिकाओं का दौर था। "गौतमी", शशिलेखा", "आंध्र प्रकाशिका" आदि दैनिक पत्र कुछ दिन के लिए प्रकाशित हो कर बंद हो गये थे और साप्ताहिक "आंध्रपत्रिका" के दैनिक संस्करण के लिए प्रयास किये जा रहे थे।

नार्ला जी के पूर्वज जबलपुर में बसे प्रवासी आंध्र थे, जो अंग्रेजी सैनिक बलों को खाद्यान्नों की आपूर्ति करते थे। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान परिवार में उत्पन्न आर्थिक संकट के कारण नार्ला जी को अपने पिता लक्ष्मण राव, माता महालक्ष्मम्मा और छोटे भाई गौरी शंकर के साथ पैतृक-भूमि आंध्र प्रदेश के कृष्णा जिला स्थित कौताराम लौटना पड़ा। यहीं उन्हें एक और छोटे भाई नार्ला ताता राव और बहन की संगति मिली।

नार्ला जी बचपन से ही संवेदनशील और भावुक थे। उनकी चिंता स्वयं के बारे में कम और समाज के प्रति अधिक थी। पिता जी की मृत्यु के बाद रिश्तेदारों की देखरेख में उन्होंने फिफ्थ फारम (दसवीं कक्षा) 1922 में गुडिवाड़ा शहर में पूरा किया और एफ॰ए॰ (इंटरमीडिएट) काकिनाडा में। काकिनाडा में पढ़ते समय वे ब्रह्म समाज के विचारों से प्रभावित हुए और अपने बारह मित्रों से मिल कर 1923 में स्थापित "सोदर समिति" के सक्रिय कार्यकर्ता भी बने थे। इस समिति की ओर से उन्होंने हस्तलिखित साप्ताहिक "युवजन पत्रिका" भी निकाली थी। एफ॰ए॰ की परीक्षा दुबारा दे कर 1925 में उत्तीर्ण होने के बाद उन्होंने अपने ही बलबूते पर मछलीपट्टणम के नोबेल कालेज में बी॰ए॰ पढ़ना प्रारंभ किया था। इसी समय पत्रकारिता उनकी आज़ीविका का संसाधन बन गयी थी।

नार्ला जी सामयिक परिस्थितियों पर प्रतिक्रिया में अपने विचार प्रकट करने में कभी संकोच नहीं करते। उनके विचार स्वाभिमान और देश-प्रेम से प्रभावित थे। पहली बार 1929 में उनका एक पत्र, जो संपादक मद्दूरि अन्नपूर्णय्या के नाम पर भेजा गया था, वह लेख के रूप में साप्ताहिक पत्रिका "कांग्रेस" में "युवा मित्र की वेदना" नामक शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। यह वह तेलुगु साप्ताहिक पत्रिका थी, जो कांग्रेस के सिद्धांतों के प्रचार के साथ अंग्रेजी शासन को अस्वीकार करती थी और राजमंद्री के सीतानगर स्थित गौतमी सत्याग्रह आश्रम से निकलती थी। इस में प्रकाशित खतनुमा लेख में नार्ला जी ने कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन के निर्णयों पर रोष प्रकट करते हुए मद्रास अधिवेशन में पारित प्रस्तावों में किये गये संशोधनों का विरोध किया था।

शुरू में कांग्रेस के गरम दल से संबंद्ध नार्ला जी के अनेक लेख उस समय की "कांग्रेस", "भारती", "प्रजामित्र", कृष्णा पत्रिका" आदि लब्धप्रतिष्ठित तेलुगु पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए थे। इन पर लाला लाजपतराय और बाल गंगाधर तिलक का प्रभाव था। अंग्रजी में भी उनके रूपक-लेख अक्सर प्रमुख स्वतंत्रता सेनानी पट्टाभि सीतारामय्या की "जन्मभूमि", सरोपचंद की "दि पीपुल्स", तिलक की "मराठा" में छपते थे। नमक सत्याग्रह के दौरान "जन्मभूमि" में प्रकाशित नार्ला जी के एक अंग्रेजी लेख ने बड़ा विवाद खड़ा कर दिया था। इस में उन्होंने अंग्रेजों को भारत के दामाद बता दिया और कहा था कि भारत में यदि अंग्रेजी शासन जारी रहेगा तो उनकी आबादी बढ़ जाएगी और भारतीय संस्कृति प्रदूषित हो जाएगी।

इस लेख से क्रुद्ध हुए सहायक पुलिस निरीक्षक हेमिल्टन ने मौका पा कर कौतारम में नार्ला जी के घर की तलाशी ली और उन्हें तीसरे दर्जे के हथकंडे पहना दिये थे। इस अमानवीय और अनैतिक कार्य की प्रतिक्रिया में नार्ला जी ने "कृष्णा पत्रिका" के संपादक मुट्नूरि कृष्णा राव और मछलीपट्टणम के डाक्टर अहोबल राव की मदद से सहायक पुलिस निरीक्षक और पुलिस निरीक्षक दोनों पर तीन हजार एक सौ रुपये की मानहानि का मुकदमा चलाया था।

इस घटना के बाद नार्ला जी पर कम्युनिस्टों की छाप लगी थी। कम्युनिस्टों की भूमिगत पत्रिका "स्वतंत्र भारत", जो साइक्लोस्टाइल की थी, उसे स्वाधीनता संग्राम काल में निकालने, उसके लिए लेख लिखने और उसे पाठकों में वितरित करने में उन्होंने प्रमुख भूमिका निभायी थी। अपने

*हिंदी प्राध्यापक, हिंदी शिक्षण योजना, विजयवाड़ा

निवास गांव कोताराम से 1930-31 के बीच साइक्लोस्टाइल की एक और साप्ताहिक "मातृभूमि" के निकालने में भी उनका सहयोग था।

नार्ला जी में पत्रकार की प्रतिभा के साथ लेखक और कवि की प्रतिभा भी थी। उन्होंने 1934 में बी०ए० उत्तीर्ण होने के बाद बनारस जा कर एम०ए० करने की तमन्ना त्याग दी और मछलीपट्टणम् के अपने मित्रों की आर्थिक सहायता से "स्वदेशी संस्थानालु" (स्वदेशी राजवाड़े) पुस्तक तेलुगु में प्रकाशित करवायी। इस पुस्तक से नार्ला जी की लेखकीय छवि मुखरित हुई। छह महीने के बाद उन्होंने अपनी दूसरी पुस्तक "नेटि रष्या") आज का रूस), जो 104 पृष्ठों की थी, उसे अपनी बहन के कंगन बेच कर छपवाया था। लेकिन प्रकाशन के तुरंत बाद इस पुस्तक पर अंग्रेजी सरकार ने प्रतिबंध लगाया था। फिर भी इस पुस्तक के कुछ अंश लेखों के रूप में काशीनाथुनि नागेश्वर राव की "भारती" और गूडवल्ली रामब्रह्मम की "प्रजामित्र" पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए।

आर्थिक स्थिति, असंतुष्टि और अंग्रेजी पत्रकारिता के प्रति रिझाव के कारण मछलीपट्टणम से प्रकाशित गद्दे लिंगय्या की साप्ताहिक "प्रभा" और जयंती वेंकट नारायण की "ज्योति" पत्रिकाओं के एक-दो अंकों के लिए काम करने के बावजूद भी नार्ला जी मद्रास आने के लिए विवश थे। जुलाई, 1935 में मद्रास पहुंचने के बाद उन्होंने गोगिनेनी रंगनायकुलु (आचार्य एन०जी० रंगा) की संस्तुति के जरिये "हिन्दुस्तान टाइम्स" और "इंडियन एक्सप्रेस" में काम करने के लिए विफल प्रयास किये थे। तब आचार्य एन०जी० रंगा मद्रास में तेलुगु साप्ताहिक पत्रिका "प्रजाबंधु" के संपादक थे। उन्हीं की सलाह पर "इंडियन एक्सप्रेस" के संपादक संतानम से नार्ला जी की बात भी हुई थी। लेकिन उन्हें तत्काल नौकरी नहीं मिली। इस से नार्ला जी निराश नहीं हुए। उन्होंने पिंजली सुब्रह्मण्य शेट्टी की "समदर्शिनी", टंगुटूरि प्रकाशम की "स्वराज्य", पिठापुरम राजा की "जनवाणी" "गूडवल्ली रामब्रह्मम की "प्रजामित्र" आदि साप्ताहिक और पाक्षिक पत्रिकाओं के संपादकीय विभागों में तरह-तरह की अंशकालीन और अल्पकालीन सेवाओं से कुछ दिन बिताये थे।

इस उद्योग पर्व में नार्ला जी का विवाह प्रमुख तेलुगु रंगमंच कलाकार चेकूरि पेद सत्यनारायण की सुपुत्री सुलोचना के साथ 24 अप्रैल, 1930 को मद्रास में हुआ। "प्रजामित्र" के संपादक गूडवल्ली रामब्रह्मम, जो प्रमुख तेलुगु फिल्म निर्माता भी थे, उन्होंने नार्ला जी के घर बसाने में और अगस्त, 1938 में "इंडियन एक्सप्रेस" के तेलुगु संस्करण "आंध्रप्रभा" के उप-संपादक बनने में बड़ी मदद की थी।

नार्ला जी के जून, 1942 में संपादक बनने के बाद "आंध्रप्रभा" की पूरी काया पलट गयी। उन्होंने दैनिक पत्र के संपादकीय लेखों की संयत शैली में ऐतिहासिक घटनाओं के उद्धरण देने की प्रविधि का प्रारंभ किया था। साथ ही संपादकीय लेखों और समाचारों की विषयवस्तु की सीमाओं के बंधनों को तोड़ कर वे विविधता भी लाये। उन्होंने साधारण सामयिक विषयों पर उच्च कोटि के संपादकीय लेख लिखकर जनता को आकर्षित किया, उनमें पठन-शक्ति को उद्दीप्त कर दिया और सांस्कृतिक, आर्थिक और शैक्षिक जागृति भी पैदा की। "आंध्रप्रभा" दैनिक पत्र के माध्यम से नार्ला जी के बाढ़ और सूखा पीड़ित लोगों के लिए राहत और सहायता जैसे सामाजिक सेवा कार्य भी आरंभ हुए थे। राग तत्वों से प्रभावित होकर सामाजिक द्वंद्व से भिड़ने की उनकी प्रबल प्रवृत्ति के कारण "आंध्रप्रभा" के अनेक अंकों की प्रतियां समय-समय पर आपराधिक तत्वों की क्रोधाग्नि को आहूत हुई। निज़ाम सरकार ने अपनी रियासत में इस दैनिक पत्र का प्रवेश निषिद्ध कर भी दिया था।

नार्ला जी का भाषा संबंधित दृष्टि-कोण अत्यंत प्रासंगिक और तर्कसंगत है। उनका यह दृष्टि-कोण हिन्दी पत्रकारिता में बाबूराव विष्णु पराड़कर जी के दृष्टिकोण के समान है। उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय अंग्रेजी शब्दों के आधार पर युनाइटेड नेशनल आर्गेनाइजेशन का "ऐक्यराज्य समिति" (अंतर्राष्ट्रीय संघ), युनेस्को का "प्रपंच विज्ञान समिति" (अंतर्राष्ट्रीय शैक्षिक वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन), नॉन-एलाइन्ड का "अलीन" (गुटनिरपेक्ष) ऐसे अनेक तेलुगु शब्दों का निर्माण किया था। जो कि ये शब्द अर्थ और स्वनिम के स्तर पर शतिप्रतिशत संप्रेषणीय होने के साथ आम जनता की जबान पर ठीक उतर गये थे।

नार्ला जी ने तेलुगु व्याकरण का परिमार्जन भी किया था। उन्होंने कर्ता के साथ संबंध कारक "योक्क" का प्रयोग समाप्त कर दिया था और संयुक्त क्रियाओं के स्थान पर सरल क्रियाओं के प्रयोग पर बल दिया था। परिणाम स्वरूप आज "चेयबडिंदि" (की गयी है), "व्रायबडिदि" (लिखी गयी है), "तेलिय जेशारू" (बता दिये हैं), आदि क्रिया पदों में "बाडिंदि (गयी) और "जेशा" (दिये) का लुप्त हो गया है। तेलुगु में 1910 के आस-पास गिडुगु राममूर्ति जी ने जन-भाषा आंदोलन का जो प्रारंभ किया था। उसे नार्ला जी ने सफल बनाया था।

"आंध्रप्रभा" के संपादक पद से सेवानिवृत्त होने के बाद नार्ला जी ने तेलुगु दैनिक "आंध्र ज्योति" के प्रकाशन के लिए पूरी तैयारियां करवायीं। विजयवाडा से जून, 1960 में "आंध्रज्योति" का प्रकाशन आरंभ हुआ था। उनके सोलह वर्ष के संपादन में इस दैनिक पत्र का सर्वांगीण विकास हुआ। उन्होंने इस दैनिक पत्र के भवितव्य को ध्यान में रख कर "आपात काल" विदेशों में व्यतीत किया और 1977 में इस दैनिक के संपादक पद को त्याग दिया।

नार्ला जी का देहांत तेलुगु दैनिक पत्रों की रंगीन छपाई आरंभ होने के दो वर्ष पूर्व 16 फरवरी, 1985 को हैदराबाद में हुआ। उनका अधिकांश जीवन मुद्रण माध्यम में ही बीता। फिर भी उन्होंने स्वयं को उद्भासित करने के लिए मुद्रण माध्यम का इस्तेमाल नहीं किया। तेलुगु में उनके महत्वपूर्ण योगदान के कारण वे दो बार 1958 और 1964 में राज्य सभा के लिए चुने गये थे और आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु राज्य सरकारों तथा केन्द्रीय सरकार के अनेक साहित्यिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक संगठनों के अध्यक्ष भी बने थे। कई स्वयंसेवी संस्थाओं ने उन्हें अपनी संस्था की सदस्यता भी दी थी। आंध्र और श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालयों ने उन्हें डी०लिट्० की मानद उपाधि देकर सम्मानित भी किया था।

अक्सर नार्ला जी अपने विलक्षण तर्कों से जनता को जागृत करते थे। उन्होंने हिन्दी को "भारती" नाम देने का सुझाव देकर हिन्दी के प्रति अपनी सद्भावना प्रकट की थी। दक्षिण भारत में हिन्दी के प्रचार-प्रसार और उसके विकास के लिए उन्होंने राज्य सभा में उसमानिया विश्वविद्यालय को दक्षिण भारत का हिन्दी विश्वविद्यालय बनाने का विरोध करते हुए यह दर्जा दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा को देने की मांग की थी।

नार्ला जी की इस द्वंद्वात्मक जीवन यात्रा में तेलुगु की बीस और अंग्रेजी की बारह पुस्तकें निकली हैं। इन में कुछ पद्य भी हैं और गद्य भी। गद्य में निबंध, नाटक, एकांकी, कहानी साहित्य प्रमुख है, जो तेलुगु का है और

अंग्रेजी में वेमना, वीरेशलिंगम, गुरजाड़ा, जो समाज सुधारक और तेलुगु साहित्यकार थे, उनकी जीवनियां।

नार्लाजी सिद्धांत रूप में जितना प्रतिबद्ध व्यक्ति थे, उतने ही मानवीय दृष्टि से सिद्धांतों का अतिक्रमण भी करते थे। उन्होंने किसी पार्टी या दल विशेष का समर्थन नहीं किया। यदि किया है तो सिद्धांतों का और विचारों का। वह भी अपनी ही शैली के सोच-विचार और निष्कर्ष के बाद। इसलिए वे अपने जीवन काल में केवल न कांग्रेसी हुए, न समाजवादी हुए और न ही कम्युनिस्ट। हुए थे मानवतावादी। उनके मानवतावादी दर्शन में कांग्रेस का आदर्शवाद है, समाजवादियों की समिष्टि गंध है और कम्युनिस्टों के द्वंद्वात्मक भौतिकवाद की महक।

आज उनकी सैद्धांतिक और कला-साहित्य-समाराधना का परिचय देता है—हैदराबाद के बंजारा हिल्स स्थित नार्ला जी का निवास गृह "लुंबिनी", जो बीस हजार से अधिक पुस्तकों, विभिन्न कलाकृतियों और ज्ञापिकाओं से शोधार्थियों के लिए संदर्भ-ग्रंथों का केंद्र बन गया है।

स्वतंत्रता पूर्व और स्वातंत्र्योत्तर काल में राष्ट्रीय भावना से देश के विकास के लिए जनता को जागृत करने में नार्ला जी की भूमिका अतुलनीय और अविस्मरणीय है। इस में कोई संदेह नहीं है कि उनके स्मरण से हमें नई स्फूर्ति मिलती है।

संदर्भ-ग्रंथ

1. डॉ॰ एन॰ इन्नय्या, वी॰आर॰ नार्ला जीवितम-अनुभवालु (तेलुगु), 1987, तेलुगु विश्वविद्यालय हैदराबाद।
2. डॉ॰ वी॰ लक्ष्मण रेड्डी, तेलुगुलों पत्रिका रचना (तेलुगु), 1988, लक्ष्मी पब्लिकेशन्स, विजयवाडा।
3. रापोलु आनंद भास्कर, जर्नलिज़म चरित्रा-व्यवस्था (तेलुगु), 1988, उदयम पब्लिकेशन्स हैदराबाद।

पृष्ठ 19 का शेषांश

जिस्ट टेक्नालाजी की इस बुनियादी उपलब्धि के आधार पर भारतीय भाषाओं के लिए कई कंप्यूटर साधन विकसित किए गए हैं। भारतीय भाषाओं के लिए लिप्यंतरण की सुविधा सहज उपलब्ध हो गई है, जिसके अनेक लाभ हैं। जिस्ट टेक्नालाजी डेस्क टॉप पब्लिशिंग के साधन भी तेजी से उपलब्ध करा रही है। देवनागरी, उड़िया तथा तिब्बती के बढ़िया फांट बन रहे हैं। इनमें से कुछ पैकेजों को सेमिनार के दौरान प्रस्तुत किया जा रहा है।

जिस्ट दल की एक उल्लेखनीय उपलब्धि है—**हिंदी स्पेल-चेकर।** इसके लिए करीब 70 हजार शब्दों का कोश तैयार किया गया है। इसके जरिए आप अपने पाठ को संशोधित कर सकते हैं, शब्दों के हिज्जे ठीक कर सकते हैं। मराठी के लिए भी स्पेल-चेकर बन गया है। आगे जाकर अन्य भारतीय भाषाओं के लिए भी स्पेल चेकर बनेंगे।

जिस्ट टेक्नालाजी की एक नई महत्वपूर्ण उपलब्धि है—**इलेक्ट्रानिक उप-शीर्षक रिसीवर।** आज यदि कोई फिल्म या वीडियो कार्यक्रम मूलतः हिंदी में बनता है और उसे अंग्रेजी के दर्शकों के लिए प्रस्तुत करना होता है, तो उसके दो उपाय हैं—संवादों को या तो अंग्रेजी में 'डब' किया जाता है या नीचे उप-शीर्षकों के रूप में प्रदर्शित किया जाता है।

मगर अब जिस्ट के प्रयास से एक ऐसी व्यापक टेक्नालाजी उपलब्ध हो गई है जिससे एक ही टी॰वी॰ या वीडियो कार्यक्रम को देश के अलग-अलग प्रदेशों के दर्शक अपनी-अपनी भाषाओं के उप-शीर्षकों के देख सकते हैं। यह एक क्रांतिकारी उपलब्धि है और इसके उपयोग की बहुत व्यापक संभावनाएं हैं।

हालांकि हमारे देश में भी कंप्यूटर अब आम साधन बनते जा रहे हैं, फिर भी भारतीय भाषाओं के लिए इनके उपयोग को लेकर कइयों के मन में कई प्रकार की शंकाएं उत्पन्न होती हैं। कंप्यूटर को प्रायः एक बहुत नाजुक मशीन समझा जाता है।

जिस्ट टेक्नालाजी ने भारतीय भाषाओं के लिए काफी उन्नत कंप्यूटर साधन मुहैया करा दिए हैं। अब आवश्यकता है इन्हें बड़े पैमाने पर अपनाने की। सरकारी कामकाज में इन साधनों को अपनाना परमावश्यक है। उससे भी अधिक जरूरी है लेखकों, संपादकों, पत्रकारों, प्रकाशकों और मुद्रकों द्वारा इन्हें बड़े पैमाने पर अपनाया जाना। जो उन्नत कंप्यूटर-साधन आज अंग्रेजी के लिए उपलब्ध हैं उन्हें यदि हम अपनी भारतीय भाषाओं के लिए अपनाते हैं तभी हिंदी, तमिल आदि हमारी भाषाएं अधिक समर्थ बनेंगी, गौरवान्वित होंगी।

(दैनिक हिंदुस्तान दिनांक 20 जनवरी 1993 से साभार)

पृष्ठ 23 का शेषांश

समय विकसित हो चुके थे। विदित हो कि इस समय साहित्य की प्रमुख भाषा ब्रजभाषा थी। उसका भाव साहित्य से होकर तकनीकी क्षेत्रों में पहुंचने लगा था। गणित के क्षेत्र में भी अनेक ग्राम्य प्रयोग भाषा में प्रविष्ट हो चुके थे, कमरे, मजूर, पहुंचा, इग्यारही, पंचसेरी, चाह, बौभाई, अटैया, घटाय, भये, नीच ले, ठौर, गुड़ावना, भींत, तिसके, लग आदि कुछ ग्राम्य प्रयोग हैं। **इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि ग्राम्य बोलियों में वैज्ञानिक साहित्य का सृजन संभव है।**

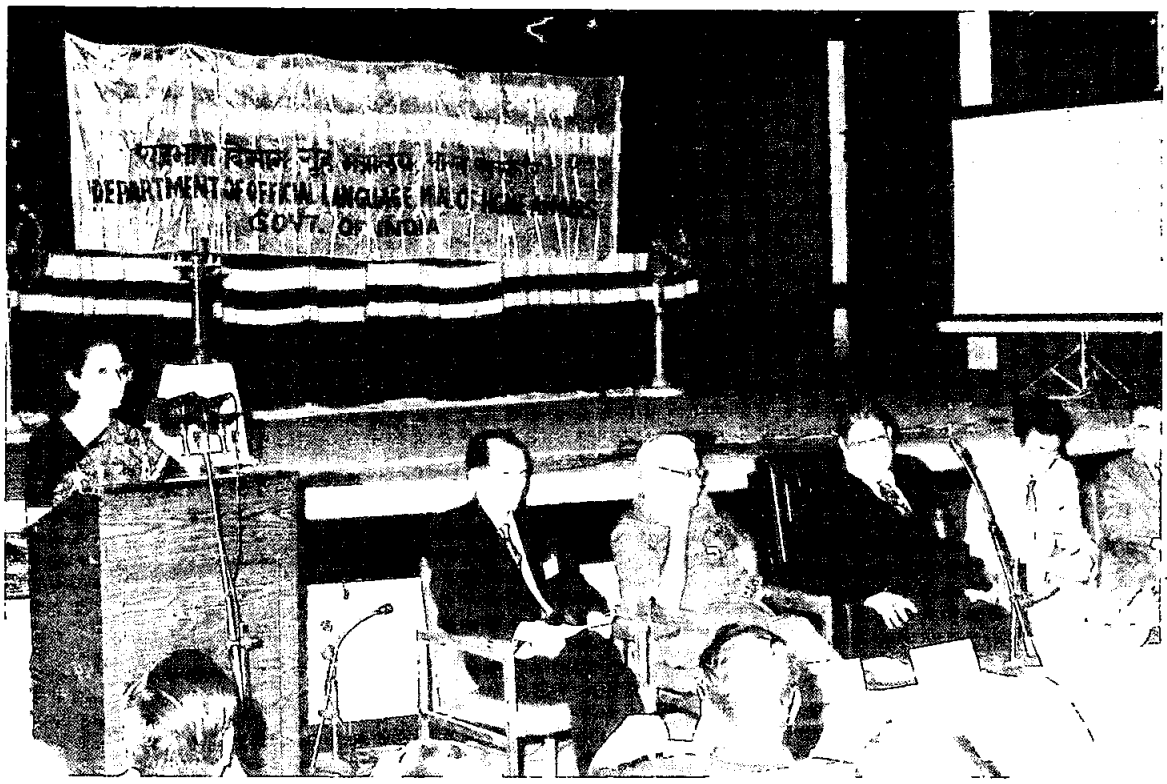

सिकन्दराबाद : कम्प्यूटरों के द्विलिपीय संचालन विषय पर आयोजित संगोष्ठी के विषय पर मंचासीन, बाएं से श्री बृजमोहन सिंह नेगी, श्री चंद्रधर त्रिपाठी सचिव (राजभाषा) तथा विशेष अतिथि श्री देवेन्द्र चंद्र मिश्र, महाप्रबंधक (दक्षिण रेलवे)।

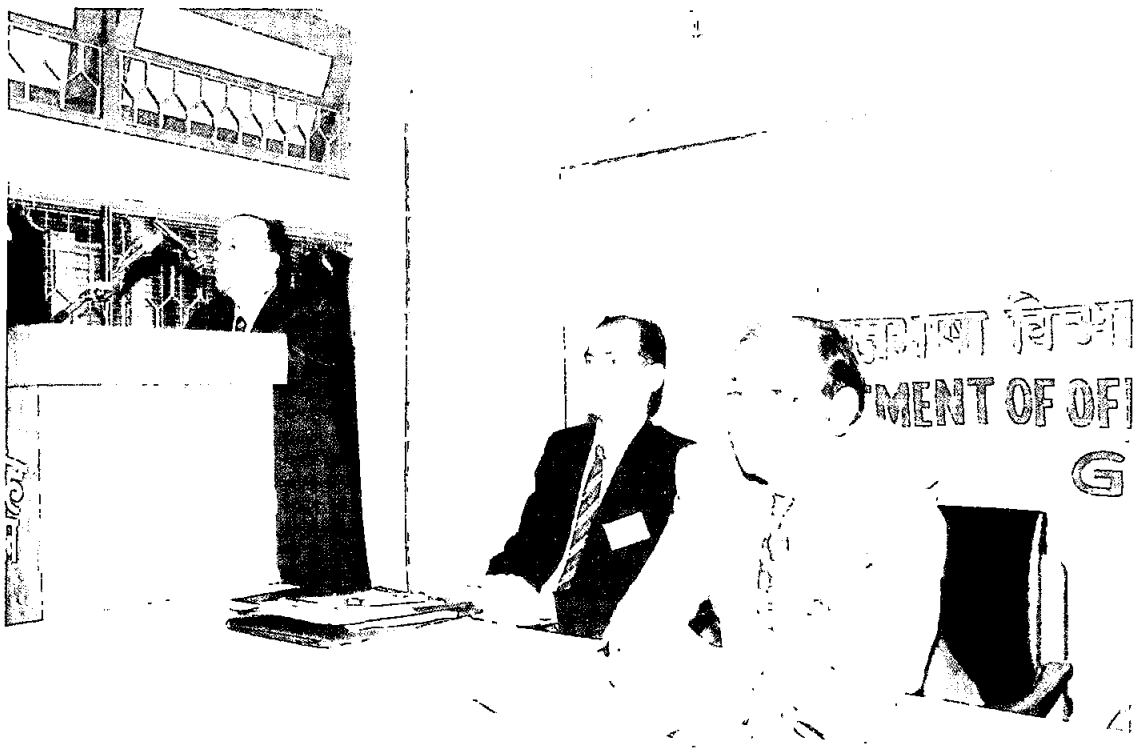

पटना में आयोजित संगोष्ठी को संबोधित करते हुए श्री देव पार्थ सारथी, मुख्य डाक महाध्यक्ष। साथ में मंच पर श्री बृजमोहन सिंह नेगी, निदेशक (तकनीकी), गृह मंत्रालय, श्री ए० एन० गांधी (बैंक आफ इंडिया)।

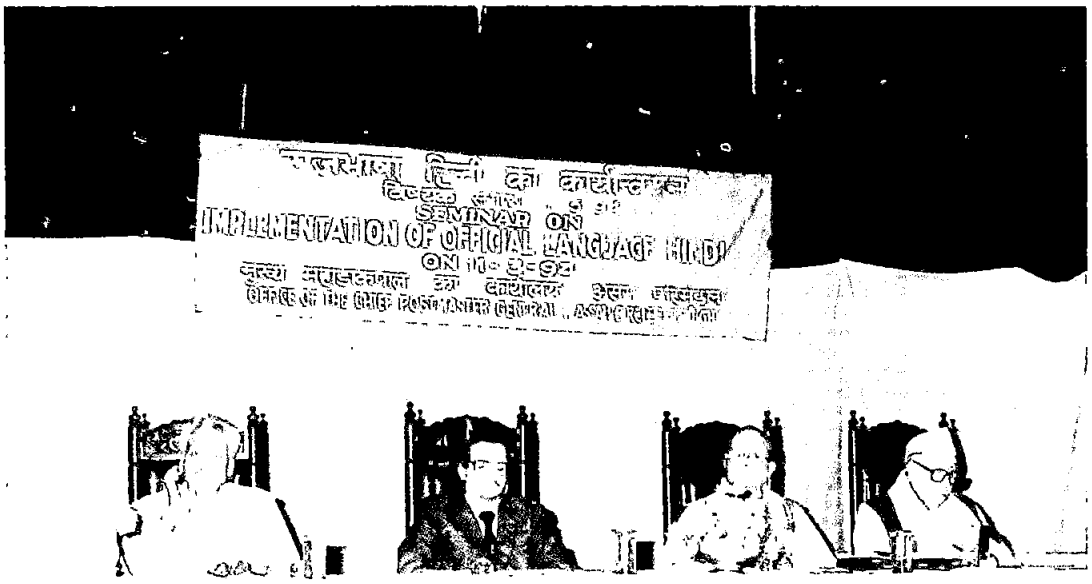

गुवाहाटी राजभाषा संगोष्ठी में मंचासीन बाएं से डा० चतुरबुद्ध सहाय, श्री ए० के० चक्रवर्ती के प्रख्यात साहित्यकार डा० वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य तथा श्री रजनीकान्त चक्रवर्ती (हिंदी सेवी)।

भारत तिब्बत सीमा पुलिस, महानिरीक्षक से राजभाषा शील्ड ग्रहण करते हुए सहायक कमांडेंट दूरसंचार श्री बी० बसाख।

मेरठ आयकर आयुक्त, श्री भैरवनाथ सिंह से हिंदी में श्रेष्ठ कार्य निष्पादन की वैजयन्ती लेते हुए केनरा बैंक के मंडल प्रबंधक श्री टी० चौककलिंगम।

देहरादून : वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद के हिंदी अधिकारियों की कार्यशाला का दीप जलाकर उद्घाटन करते हुए मुख्य अतिथि डा० गिरिजाशंकर त्रिवेदी। साथ में (बाएं से) श्री हनुमंत लाल, डा० गिरीश चंद्र मिश्र तथा डा० आर० पी० महरोत्रा।

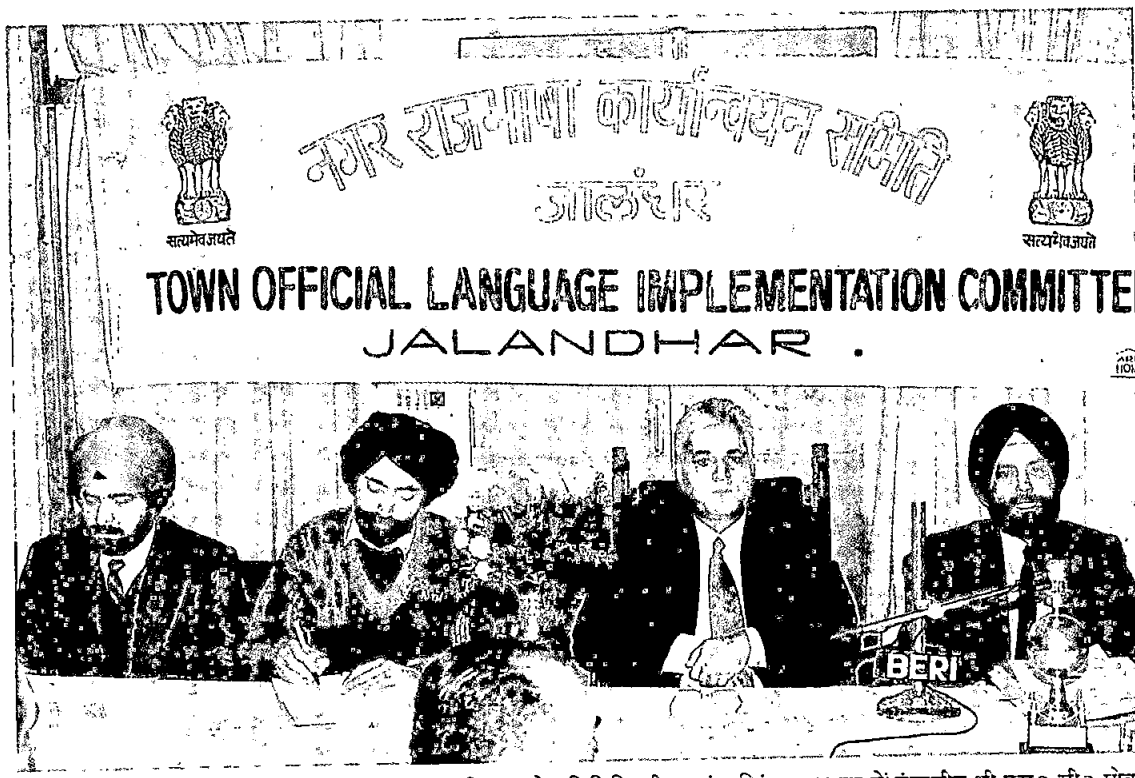

जालंधर में नराकास को संबोधित करते हुए राजभाषा विभाग के प्रतिनिधि श्री जसवंत सिंह तथा साथ में मंचासीन श्री एस० सी० ग्रोवर, आयकर आयुक्त जालन्धर।

गुन्टूर :—बैठक को संबोधित करते हुए राजभाषा विभाग के निदेशक (अनुसंधान) श्री राजकुमार सैनी तथा साथ मंचासीन बाएं से श्री डी० के० पाणिकर, क्षेत्रीय उप निदेशक श्री एम० वी० आर० प्रसाद आयकर आयुक्त तथा अन्य अधिकारीगण।

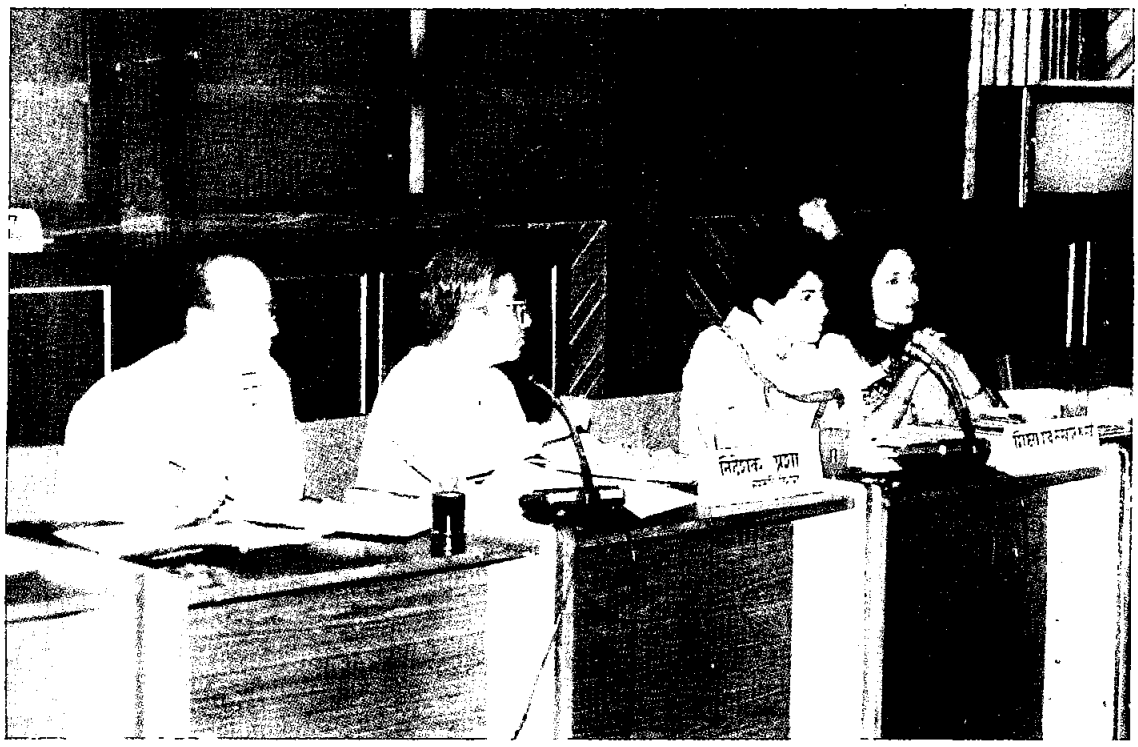

नई दिल्ली संस्कृति विभाग की हिंदी सलाहकार की बैठक में (दाएं से) श्रीमति कोमल आनंद, संयुक्त सचिव, शिक्षा एवं संस्कृति उप मंत्री कुमारी शैलजा, श्री जी० वेंकटरमन निदेशक (प्रशा०) तथा श्री राजेन्द्र सिंह उप निदेशक।

बोकारो स्टील प्लांट में राजभाषा पक्ष का उद्घाटन करते हुए डा० एन० सुन्दरम।

दिल्ली : निदेशक, दूरसंचार श्री आर० के० पंडित से हिंदी में सर्वश्रेष्ठ कार्य निष्पादन का पुरस्कार ग्रहण करते हुए श्री दुर्गानन्द दास।

इन्दौर : नराकास को संबोधित करते हुए राजभाषा विभाग के उप निदेशक श्री रनजीत कुमार सेन।

अहमदाबाद : पुरस्कार वितरण समारोह में दाएं से नराकास अध्यक्ष, श्री डी. के. जडेजा, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग के उपसचिव श्री कृष्ण चन्द्र श्रीवास्तव, गुजरात विद्यापीठ के उपकुलपति श्री रामलाल पारीख तथा उप निदेशक (का०) श्री कृष्ण नारायण मेहता।

बंबई : रिफाइनरी में हिंदी उत्सव पर आमंत्रित कवि का स्वागत करते हुए मुख्य महाप्रबंधक श्री एस. के. मुखर्जी।

नई दिल्ली हिंदी पुरस्कार वितरण समारोह का उद्घाटन करते हुए श्री एस० सी० महालिक अपर सचिव एवं वित्त सलाहकार, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, साथ में बाएं से श्री एस० वी० शर्मा, मु० ले० नि० तथा श्रीमती सुनीता कैला, ले० नि०।

साहित्यिकी

नर और नारी की समान सहभागिता: अर्द्धनारीश्वर

—विष्णु प्रभाकर*

[श्री विष्णु प्रभाकर हिन्दी के वयोवृद्ध कथाकार हैं। इस वर्ष उन्हें 'अर्द्धनारीश्वर' शीर्षक महाकाव्यात्मक उपन्यास के लिए साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिला है। प्रस्तुत है उक्त उपन्यास के बारे में लेखकीय वक्तव्य। — संपादक]

अर्द्धनारीश्वर एक सार्थक मिथक है और जिस विषय को लेकर मैंने यह उपन्यास लिखा है उसके लिए तो इससे अधिक सार्थक और अर्थगर्भित नाम हो भी नहीं सकता था। एक युग से मेरे मन में नर-नारी के सम्बन्धों को लेकर जो मंथन चला आ रहा था, उस मंथन को तब और भी सार्थकता मिली जब मैंने कथा-शिल्पी शरत् चन्द्र की जीवनी लिखने के लिए सामग्री की तलाश में 14 वर्ष तक खोज-यात्रा की।

इस अवधि में मैंने निरन्तर यह अनुभव किया कि किसी भी काल में, किसी भी देश में, किसी भी समाज में नारी को समानता का दर्जा नहीं मिला। न ही उसकी स्वतन्त्र सत्ता को स्वीकार किया गया। मां कहकर हमने उसकी पूजा अवश्य की लेकिन यह भूल गए कि मां होने से पहले वह पत्नी होती है और पत्नी को व्यावहारिक जीवन में कभी समानता का दर्जा नहीं मिला। हां, पौराणिक साहित्य में एक अपवाद अवश्य मिला। सृष्टि की उत्पत्ति, उसकी देखभाल के लिए हमने प्रजापति के तीन रूपों की अवधारणा की; ब्रह्मा, विष्णु, महेश। इनमें महेश, शिव, महादेव, शंकर और रुद्र आदि अनेक नामों से जाने जाते हैं। इन तीनों में मुझे केवल शिव ही एक ऐसे देवता मिले जिन्होंने सचमुच, नारी को समानता का दर्जा दिया और उसकी स्वतन्त्र सत्ता को सच्चे मन से स्वीकार किया। यह कहानी सर्वविदित है इसलिए विस्तार में नहीं जाना चाहूंगा। केवल इतना कहना चाहूंगा कि उनका एक रूप है अर्द्धनारीश्वर।

यही कल्पना बचपन से मेरे मन को बार-बार आकर्षित करती रही, इसीलिए जब मैंने यह उपन्यास लिख लिया तो सहसा शीर्षक के रूप में यह नाम मेरे सामने आया। मुझे लगा कि मेरी जो कल्पना है उसको यही एक नाम सही अर्थ दे सकता है।

मैंने अपने इस उपन्यास में कहीं किसी पौराणिक-कथा का सहारा नहीं लिया है। यह तो विशुद्ध सामाजिक कृति है। इस बात की तलाश करते हुए कि नारी को उसकी स्वतन्त्र सत्ता किस प्रकार प्राप्त हो सकती है। इसमें हमारे समाज में प्रचलित चिर-परिचित जाति-पांति और धर्म की समस्या, विवाह-तलाक, बलात्कार की समस्या, नारी-शोषण उत्पीड़न, टूटते-बिखरते जीवन की कहानी, सब हैं। किन्तु जैसा कि इस कृति का परिचय देते हुए एक नारी ने स्पष्ट लिखा है कि यह सब होने पर भी मुक्ति के लिए किसी 'कोई तो' की प्रतीक्षा नहीं है। केवल समाधान की ओर इंगित भर है, समाधान नहीं है। मंजिल की तलाश है, मंजिल नहीं है। तलाश में बहुत से प्रश्न उभरते हैं उनका उत्तर देने में समाधान का संकेत भर मिल सकता है।

जैसा मैंने कहा अर्द्धनारीश्वर का अभिप्रेत नारी और नर की समान सहभागिता को प्राप्त करना है। इसलिए जरूरी है एक दूसरे को अपनी-अपनी दुर्बलता और सबलता के साथ स्वीकार करना तथा मान लेना कि रचना के लिए प्रकृति व पुरुष का मिलन भी जरूरी है।)

यह शब्द मेरे नहीं एक नारी के हैं जिसने इस उपन्यास को पढ़ा। उसने तो लेखक के अन्तर में बैठकर यह घोषणा की है कि मूल समस्या तो पुरुष की है, उसके पौरुषिक अहम् की जो उसे बेचारा बना देती है। सहज तो उसे ही बनना है। उसी की असहजता से स्त्री बहुत से बन्धन तोड़कर आगे निकल आई हैं। लेकिन बन्धनहीन होने का अर्थ उच्छृंखल होना नहीं है। यह लेखक का अभिप्रेत भी नहीं है, बल्कि बन्धन की जकड़न को समाप्त कर प्रत्येक सुर को उसका यथोचित स्थान देकर जीवन-राग का निर्माण करना है।

इस कृति का एक पात्र है अजित। स्वीकार करूंगा उस पात्र में मैंने अपने को ही आरोपित किया है। वह एक स्थान पर कहता है, "मैं सुमिता को अर्थात् अपनी पत्नी को अपनी दासता से मुक्त कर दूंगा, मैं उसकी दासता से मुक्त हो जाऊंगा तभी हम सचमुच पति-पत्नी हो सकेंगे।" इसी स्वयं की दासता से मुक्ति का नाम है—अर्द्धनारीश्वर।

इस उपन्यास को पढ़ते हुए दो वाक्य बार-बार सामने आते हैं। एक लेबनान के प्रसिद्ध चिन्तक खलील जिब्रान का, वह पति-पत्नी, दोनों से कहता है कि, 'तुम एक-दूसरे का प्याला भरो, एक-दूसरे के प्याले से पियो नहीं।" इसी तरह पांडिचेरी के अरविन्द-आश्रम की श्री मां का एक वाक्य है, "जब तक नारी पुरुष के बल के आकर्षण से मुक्त नहीं होती, तब तक

शेष पृष्ठ 51 पर

*818, कुडेवालान, अजमेरी गेट, दिल्ली-110006

जैनेन्द्र को जैसा जाना और अब जाना

प्रदीप कुमार*

(यह लेख जैनेन्द्र जी के सुपुत्र श्री प्रदीप कुमार ने विशेष रूप से राजभाषा भारती के लिए भेजा है। संपादक)

सच मानिये बहुत टालता रहा बाबूजी पर (जैनेन्द्र जी) पर लिखने से। क्यों बचता रहा? सोचता हूँ तो यही कि लिखूं तो कैसे? बाबू जी और अपने में किसी भी तरह की दूरी नहीं देख पाया हूं, फिर लिखना किस पर? फोटोग्राफर जिसका अक्स या चित्र लेना चाहता है क्यों नहीं उसमें बैठ जाता? क्यों दूरी रखता है? अब समझ में आता दीखता है कि कुछ लिखने या रचने के लिए तटस्थता क्यों जरूरी है? इसी से शायद बर्कलें ने लिखा है, "हम जुलूस को सबसे अच्छी तरह भी देख सकते है, जब हम उसमें से कोई न होकर उससे अलग एक हों।" मेरा सबसे बड़ा संकट यही था कि वे इतने समीप... उनसे तटस्थ कैसे हुआ जाये। इसी से न लिखना सहज मालूम होता और लिखना समस्या।

छोटा-सा कमरा करीब 10×15 फीट का। एक तरफ तख्त था, और बैठे थे बाबू जी धीर-गम्भीर-से। तभी किसी ने कमरे से लगे जीने के दरवाजे को खटखटाया, और कहा "जैनेन्द्र जी है?"

मैंने कहा, 'कहिये।' देखता हूं वे कमरे में आ धमके हैं और बाबूजी से बतियाने लगे कि मैंने सात साल में आठ पाण्डुलिपियां तैयार की हैं। यह उपन्यास है, इस पर आपके आर्शीवचन चाहता हूं।

"हां, हां, दीजिये, देखूंगा, पर इतना आप कैसे लिख गये? क्या करते हैं?"

बातों-बातों में सज्जन कुछ रूआंसे से हो आये। देखा कि वे ढाढ़स दे रहे थे और मैं सोचता रहा कि यह सब क्या है? कुछ तौर-तरीका होना चाहिए। समय लें और आयें। ठीक है... कि तभी वे सज्जन उठे और चलने-से लगे। बाद में देखा कि उपन्यास क्या था कि वही सस्ता रोमांस, किस्सा तोता-मैना का और पृष्ठ थे हस्तलिखित 400-500 तक। बाबू जी के सामने थी वह पाण्डुलिपि और सोच में थे कि कैसे कहां से उसे संभाला जाये। यह उनकी निर्दयता ही नहीं थी क्या? कितने ही बन्धु आते थे पर स्नेह, आत्मीयता और हार्दिकता से शायद ही कोई अछूता रह पाया हो।

कमरे में तख्त है, और हैं इनी-गिनी कुर्सियां। किताबें हैं कुछ, वे भी सलीके से नहीं। बाबू जी के खिचड़ी-से बाल इधर-उधर बिखरे हुए। गर्मी है तो पहने हैं बनियान और पाजामा, अन्यथा कुरता और पायजामा। सर्दी रहे तो पैरों पर रजाई अथवा कम्बल ही सही। कभी पैर पसारे हुए या कभी घुटने मोड़े हुए। बैठे या अधलेटे और बतिया रहे थे। बैठे थे केन्द्रीय प्रशासन के मंत्री महोदय और कुछ पत्रकार व लेखक बन्धु। मुझे कोफ्त होती थी कि भई कुछ सलीके से बैठें। लेटना हो तो लेटें, पर न लेटे हैं और न ही बैठे हैं। पर यह सब क्या? देखता रहा कि चर्चा किसी गम्भीर साहित्यिक-बिन्दु पर आकर टिकी थी। न बाबूजी को ही इसका भास था, न सम्मुख बैठे सम्माननीय बन्धुओं को ही। और चर्चा में सहज ही उतराव-चढ़ाव आ-जा रहा था। बाबू जी अपने से बेखबर, अन्तःस्थल से कौस्तुक मुक्तक खोज-खोजकर उकेरने में ही तन्मय थे।

याद आता है कि बाबू जी ने लगभग 16 वर्ष पूर्व, संभव है सन् 78 ही रहा होगा, बहुत भंयकर पीड़ा भुगती थी। बम्बई से वे भाभी (मां) के साथ दो महीने के उपचार के बाद लौटे थे। सुझाया गया था कि बीच-बीच में चेकअप मेडीकल इंस्टिट्यूट में कराते रहना हितकर होगा। चेकअप के दौरान डाक्टर ने कहा कि कृपया कुरता उतारें और तभी निरीक्षण आदि किया। डाक्टर अत्यन्त अनुभवी और अपने क्षेत्र के यशस्वी थे। चैम्बर में इंस्टिट्यूट के तीन-चार अनुभवी डाक्टर व प्रोफेसर भी थे। निरीक्षक डाक्टर ने कहा, "डा० मिश्रा, आश्चर्य हुआ यह देखकर कि शायद जैनेन्द्र जी ही पहली मिसाल हैं कि खद्दर के कपड़े हैं और बनियान भी खद्दर की ही है। कई प्रसिद्ध लोगों से मुझे मिलना हुआ- राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और बुद्धिजीवी कि ऊपर खद्दर का सफेद झकझक कुरता पहना हुआ और अन्दर वही मिल की मुलायम बनियान।" सभी उपस्थित खूब ठठाकर हंसे, पर बाबू जी शरमा रहे थे और गुलाबी हो आये थे।

बाबू जी की यह सरलता, सहजता और स्वच्छता ओढ़ने-पहनने में ही नहीं झलकती थी बल्कि इसमें वह जीते थे। इसके लिए उन्हें कुछ बनना नहीं पड़ता था, ऐसा वे होते थे। यह है उनके आचरण का इकहरापन। बाहर-भीतर से प्रयास कि समन्वित व्यक्तित्व को पायें। सरलता की यह स्थिति थी कि किसी ने यदि नायलोन के रंगीन बेमेल मौजे खरीद दिये तो वही चल रहे होते। पर अब तो उनका पायजामे की जगह धोती जामा और चल पड़ा था जो पायजामे पर धोती की सुविधा देता। एक दिन बोले, "तुम्हे मालूम है इसमें कुल कपड़ा सवा मीटर के करीब लगता है।" देखता था कि सर्दी के दिनों में रंगीन कोट, चेक, गहरा काला और लाल, बड़े साज-संभाल के साथ पहना जा रहा था। जिसका मेल देखने को भला नहीं दिखता था। उस कोट के पीछे गहरी व्यथा और टीस थी। मेरे बड़े भाई दिलीप जी अनायास हुए पीलिया की बीमारी में हमें छोड़ गये थे। इसकी गहरी पीड़ा उन्हें सालती रहती थे। उनके कोट को पहनकर जैसे

*डी-1/35, भारती नगर, नई दिल्ली-110003

भाई को स्नेह से दुलार रहे थे।

कहते हैं कि दादा जी बाबू जी के पैदा होने के कुछ ही महीने बाद चल बसे थे। दादी जी सूझबूझ वाली साहसी, निर्भीक और विदुषी महिला थीं। भव्य व्यक्तित्व और गौर वर्ण, तीखे नक्श, चौड़ा माथा, जिससे ओज टपकता था। तीखी नाक, प्रखर और बेधती आंखें, विशाल ललाट और गौर वर्ण प्रतीत होता है कि बाजू जी ने जो पाया सो दादी जी से। दादी जी जैन समाज के महिला आश्रम की संस्थापक-संचालिका। साहसी इतनी कि जब उनके भाई (महात्मा) भगवानदीन पंजाब मार्शल लॉ में पकड़े गये, तब वह लाट साहब से मिलने जा पहुँची। इसी प्रकार एक बार बैतूल के अंग्रेज कलक्टर के घर में वे राखी बांधने चली गयी थीं।
और कांग्रेस का चन्दा वसूल कर लायी थीं। वह चन्दा रूपये की शक्ल में नहीं, मेवों की शक्ल में था, जिन्हें उन्होंने आकर स्वयंसेवकों में बांट दिया था। राजनीति में सक्रिय सहयोग देना उनका स्वभाव था। महात्मा भगवानदीन जी तो इनके मामा थे, वह मामा के इतने प्यारे बन गये कि 15 वर्ष की उम्र तक बाबू जी यही न समझ पाये कि मामा उनके मामा थे या कि पिताजी। इतने एकमेक हो गये कि रिश्तेदारों को छोड़कर कोई कभी यह जान ही न पाये कि उनके पिता जीवित नहीं थे। पटवारी परीक्षा पास थे, पर हाथ-पांव पर ही भरोसा करते थे। हिसाब में वे अव्वल थे। कहानी कहते तो सीन खड़ा कर देते। हमारे बाबा जी (महात्मा जी) कहते थे कि उनकी कहानी सुनने में ऐसी अच्छी लगती थी जैसे मुंशी अजमेरी की। क्या ऐसा तो नहीं कि बाबू जी ने कहानी कहने, सुनने और रचने और सृजन की आकांक्षा आदि पायी तो वह संस्कारगत ही हो? गहरी सहिष्णुता, अद्भुत व दृढ़ नैतिक विश्वास और आतिथ्य—निष्ठा में उनकी मां का मौन और मूक संस्कारी मन रचा-बसा रहा हो। महात्मा भगवानदीन जी ने उन्हें समाजोन्मुख और राष्ट्रीय, सार्वजनिक प्रवृत्तियों के लिए आह्वान किया। बाबू जी को मैंने अपने बचपन से लेकर अन्त तक जब कभी गांधी जी के बारे में कुछ कहते, लिखते या सोचते पाया तो मैंने सदा यह महसूस किया कि गांधी जी किस तरह से और किस रास्ते से इनके भीतर गये थे। मुझे ऐसा लगता रहा कि उनमें गांधी जी बाहर से नहीं आये, बल्कि गांधी स्वयं उनके भीतर उपजे थे। जैसे सत्य गांधी के लिए ईश्वर था, ठीक उसी तरह, उसी अनुपात में गांधी उनके लिए एक प्रेमी थे। और अनन्तर वे एक "फिनामिना" ही बन आये थे। इंटिग्रल पर्सनलिटी और अविभाजित व्यक्तित्व की दृष्टि से गांधी जी को वे विशिष्ट व चिन्मय पुरुष मानते थे और जिनके व्यक्तित्व में बीइंग और बिकमिंग में अन्तर नहीं रह गया था। अहिंसा में वे जीवन, जगत और काल के विविध व जटिल प्रश्नों के निराकरण की संभावना पाते थे। "अहिंसा सार्वभौम" और "गांधी इंटरनेशनल" इसी संदर्भ में उनकी मौलिक संकल्पनाएं थीं।

दूसरी तरफ जब-जब मैंने उन्हें जैन-धर्म और जैन-दर्शन और जैन-तत्वज्ञान के संदर्भ में देखा और पाया तो मुझे लगा कि वहां भी धर्म को गत्यात्मक जीवन प्रक्रिया के रूप में ही उन्होंने देखा। गांधी में जो प्रेम है, वही महावीर में तपस्या बन गया है।

जैनेन्द्र जी प्रारम्भ से हीं अत्यन्त भाव-प्रबल-भोले, झेंपू और शर्मीले, पर प्रखर और कुशाग्र बुद्धि के रहे थे। कहते हैं कि जब इन्हें गुरूकुल गये एक वर्ष हुआ था, तब मन्दिर में आदि-पुराण पढ़ाया जा रहा था। और पढ़ाने वाले थे महात्मा भगवानदीन जी। पुराण में भरत-बाहुबलि का प्रसंग आया, तब जैनेन्द्र जी की आंखों से आंसुओं की धारा बहने लगी। उस प्रसंग ने उनके मन को ऐसा छुआ कि आगे चलकर सन् 1934 में "बाहुबलि" नाम से उनसे कहानी बन निकली। कथानक का विचारतत्व परम्परागत नहीं है। मोक्ष तपस्वी, साधनाशील बाहुबलि को न मिलकर सहज, उन्मुक्त, निर्व्याज भरत को मिलता है। जैन मुनि व अन्य मनीषजीन भी इस कथा से अभिभूत कहे जाते हैं।

गुरूकुल आश्रम में भी इनकी खुराक काफी कम थी। पर खेल-कूद में पूरा हिस्सा लेते थे। बहुत और हौले-हौले चबाते हुए बहुत कम खाना उनका रहता था। शुद्ध शाकाहारी। प्याज लेते थे पर पसन्द विशेष नहीं। खिली उड़द की दाल मिल जाये तो क्या बात थी। खाने में विशेष कोई आग्रह नहीं। दूध-दही विशेष पसन्द था। जब कभी कोई लम्बा अन्तराल हो जाता तब पुकार उठते, "भई अपनी चाची (श्रीमती रामसिंह) से बात करो कि बहुत दिनों से "काफी हाउस" नहीं गये, उड़द की दाल के बड़े खाने का मन है।" यह मनुहार उनसे इसलिए कि वे पत्रकार मित्रों के बीच काफी हाउस अक्सर आया-जाया करती थीं। सफर में हों या घर में। नये-नये प्रकार की चीजों का रस लेने का मन रहता था। ट्रेन में हों तो, "अरे, इस स्टेशन के पकौड़े तो देखो जरा।" हां, इस स्टेशन पर अच्छी गुलाबजामुन मिल रही है।" लेंगे बहुत थोड़ा और धीरे-धीरे रस लेते हुए, जैसे महज जी को ही स्वाद न मिल रहा हो, गहरे में पूरे रस को ही समाहित कर रहे हों। यह महज खान-पीने तक ही सीमित नहीं। पढ़ने-लिखने, बात करने और निरे एकान्त में रहने पर भी उनमें घर किया हुआ था। यह स्वभाव व प्रकृति मूलतः क्या थी? क्या यह सृजन का मूल संस्कार ही नहीं था? क्या रचना की सत्यान्वेषण की निर्गम तटस्थता ही नहीं थी? जहां वे थे और नहीं भी। घण्टों-घण्टों पढ़ते रहना, दिन या रात कोई विशेष अन्तर नहीं रखता। कोई पुस्तक या पत्रिका आयी नहीं कि सफाचट। पढ़ना नहीं होता कि पृष्ठ पर पृष्ठ पलटे जा रहे थे। आप देखेंगे कि पढ़ते-पढ़ते कितना ही समय सोचते थे। यदि सामने दीवार है—पर दीवार कहां? वहां तो निस्सीम खुला आकाश और क्षितिज के पार—वहीं पढ़ना बहुत गहरे में लिखा भी जा रहा था। यह पढ़ने के साथ ही क्यों, बैठे थे, चल रहे थे या बातें कर रहे थे, वहीं तक सीमित नहीं थे। कहीं दूर भी थे और उस क्षण में सोचता था वे विराट से भी जुड़े थे। पर साथ ही सामने बैठे व्यक्ति से अछूते नहीं थे और आश्चर्य यह कि समक्ष बैठा वह व्यक्ति भी पूरी हार्दिकता और आत्मतोष और अपने में समुन्नत ही हुआ पाता था। उन क्षणों में जीना और साथ ही अकाल से जुड़ जाना कैसा जीना था? मुझे लगता है कि इसके साथ ही कहीं गहरे में उनको अपने न होने का भी अहसास हो आता था कि जितना ही आप उपस्थित रहे उतना ही आप अनुपस्थित भी हों। याद आता है कि बर्नाड शॉ ने एक जगह कहा है—"ग्रेटनैस इज बट ए सैनसेशन ऑफ लिटिलनैस।" क्या कुछ इसी तरह का भाव यहां भी नहीं है?

कभी-कभी बहुत कोफ्त होती थी कि लेटे तो लेटे ही रहे, चाहे पूरा दिन ही क्यों न बीत जाए। यह भी कोई सलीका था? जाएं, मिलें, कितने ही लोग उन्हें कितना-कितना याद करते थे। पर मजाल कि वे अपनी तरफ से उत्साह लें। देखने को लगता था कि वे सुस्त, आलसी और अकर्मण्य थे। पर भीतर और भीतर में कितना गहरा आलोड़न-विलोड़न, उठा-पटक और टूटना-बनना चल रहा था। बाबू जी ने शायद पढ़ा उतना नहीं जितना गुना। पढ़ना उनका जो रहता था वह उन्हें उत्तेजित करता था कि गहरे में किए मनोमंथन पर वह कई स्तरों पर रहता था। पर सतह पर धीर-गम्भीर पानी की गहरी झील ऊपर से सपाट, शांत, निःस्तब्ध पर भीतर में भी क्या वैसी ही? मानसिक स्तर पर यह जीना क्या उन्हें निर्गम निस्पृहता और सृजन

की वह दृष्टि दे जाता था कि आप सब जगह थे, सब में समाये हुए थे, पर कहीं भी नहीं थे और किसी में भी नहीं। याद नहीं आता कि किसने कहा है—"टु बी एक्टिव इन एक्शन इज नियर टु गॉड।"

बाबू जी आस्तिक थे। मान पाते थे और बेबसी थी कि और कुछ नहीं मान पाते थे। बताते थे कि सन् 30 में गुजरात (पंजाब) जेल में दिल्ली के सब स्पेशल क्लास के राजनीतिक बन्दी जमा थे। पंजाब और सरहदी सूबे के भी पुराने क्रान्तिकारी पंडित जगतराम कालेपानी से वहां जेल में लाए गये थे और सीमान्त गांधी-अब्दुल गफ्फार खां भी थे, जिन्होंने गीता-पाठ शुरू किया। उसी रात आठ-साढ़े आठ का समय होगा। जेल के खुले छोटे से चक्कर में वे घूम रहे थे। बहुत से प्रश्नों ने उन्हें आ घेरा था, जैसे सिर में रूई धुनी जा रही हो। घूमते रहे कि तभी प्रतीत हुआ कि वे एकाएक हल्के हो आएं हों और चल नहीं रहे, तिर-से रहे हों। अन्त में आगे और लिखा कि "वह" है, "मैं" नहीं हूँ और अपने को आस्तिक पाया।

बाबू जी आस्तिक थे, इतना कह लेना पर्याप्त नहीं लगता। क्योंकि आस्तिकता इनके लिए संकल्प या आस्था नहीं थी, बल्कि समूचा अस्तित्व था। इसीलिए वैष्णव होने के बावजूद भजन और कीर्तन वे नहीं करते थे। सम्पूर्ण गांधीभक्त होकर भी चरखा नहीं कातते और जैनेन्द्र कुमार जैन होने पर भी जैन नहीं होते थे, बल्कि हर कीमत पर जैनेन्द्र ही रहते थे।

मेरी प्रतीति है कि यह निर्भीक आस्तिकता गहरी व विशुद्ध श्राद्ध में ही उन्हें प्राप्त हुई होगी। कुछ साल पहले ही जब वे जटिल शारीरिक रुग्णता में से गुजर रहे थे, एक रात उठे और बिस्तर पर बैठ गये। और सोच में, ध्यान में काफी देर तक बैठे रहे। डाक्टर बन्धु ने उन्हें दवाई देनी चाही तो गुस्से में आकर झिड़क दिया और कहा, "डाक्टर, मेरे और भगवान के बीच में तुम अपना विज्ञान न लाओ। प्रभु ने मुझे यह दण्ड ही तो दिया है। मैं आस्तिक हूं और इसके सिवा कुछ और मान नहीं पाता हूं, पर प्रार्थना, जिसे प्रार्थना ही कहते हैं मैंने कब की। इस पाप का दण्ड मुझे मिला है तो मुझे स्वीकार करने दो।"

यह सच है कि गुरूकुल के समय में भी जब वह जैन ब्रह्मचारी थे, मन्दिर में जाने से कतराते रहे और बाद में भी रस्मी तौर पर पूजा-पाठ, प्रार्थना या मन्दिर में रूचि या भक्ति न रही। जाना ही पड़े तो उस क्षण वे पूरे अपने को लीन पाते थे। इसे तरह खद्दर वे पहनते थे और जब 2 अक्टूबर को गांधी जयन्ती या 30 जनवरी को बापू की पुण्य तिथि आयी और उन्होंने कहा, "भगवती, कल राजघाट पर अखण्ड चरखा है। तुम तो वहां चरखा कातोगी न?"

आवश्यक नहीं कि वे प्रार्थना में भी गये हों। अस्वस्थ होने पर विशेष रूप से बार-बार उन्होंने कहा कि भजनों के रिकार्ड सुनवाओ। लोगों को लग सकता कि यह विरोधाभास था। मूलतः उनका स्वभाव बाह्य से अभ्यन्तर की ओर था और यह करने के नाम पर जो कुछ था, उसमें उनका रस नहीं था। पर साथ ही विरक्ति नहीं, वितृष्णा भी नहीं थी। मन लगाते थे, रमते थे और भीतर तक उस रस को या भक्ति के अर्घ्य को गहरे में इष्ट देव को अर्पित करते थे। इसी तरह पढ़ने-लिखने का काम जिन्दगी-भर किया, पर आसपास किताबों का रख-रखाव आप नहीं पायेंगे। किताब उठायी, किताब ही क्यों, चिट्ठी या पत्रिका ही, पढ़ी और छोड़ दिया। पर आश्चर्य है कि समय पर उसमें क्या था, दोहरायेंगे और पूछेंगे कि भाई, उस चिट्ठी में ऐसा था, जवाब दे दिया था। पत्र यदि आपने नहीं रखा तो ढूंढ़िये साहब। झुंझलाहट हो तो हो, पर पत्र हाजिर होना चाहिए।

इसी तरह कई बार उन्होंने सोचा और सोचा ही नहीं, संकल्प बनाया कि अब तरतीब से काम किया जाए। सुबह 7 बजे से लिखना शुरू करूं। दो-ढ़ाई घण्टे तक लिखना। पेन-पेंसिल कुछ यहां रख दो। अब देखो न कुछ लिखना हो तो कैसे लिखें? टाइपिस्ट की व्यवस्था कर लो और महीने में दो-तीन कहानियां और एक धारावाहिक उपन्यास। उपन्यास में महीना नहीं लगे तो दो-तीन महीने में खत्म हो ही जायेगा। तुम प्रदीप, संपर्क कर लो। चिन्ता मत करो। मैं एक्टिव हुआ कि सब समस्याओं की जटिलता ढीली हो जायेगी। पर क्या ऐसा चला, यह चल पा सकता था? हां, लिखना हुआ तो विवशता में से। रेडियो का, पत्रिका का, संस्था का या व्यक्ति का आग्रह और बच निकलने का कोई चारा न हो तभी.....। लिखना सभी डिक्टेशन से हुआ था। बोला हुआ शब्द। आश्चर्य कर सकते हैं, यह कैसे लिखना कि कलम नहीं चलायी और लिखना बन गया। कहानी हो या उपन्यास या कि लेख, वे तब धुरी से ऐसे तद्गत होते थे और वहां से बारीक, पैनी उंगलियों से रेशम के धागे फैलाते थे और बुनते चले जाते थे कि आश्चर्य होता था। ऐसा भी हुआ था कि रेडियो पर उपन्यास को धारावाहिक जाना था। सप्ताह के हर शुक्रवार को प्रसारित होना था। बुध या बृहस्पतिवार हो आया और लिखा नहीं गया और फिर पिछले पात्रों को किसी न किसी तरह आगे भी चलाये रखना था कि उन्हें जो थोड़ा बहुत अवसर और लाभ मिलता है, उससे भी वे वंचित क्यों रहें। कई बार ऐसा हुआ कि पिछले को दोहराया नहीं गया और कहा कि लिखो आगे और धाराप्रवाह उनका बोलना और उसके आगे लिखना शुरू हो गया और देखते-देखते रचना पूरी तैयार।

बाबू जी अपने में केन्द्रित या घिरे ही नहीं थे। यद्यपि बाहर की ओर आसक्ति थी, यह कहना भी कठिन है। सामाजिक और लोकप्रिय हों, ऐसी भी चाह नहीं थी। लोक-संग्रह की वृत्ति उनकी थी नहीं। अनेक संस्थाओं के अध्यक्ष, मंत्री एवं सक्रिय सदस्य रहे थे। साहित्य-अकादमी की प्रारम्भ की पांच-सात सदस्यों की समिति में जिसमें पं० जवाहरलाल नेहरू, मौलाना आजाद, डा० राधाकृष्णन और हुमायूँ कबीर और बाबू जी सदस्य थे। साहित्य व संस्कृति का शीर्षस्थ संस्थान यह केन्द्र बने। इससे पूरा उत्साह कि उन सृजनात्मक और रचनाशील संभावनाओं को जुटाया जाये। पर प्रशासकीय समस्याओं, प्रस्तावों और औपचारिकताओं में उनकी रुचि नहीं दीखने में आयी। प्रश्न सृजन के हों, साहित्य, संस्कृति और समानजीति के हों तो जूझने और संबल देने में, परिश्रम करने का उत्साह और रूचि जागती थी, संस्था या सरकारी विभागों में रचनात्मकता मन्द होती है, अतः उतना ही उनका अनुत्साह रहा। धर्मनीति को लोक जीवन के स्तर पर कैसे लाया जाये? श्रमजीवी कार्यकर्ता इस मूवमेंट की मुख्य इकाई बनें और सिक्के की कीमत दोयम हो। देखने में आया कि धर्मप्राण के उद्घोषकों को भी इसमें असुविधा अनुभव हुई और सिक्के का आधार न रख सकने से असुरक्षा का भाव काफी लोगों में हो आया।

सार यह कि व्यक्तिगत या संस्थागत या समूहगत स्वार्थ या राजनीति आयी कि उनका इस क्षीण हुआ और वे अलग हुए। इसका उत्स मुझे गुजरात (पंजाब) जेल की घटना में नजर आता है। वहां फ्रंटियर, पंजाब और दिल्ली तीनों प्रान्तों के बड़े-बड़े नेता लोग जमा थे। हर तरह की

सुभीता थी। एक गोष्ठी वहां आरम्भ हुई जिसे पार्लियामेंट कहा जाता था। एक दिन आसफअली साहब जैनेन्द्र जी की कोठरी में आये। कहने लगे, "तुम कल पार्लियामेंट में बोले थे। राजनीति में करने-धरने वाले तो हैं। गहरे जाकर विचार करने वाले नहीं हैं। कल तुम्हें सुनकर मैं यह कहने आया हूं कि तुम्हें राजनीति में सक्रिय होना और आगे आना चाहिए। जैनेन्द्र जी ने कहा कि वे निश्चय कर चुके थे कि वे राजनीति से एकदम बाहर रहेंगे। नेतृत्व नहीं संभालेंगे। आसफअली साहब ने बहुत कहा लेकिन गांधी जी की युद्ध की अहिंसक नीति और उसकी अपेक्षा में अपने को देखकर, उनका निर्णय बन चुका था, जो अन्त तक कायम रहा। एक और घटना याद आती है। अप्रैल सन् 30 के आरम्भ में जलियांवाला स्मृति दिवस के निमित्त दिल्ली में एक बड़ा जुलूस निकाला गया। महिलाओं के बाद उसमें नौजवान भारत सेना थी जिसके संचालक थे जैनेन्द्र जी। महिलाएं कचहरी पर पिकेटिंग कर रही थीं कि तभी कश्मीरी गेट के पुल पर गोली चली और लाठी चार्ज हुआ। तब उनमें बहुतेरे घायल हुए और अनेकों की अन्त में मृत्यु हो गयी। गोली की खबर सुनकर जैनेन्द्र जी झपटते हुए कचहरी से कश्मीरी गेट के पुल के पास आये और उन्होंने देखा कि सड़क के दोनों ओर घायल लोग पड़े थे। तभी लालकिले की ओर से घुड़सवारों की एक नयी टोली लाठी घुमाती हुई पुल के नीचे से निकली और हर किसी को रास्ते में अपनी लाठी का शिकार बनाती चली गयी। सड़क पर पड़े घायलों पर भी लगे हाथों लाठी चलाने में उन्हें संकोच न था। उस समय जैनेन्द्र जी सड़क के बीच के घास के प्लाट पर खड़े थे। इतनेमें सिपाहियों का उनकी ओर ध्यान गया। जैनेन्द्र जी अपनी जगह बने तो रहे लेकिन अनुभव किया कि उनके मन में भय भी था। आखिर दो-चार लाठियां उन पर भी पड़ी। लेकिन उस बीज-रूप भय को अपने अन्दर पहचान कर जैनेन्द्र जी ने तय किया कि वह इस अहिंसक लड़ाई में नेता बनने योग्य नहीं है।

कहीं गहरे में भय उनमें था। लिखने में से भय कटे तो कैसे? इससे एक विषमभाव भी उनमें हो आया था। प्रतिभाशाली थे वे। "प्रतिभा द्वन्द्व में से आती है और द्वन्द्व उपजाती है" इससे अपर्याप्तता और गहरी पीड़ा वे अनुभव करते थे। चाह तो उनकी थी कि मुक्ति की ओर चलूं पर यह भय का बीज जो पड़ा था, वह कैसे निर्मूल हो। पैसे वालों के प्रति भी जो सहज समभाव होना चाहिए उसमें वे कठिनाई पाते थे। भीतर की यह भावना और व्यथा और सघन व बेधक हो आती थी। जब आप स्वयं निर्भीक और निस्पृह भाव से निज के साक्षी हों। और इस तरह सत्य और असत्य के बीच बालनुमा एक बारीक रेखा खिंच आती थी कि जिसे पार करना, ट्रांसडेंट, अतिक्रमण करना संभव नहीं हो पाता। निजी धारणा व प्रकृति या स्वभाव अतिक्रमण में अवरोध बन जाता था। यह चुनौती क्या हर सत्यान्वेषी कलाकार-सर्जक की ही नहीं है जो उसे उतना ही प्रामाणिक और विश्वसनीय बनाती है।

खेल के बेहद शौकीन थे। चाहे वह ताश हो, तैराकी हो या शतरंज हो। किसी का सुबह फोन आया "जैनेन्द्र जी हैं" इधर से कहना हुआ कि वे शतरंज खेलने गये हैं। दो बजे फोन करिये, खाने पर आयेंगे। बन्धु ने दो बजे के बजाय चार बजे फोन किया तो मालूम हुआ कि अभी लौटे ही नहीं। शाम को कोई सज्जन आये कि जैनेन्द्र जी को अमुक मीटिंग में जाना था तो अफसोस जाहिर किया कि आप, कृपया, उन्हें अमुक-अमुक स्थान से ले लें। उनके अनुरोध पर मैं भी साथ हो लिया। देखता था कि छोटी कुर्सी पर दोनों पांव ऊपर किये बैठे थे और बाजी बिछी थी। साथ में धीमी-धीमी गुनगुनाहट बाबूजी की ओर से जारी थी। आप खड़े थे, ठीक था, पर उनके सामने बजीर, हाथी और प्यादे से बादशाह को बचाने की चुनौती मुंह खोले हाजिर थी। यह हाल एक दिन का नहीं, न महीने का और फिर साल की ही रोक क्यों लगायी जाये। एक दिन संकल्प किया कि बाजी हार से नहीं उठनी चाहिए। ऐसा नहीं कि हार ही हार हो। जीतते और फिर जीतते। पर चुनौती का अन्त कहां? हमारी मां को दुविधा थी कि मैं कब तक करूं, स्वास्थ्य उनका ठीक नहीं रहता। कब से बीमार रहें, अब कितने अच्छे हो आये थे, लौटते थे तो पस्त होकर। स्वास्थ्य संभले तो कैसे संभले। बाबू जी सुनते थे और मौन साध लेते और आंखों में गहरी मूक वेदना लिये देखते ही रह जाते थे।

उनमें चारित्रिक दृढ़ता, प्रमाणिकता, वैचारिक निष्ठा और सघन व्यथा को आत्मसात करने तथा जो मानते थे उसे कहने, करने और सार्वजनिक बनाने का बेलौस हौसला था। जितने आये, बैठे, उनके चरणों में समर्पित भाव से और वे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में समृद्ध हुए, यशस्वी हुए। पर बाबू जी जहां थे वहीं थे। पर क्या सचमुच वहीं थे? क्या इसे अज्ञता ही कहा जाये कि व्यक्ति सामयिक, क्षणिक उपलब्धि पर भरोसा करता है। पर साहित्य क्या प्राणों की सार्थकता के साये कालातीत ही नहीं है? बाबू जी के चेतन-अवचेतन मन-बुद्धि को सदैव सजग, चपल, सक्रिय और स्पन्दनशील पाता रहा था। बाहर-भीतर आस-पास घटते क्षण के भीतर और भीतर के मर्म को बेधती उनकी मूक आंखें सदैव मेरे समीप रहती हैं।

शायद गांधी जी ने ही कहा कि प्रेम मूक होता है। बड़े भाई का सदमा लीलता सा रहता था। भाई प्रखर बुद्धि, चिन्तन और विवेचनशील मानस के थे। वे उतने ही भावुक, शर्मीले और सजग-जागरुक। स्वाभिमान के धनी। मैल चाहे चरित्र का हो अथवा व्यवहार का हो, बर्दाश्त नहीं कर पाते थे। मुंहफट, सुरुचि, कलात्मकता और सृजन-सामर्थ्य उनके पोर-पोर में बसी थी। अत्यन्त स्नेही, स्पन्दनशील। वे स्नेह को सहेज नहीं पाते थे, वे ललकते थे कि किसी तरह जो मेरे पास है उसको दे डालूं। बाबू जी का विशेष स्नेह-ममत्व था। मां तो कहती ही रहीं कि तुमने ही उसे बिगाड़ा था, सब इच्छाएं पूरी करते रहे, जब चाहा पैसा दिया अब भुगतो। क्या इच्छाएं थीं और क्या चाह थी, अब सब प्रश्नचिह्न बने खड़े हैं। किसी मित्र ने कहा कि वे अपनी प्रतिभा से झुलस गये और उसी में चल बसे। मुझे याद आता है कि भाई साहब अस्पताल में चौबीस घण्टे भी क्या रह पाये होंगे। भाभी (मां) और बाबू जी वहीं थे। भाई ठिठुर रहे थे और इस लक्षण को देख डाक्टर ने आश्वस्त किया कि यह कोई असाधारण बात नहीं थी। रात तीन बजे पुनः पुहंचा और पाया कि भाई बैठे थे और बाबूजी से जिद करते कह रहे थे, "आप समझ नहीं रहे हैं यह उपचार ठीक नहीं है।" और मालूम हुआ कि डाक्टर को उन्होंने इतला दी कि मैं कुछ दवा न लूंगा और हस्ताक्षर किये। बाबू जी, भाभी को हस्पिटल से वापस भेजा कि वे आराम करें। स्थिति कुछ संभली-सी दिखती थी। ग्लूकोस के लेने पर फिर वहीं एतराज। इस बीच बराबर सेब के कतरे, मौसमी के टुकड़े लेते रहे कि सवा छह का समय होगा और कहा, "प्रदीप नींद-सी आ रही है।" करवट बदली सोने को। कुछ ही मिनट बीते होंगे कि देखता क्या कि बहुत तेज धौकनी-सी उनका सीना ऊपर-नीचे हो रहा था। दौड़-धूप की। उपस्थित नर्सों एवं सहायक डाक्टरों ने मदद की। पर वे कुछ ही क्षण में जा चुके थे। बाबू जी तो आ ही रहे थे। यह फोन पर ज्ञात हुआ और

सूचना पर और जल्द आ गये। आये कुछ क्षण वहीं शरीर के नजदीक खड़े रहे। निर्विकार निःस्तब्ध वे क्षण। हल्के से मुंह पर से तनिक चादर हटायी और माथे पर हाथ फेरा और निर्निमेष वे खड़े देखते रहे। चादर उढ़ायी। बाप अपने तरुण बेटे के शव के पास खड़ा हो तो क्या होगा? सोचता हूं, अब इन क्षणों को कैसे बांधू? और बाबू जी के वे मूक क्षण को निःशब्द ही क्यों न रहने दिया जाए।

हम लोगों के बीच में आये और कहा कि भाई उनको फोन करो, और बताया कि कहां-कहां सूचना देनी है। यहां अब कैसे क्या व्यवस्था करनी होगी? देखो जरा। यह महज खाम-ख्याली वाला आदमी नहीं दिखता था। लगा कि वेदना के निगूढ़ रहस्यों में से जैसे वे हो आये हों और अधिक सहज, वत्सल, अर्पित ही वह हो सकते थे। क्या कहूं? अतिरेक न मानें कि वही क्षण था कि वे स्फटिक से कौंधते से प्रतीत हुए।

काफी समय से प्रश्न-चर्चा का सिलसिला चला आ रहा था। प्रश्न टांकते जाइये और उत्तर हाजिर। पर यह सिलसिला मैकेनिकल नहीं था। सामने वाला चाहे कि उत्तर ही उत्तर मिले, ऐसा हो नहीं सकता था। यह खेल था माने कि कोर्ट या बैडमिंटन का या मानों की शतरंज की बिछी बाजी हो। यह आया प्रश्न। अब जूझिये। प्रश्न को नहीं समझ पा रहे हों तो करुणा थी, सहानुभूति थी। साथ में अजीब स्नेह मिश्रित मूक आंखे तरेरती भी मिलेंगी। सामने वाला सशक्त हो तो पैनी तीखी बातें उतनी ही सहज मिठास और हल्के फुलके ढंग से। यह परस्पर संवाद या मात्र चर्चा नहीं थी। अमूर्त या साकार की परस्पर परतें उतारी जा रही थीं। धीमे-धीमे पतली-पैनी निरीह उंगलियों से। पर तीखी-पैनी दृष्टि से कि कहीं कोई ओझल न हो जाये। हर आगंतुक से चुहल, छेड़-खानी और चर्चा करने में उनकी मन, बुद्धि को कुरेदने में बड़ा रस मिलता था। इस प्रवृत्ति का उद्देश्य मनोविहार ही नहीं, विद्वता की धाक जमाना तो कदापि नहीं बल्कि व्यक्ति के अन्तःस्थल, बुद्धि, चित्त को टटोलना, उनसे सहानुभूति प्राप्त करना और सहानुभूति देना ही होता था। मैंने देखा है कि उन्हें सामने बैठे व्यक्ति के समतल जाने में कोई संकोच नहीं, उसके हृदय के तारों को अपने हृदय के तारों को मिला सकते थे। कालेज या स्कूल के छात्रों का समूह हो या साहित्यिक गोष्ठी हो, भाषणबाजी से बचने का ही प्रयास देखता था। अक्सर बातचीत, प्रश्नोत्तर, जिससे सामने बैठे समूह, क्यों न सजीव उत्सुक चंचल विद्यार्थी, प्राध्यापक और बिछाये गये ऊंचे आसीन पर हमारे बाबू जी। पर उनके व उनके बीच यह व्यवधान भी क्यों? अक्सर होता था कि बीच में ही बैठ लिया जाये, व्यवस्थापकीय पक्ष के हित का भी तो सोचना था-तो थी दूरी। पर चर्चा शुरु हुई कि गपशप, वही चुहलबाजी, ऊटपटांग से प्रश्न और उत्तर भी उसी लहजे में कि सभी खिलखिलायें। और इससे तना हुआ वातावरण ढीला और सरस और हार्दिक हो आता था जैसे परिवार का अग्रज बैठा गपशप कर रहा हो। मजा तब आता था कि प्राध्यापकों के कृत्रिम अनुशासन के आतंक की चूल कैसे ढीली हो आती थी और प्राध्यापक, प्रिंसिपल, विद्यार्थी सभी एकमेव। झुंझलाहट होती थी मुझे कि प्रिंसिपल महोदय अब क्या सोचते होंगे कि अनुशासन आगे कैसे चलेगा? देखता क्या था कि प्रिंसिपल के ही किसी प्रश्न को धतिया बता दिया गया था। पर नहीं, वातावरण में वह चेतना ही नहीं है। छोटा बड़ा, विद्वान, या नासमझ आदि का भाव सब विलीन हो आया पर साथ ही हार्दिक मर्यादा और अनुशासन कि कहीं हल्केपन का छींटा तक भी स्थिर नहीं रह पाता था। अगर हल्की बात कहीं कोने से उठे तो स्वयं में ही वातावरण की गरिमा और हार्दिकता से स्वयं ही सिहर जाये कि यहां मेरा क्या बस। आवश्यकता तो सहानुभूति पाने और देने की, व्यथा बांटने की, निज की सत्ता, विद्वता, अहमन्यता को तनिक घुलने की, समझ, स्नेह दीजिये, सद्भाव और हार्दिकता पाइये। इससे परस्परता में भराव आयेगा और भय, संशय और आतंक से उत्तीर्ण हो आयेंगे। इस परस्पर स्नेह-विनियोग में ही क्या अनुशासनहीनता के उपचार का राज नहीं है।

मैंने पाया कि समसामयिक लेखकों में डा० लक्ष्मीनारायण लाल बाबू जी के नजदीक थे। अक्सर इनमें बहुत गहरी चर्चाएं होती थीं। उस दिन तो मैं आश्चार्य चकित रह गया जब सुबह घर आकर उन्होंने बाबू जी से कहा कि, "मैं पुराण की शकुन्तला-कथा पर आधुनिक शकुन्तला नाटक लिखना चाहता हूं। सब कुछ भीतर तैयार हो चुका है पर एक अत्यन्त कोमल बिन्दु पर अटक गया हूं कि जब आज की प्रिय अपने प्रेमी के सामने खड़ी होगी तो उस विस्मृति का मुकाबला दोनों कैसे कर पायेंगे।" इस पर बाबू जी ने मुस्कराकर कहा कि यहां तो कोई संघर्ष ही नहीं है। मैंने अनुभव किया उस क्षण एक विशुद्ध रचनात्मक और सौन्दर्य-बोध के धरातल पर दो रचनाकार जैसे किसी रचना के मर्म को खोल रहे हो। बाबू जी को जितना रस बात करने में आता था शायद ही किसी चीज में आता था। फिर भी लोग उन्हें आत्मनिष्ठ, तत्वज्ञानी, बुद्धिवादी और न जाने क्या-क्या कहते हैं? बातों का
सिलसिला बरसों से चलता आ रहा था। बाबू जी का स्वतः लिखना प्रायः छूटता-सा जा रहा था और एक दिन जब मैंने इस बात को डा० लाल से कहा तो उन्होंने एक विचित्र बात कही कि आम का फल जब रस से भर जाता है तो वह स्वतः डाल से छूट जाता है। जैनेन्द्र जी का जीवन और कृतित्व दोनों क्या उसी रस से भरा हुआ था या उसकी प्रक्रिया में था?

सन् 36 में कलम के सिपाही व सृजनधर्मी प्रेमचन्द जी जलोदर रोग से जूझ रहे थे। शरीर से अशक्त पर चैतन्य से सतेज पलंग से जुड़े थे। प्रेमचन्द जी और बाबू जी का योग परस्पर पिता-पुत्र का स्नेह व वात्सल्य का रिश्ता बन गया था। उस समय जैसे ही यह हमारे बाबू जी को मालूम हुआ तो उन्होंने तुरन्त अपने को समेटना चाहा। समेटना चाहने का अर्थ इतना ही है कि उस समय बाबू जी दरियागंज में ही एक बड़े आठ-दस कमरों वाले मकान में रहते थे। उसी मकान पर प्रेमचन्द जी होली पर आये भी थे। तब परिवार में मां, मेरे बड़े भाई दिलीप जी व बड़ी बहन कुसुम भी थे। तैयारी हुई कि छोटा मकान कहीं पीछे कोने में तलाशा जाये। मां, भाई-बहन के संग जहां हिफाजत से रह सके (उस समय दरियागंज में बहुत कम मकान थे) संयोग ही था कि जल्द ही मकान मिल गया। मकान बुरा बना भी नहीं था। दरवाजे-खड़कियां अधूरे थे। पलस्तर भी पूरा नहीं हो पाया था। बिजली-पानी का तो प्रश्न ही नहीं था और उसी के नीचे मकान मालिक के गाय-भैंस बंधते थे। मां बताती थी कि मकान मालिक से बाबू जी ने कहा, "प्रेमचन्द जी की तबियत बनारस में चिन्ताजनक है। मुझे उनके पास जाना होगा, नहीं मालूम कि कितने दिन, मास या बरस मुझे वहां लग सकते हैं। मैं बाबू जी (प्रेमचन्द) की सेवा उनके पास रहकर जितना बन सके करना चाहता हूं। बच्चे और आपकी बहूरानी आपकी हिफाजत में छोड़े जा रहा हूं।" सोचता हूं कि क्या विवशता थी हमारे बाबू जी को कि उनको कुछ और सूझा ही नहीं। मन उनका भर आया होगा। भीतर कितनी बैचेनी होगी कि किसी तरह बनारस पहुंचू। उनके दर्द तथा मनोव्यथा को कुछ कम कर सकूं, मात्र तर्क और बुद्धि से

स्थिति का विश्लेषण करते तो क्या बाबू जी वहां जा पाते? पात्र बौद्धिक विश्लेषण तर्क-वितर्क तथा अहंकार के आसपास ही नहीं बना रहता है और अन्ततः बचाव का साधन ही नहीं हो आता है? बाबूजी को प्रेमचन्द जी की पीड़ा असह्य हो आयी थी और जैसे वे स्वयं को किसी भी तरह तिरोहित, स्वविसर्जित कर देने में ही इस बेचैनी का निदान पा रहे थे।

ऐसी कितनी ही घटनाएं हैं जो निरन्तर मेरे मन में गूंजती रहती हैं उन सबको यहां लिखना न प्रासंगिक है न जरूरी ही, इसलिए मैं यहां उनमें से कुछ वे घटनाएं लिख रहा हूं जो भुलाये नहीं भूलती। "पापा जल्दी चलो, अम्मा की तबीयत बहुत खराब हो रही है।" मैं साहित्य अकादमी के डाक्टर चौधरी से मिलकर कार्यालय में पहुंचा ही था कि बेटे प्रियांक ने कहा। घर जाकर देखा कि बाबू जी फर्श पर स्तब्ध से बैठे थे और मां औंधी-सी उनकी गोद में अधलेटी और लम्बी-लम्बी रुक-रुक कर कष्ट के साथ सांस ले रही थी। मेरी नजर बाबू जी की आंखों पर थी पर वे जैसे वहां थे ही नहीं। अपलक उनकी आंखें पार से पार कहीं शून्य पर अटकी हुई थीं.....प्रभु यह सब क्या हो रहा था? भागा कि किसी डाक्टर को लाऊं। निकट के नर्सिंग होम से तुरन्त डाक्टर को ले पहुंचा तो डाक्टर ने अपनी जांच-परख के बाद पाया कि वह जा चुकी थी। इस धरती से अब उनका कोई लेना-देना नहीं था। सभी इस अनहोनी से अवाक् थे। तीन दिन लोक रीति के निर्वाह में बीते और लोगों का आना-जाना कम हुआ। तभी मैंने बाबू जी से पूछा, "अब कैसा लगता है?" बाबू जी बालों में हाथ फेरते हुए बोले, "ये तीन-चार दिन कैसे बीते पता नहीं चला। लेकिन आज सुबह घूमकर लौटते हुए महसूस हुआ कि भीतर से कहीं बहुत रीता हो आया हूं.....तुम्हारी मां यूं एकाएक क्यों चली गयी, उसे अभी नहीं जाना था।" ऊपर से तटस्थ से दीखते बाबू जी भीतर से कहीं बहुत विचलित थे। बाबू जी का कुछ कहना बहुत कुछ अनकहे को भी व्यक्त कर देता था। वे भीतर के आलोड़न के संकेत की बानगी ही देते से लगते थे।

आपात काल के दिनों में एक दिन उन्होंने कहा, "चलो इंदिरा जी से मिल कर आयें।" तय हुआ और इन्दिरा जी के निवास पर पहुंचे। "सुनने में आ रहा है कि इन्दिरा आपकी नीतियां व निर्णय कहीं गहरे भय में से आ रहे हैं। तो उनमें अभीष्ट फल कैसे-क्या प्राप्त हो सकेगा? वह भय तो आतंक और दमन का ही कारण बनेगा।" आमने-सामने बैठे इन्दिरा जी व जैनेन्द्र जी में यह बातचीत हो रही थी। "आप ऐसे सोचते हैं? मैं तो सदैव आपको बताती रही हूं। अभी बंगला देश में क्या हुआ? विरोधी और ध्वंसात्मक ताकतें वहां काम कर रही है। क्या वही ताकतें हमें यहां दबोच न लेगी?"

"मैं आपके व्यक्तित्व का प्रशंसक हूं। बेहद दबाव और जटिल स्थितियों में भी आप किस तरह सहज और स्थिर रह पाती है। पर भय से उपजी नीति आतंक और दमन का कारण ही नहीं बनती हैं? सामान्य नागरिकजन किस तरह पिसा जा रहा है। निरंकुशता क्या-क्या दमन नहीं ढा रही है....." आदि-आदि चर्चाएं बराबर परस्पर चलती रहीं। कथाकार जैनेन्द्र के सरोकार व्यापक और गहन थे। व्यक्ति के अन्तर्तम से, परिवार-समाज व राष्ट्र विश्व के स्तर पर बनती जटिलताएं और प्रश्नों से वे अपने को समान रूप से तद्गत और चुनौती-भरा पाते थे। बाद के दिनों में साहित्य सृजन, जैसे बेमानी हो आया हो और तात्कालिक सत्य ही सार्वजनिक, देशज, जीवन और जगत के प्रश्न उन्हें उधेड़ते प्रतीत होते थे। अंत के भीषण पक्षाघात की अस्वस्थता के दौर में भी प्रखरता, संवेदनशीलता, सूक्ष्म दृष्टि और जिजीविषा उनमें सतेज और प्रबल थी। एक दिन शाम को टी०वी० पर उनकी आत्मीय दीदी महादेवी जी का जन्मदिन कार्यक्रम उनकी वाणी में ही आ रहा था कि वे स्वर बाबू जी के कान में पड़े और वे चौंके और उठकर बैठने का स्वतः ही प्रयास किया और दूरदर्शन के उस कार्यक्रम को तन्मयता से ही नहीं देखा बल्कि उस अवधि में उनकी दीदी उनके मन में ही रम आयीं। वे प्राणवान जागरूक और भरसक क्रियाशील थे। पक्षाघात से अंगों की सक्रियात और वाणी का लुप्त होना बहुत दारुण और विवश उन्हें बना रहा था।

पिछले अक्टूबर को बाबूजी के सान्निध्य में जैनेन्द्र और भारतीयता संगोष्ठी हुई। अनेक प्रबुद्ध साहित्यकार व विशिष्टजन आये। वातावरण बहुत हार्दिक बन आया। अनेक लोग बोले और जब डाक्टर कर्णसिंह अपनी बात कहकर जाने लगे कि बाबू जी ने बरबस चेष्टा और अस्फुट स्वरों और संकेतों से उन्हें आग्रह किया कि वे रुकें और उनके नजदीक बैठें। बाबू जी के स्नेहाग्रह पर अनेक व्यवस्तताओं के बावजूद डा० कर्णसिंह गोष्ठी तक ही नहीं बल्कि उसके बाद भी आयोजन के दो घण्टों तक रुके और घुले-मिले रहे।

एक दिन राजेन्द्र यादव अचानक रात को चले आये और गपशप के बाद बोले कि चलो बाबू जी के पास बैठा जाये। तभी एक प्लेट नमकीन आया और कहा कि यह आप लें। इस पर राजेन्द्र भाई ने चुटकी ली—नमकीन के साथ कुछ रंगीन तरल भी हो तो फिर क्या बात है, इतना कहना था कि बैठे हुए बाबू जी का चेहरा भी खिल आया और राजेन्द्र भाई ने उसके बाद दुगने जोर से ठहाका लगया। इसी तरह गांधी ग्राम विद्यापीठ, मदुराई के कुलपति देवेन्द्र गुप्त आये और शतरंज की बाजी खेलने को कहा। खेल शुरु हुआ। बाबू जी सहज ढंग से शतरंज की बिछात पर नजर टिकाये सही चाल चल रहे थे। एक चाल उन्होंने चली और तभी देवेन्द्र भाई ने कहा कि बाबू जी, संभलें, यह रही शह। देखते क्या थे कि इन्होंने तुरन्त अपनी गलती को पहचाना और चाल बदलते हुए मोहरे को ठीक जगह पर रखा। फिर खूब हंसे। देवेन्द्र भाई उनका हाथ पकड़ते हुए यह कहते ही रह गये थे कि बाबू जी यह सरासर गलत है। इन दो घटनाओं के वर्णन का अर्थ इतना ही है कि वे दारुण विभीषिका के बावजूद अन्तःस्तल से सजीव थे।

बाबू जी का समय चाहे सृजन का रहा हो या उनकी यातना व त्रासदी का.....भीतर कुछ था जो उन्हें स्थिर रखता था।

लगता है कि बाबू जी यदि चाहते और समझौते की तनिक भी प्रवृत्ति होती तो प्रतिभा के आधार पर साहित्य, समाज और राजनीति में बहुत अर्जित कर लेते। पर उन्होंने एक व्यक्ति ही बने रहना अधिक अच्छा समझा। व्यक्ति विशेष बन जाने से अपने को रोकना तो उनके बस की बात नहीं थी। कहीं इसी में ही बाबूजी की विशिष्टता सन्निहित नहीं थी?

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य की अंतश्चेतना

–शंकर दयाल सिंह*

उपाध्यक्ष, संसदीय राजभाषा समिति

हिन्दी साहित्य का जो स्वरूप आजादी के बाद हमारे देखने में आ रहा है उसकी नींव आजादी के बहुत पहले पड़ चुकी थी। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने यदि हिन्दी को सहलाया न होता, इंशा अल्ला खां, लल्लू लाल, सदल मिश्र और मुंशी सदासुख लाल ने यदि इस नहलाया न होता तथा पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी, बाबू श्याम सुंदर दास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, गणेश शंकर विद्यार्थी, बाबू राव विष्णु पराड़कर आदि ने विभिन्न क्षेत्रों में इसे गरिमामय बनाया न होता तो शायद हिन्दी आज उस स्थान पर न होती जहां वह है। यह सही है कि प्रेमचंद और प्रसाद आजादी के बाद नहीं थे, लेकिन उन्होंने एक राह तो दिखलाई ही थी और जब हम आजादी के बाद हिन्दी साहित्य का सही आकलन शुरू करते हैं तो हम पाते हैं कि मैथिली शरण गुप्त से लेकर हरिवंश राय बच्चन तक, पं० सोहन लाल द्विवेदी से लेकर रामधारी सिंह 'दिनकर' तक तथा पं० माखनलाल चतुर्वेदी से लेकर अज्ञेय तक—सब के सब वही तो थे जो आजादी के दस-बीस-तीस अथवा चालीस साल पहले से हिन्दी का श्रृंगार कर रहे थे। एक ओर जहां निराला, पंत, महादेवी और बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' आजादी के वर्षों बाद तक हमें उत्प्रेरित करते रहे, वहीं दूसरी ओर जैनेन्द्र, भगवतीचरण वर्मा, अमृतलाल नागर, उदयशंकर भट्ट, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, यशपाल, गजानन माधव मुक्तिबोध, आचार्य शिवपूजन सहाय, महापंडित राहुल सांकृत्यायन, वृन्दावनलाल वर्मा, डा० रामकुमार वर्मा, नागार्जुन, डा० रामविलास शर्मा जैसे अनेक नाम सामने हैं जिन्होंने आजादी के पूर्व और आजादी के पश्चात् समान रूप से हिन्दी साहित्य को विस्तार दिया। नाम गिनाने का लोभ बहुत होते हुए भी मैं उस पर यहीं ब्रेक लगाता हूं।

दरअसल किसी भी साहित्य का इतिहास तिथियों और व्यक्तियों का नहीं होता, बल्कि वृत्तियों का होता है। जब हम वृत्तियों के आधार पर हिन्दी साहित्य का आकलन करना प्रारंभ करते हैं तो पाते हैं कि स्वातंत्र्योत्तर काल का हिन्दी साहित्य हर दृष्टि से व्यापक, परिपूर्ण, उद्बोधक, ज्ञान-वर्द्धक, परिपुष्ट एवं समीचीन है। आजादी के पहले इसका मुख्य स्वर राष्ट्रीयता से ओतप्रोत था जिसमें किसी-न-किसी रूप में गांधीवाद की चेतना मौजूद थी और तिलक, सावरकर, भगत सिंह, खुदीराम बोस, सुभाष आदि का क्रांति तथा ओज भी उसमें शामिल थी। साथ ही आंचलिकता, वर्ग संघर्ष, दलित साहित्य आदि कई खेमे खाते हो गए थे जो बाद में गहरे हुए। इन वादों-विवादों के बीच हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि भी हो रही थी। पुस्तकों के प्रकाशन द्वारा, पत्र-पत्रिकाओं के प्रसारण द्वारा तथा आकाशवाणी और अब दूरदर्शन के माध्यम से भी हिन्दी साहित्य का कलेवर विश्वव्यापी होता गया। भाषा और साहित्य के निर्माण में इलेट्रानिक मीडिया का भी बहुत बड़ा हाथ रहा। पांचवें और छठे दशक में निर्माण का उत्साह रहा, सातवें और आठवें दशक में वादों-विवादों, गुटों, मठों, सरकारी आश्रयों एवं व्यवस्था पर करारी वोट की प्रधानता रही। इस बीच हिन्दी साहित्य की धारा कुंभकार की चाकी के समान तेजी से घूमती दिखाई देती है। एक ओर जहां आजादी के बाद गांधीवाद और मार्क्सवाद का टकराव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता गया, वहीं दूसरी ओर चिंतन पक्ष ने भी झकझोरा। पुराने मिथकों का जहां एक ओर सहारा लिया गया, वहीं दूसरी ओर उनकी खिल्ली भी उड़ाई गई। आजादी के समय आकाशवाणी से एक कवि सम्मेलन का प्रसारण हुआ था उसमें बलवीर सिंह रंग द्वारा पढ़ी गई कविता की, पंक्तियां आज भी मेरे कानों में गूंजती रहती हैं—

"उतर न जाए खुमार
साथियों मधुबन की सौगंध।
आज के क्षण-क्षण की सौगंध।।
पराजित बल के बल से कभी
न होगा अपराजित इंसान।
करेगी भूखी-प्यासी धरा
शांति की सोम सुरा का पान।
उतर न जाए खुमार साथियों,
कण-कण की सौगंध
आज के क्षण-क्षण की सौगंध।

उसी समय का दिनकर जी का यह आह्वान भुलाए नहीं भूलता—

"मां का आंचल है फटा हुआ
इन दो टुकड़ों को सीना है।
देखें देता है कौन खून
दे सकता कौन पसीना है?"

वही आजादी के 40 वर्षों बाद हिन्दी साहित्य का स्वर भयंकर आक्रोशमय हो गया—

भाषा
उस तिकड़मी दरिंदे का कौर है,
जो सड़क पर और है
संसद में और है
इसीलिए बाहर आ
संसद के अंधेरे से निकल कर सड़क पर आ

—धूमिल

आजादी के पहले कुछ सामाजिक अनुभूतियों को छोड़ दें तो मुख्य स्वर राष्ट्रीयता का अथवा उद्बोधन का था, लेकिन आजादी के बाद आक्रोश ने

*15-गुरुद्वारा रकाब गंज मार्ग, नई दिल्ली-110001

संत्रास का रूप ले लिया और संत्रास गुस्से में बदल गया। आखिर ऐसा क्यों हुआ? इसलिए भी कि कवि, उपन्यासकार, कहानीकार अथवा निबंधकार आजादी के बाद फैली अव्यवस्था और भ्रष्टाचार को सहन करने के लिए तैयार नहीं था। उदाहरण दुष्यन्त से दूं—

"कहां तो तय था, चिरागां हरेक घर के लिए
कहां चिरागमयस्सर नहीं शहर के लिए।
अब दरख्तों के साए में धूप लगती है
आओ, कहीं भाग चलें अब उम्र भर के लिए।"

आज का सहित्यकार न तो प्रसाद को अपना आदर्श मानता है और न मैथिली शरण गुप्त को कुछ समझने के लिए तैयार है और न ही पंत और महादेवी को गुरु-तुल्य मानने को। एक अहम् और दूसरी अपनी इयत्ता हर कवि तथा साहित्यकार की पहचान बनती जा रही है—

मैं नया कवि हूं—
इसी से जानता हूं
सत्य की चोट बहुत गहरी होती है,
मैं नया कवि हूं—
इसी से मानता हूं
चश्मे के तले ही दृष्टि बहरी होती है,
इसी से सच्ची चोटें बांटता हूं—
झूठी मुस्कानें नहीं बेचता।
—सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

इस काल में एक ओर जहां गद्य का अद्भुत विकास हुआ वहीं दूसरी ओर पत्रकारिता की प्रखरता चरम सीमा पर पहुंची। यहां यदि मैं दूरदर्शन के माध्यम से होने वाले क्रांतिकारी परिवर्तन की चर्चा न करूं तो अपने कर्तव्य से चूक जाऊंगा। पहले का युग होता तो दूरदर्शन मात्र मनोरंजन का माध्यम माना जाता, लेकिन आज वह साहित्य का भी सशक्त माध्यम है। महाभारत और चाणक्य धारावाहिकों के संवाद सहित्य की धरोहर माने गए तथा दूरदर्शन के माध्यम से अनेक साहित्यिक कार्यक्रमों जिनमें नाटकों के अतिरिक्त कहानियां भी दर्शाई गई।

मानना होगा कि हिन्दी का वर्तमान सहित्य चिंता तथा चिंतन दोनों से प्रभावित है। मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक अनुभूतियों की जगह सामाजिक और राजनीतिक रंग उस पर अधिक गहरे रूप में चढ़ गया है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ओज और उदात्त के साथ यह प्रतिपादित करने की चेष्टा की कि—"मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है। "उन्होंने बताया—"इधर कुछ ऐसी हवा बही है कि हर सस्ती चीज को साहित्य का वाहन माना जाने लगा है। इस प्रवृति को "वास्तविकता" के गलत नाम से पुकारा जाने लगा है। तरह-तरह की दलील देकर यह बताने का प्रयत्न किया जा रहा है कि मनुष्य की लालसोन्मुख वृतियां ही साहित्य के उपयुक्त वाहन हैं। मुझे किसी मनोरोग के विपक्ष में या पक्ष में कुछ भी नहीं कहना है। मुझे सिर्फ इतना ही कहना है कि साहित्य के उत्कर्ष या अपकर्ष के निर्णय की एक मात्र कसौटी यही हो सकती है कि वह मनुष्य का हित साधन करता है या नहीं। जिस बात के कहने से मनुष्य पशु-सामान्य धरातल के ऊपर नहीं उठता, वह त्याज्य है। मैं उसी को सस्ती चीज कहता हूं। सस्ती इसलिए कि उसके लिए किसी प्रकार के संयम या तप की जरूरत नहीं होती। धूल में लोटना बहुत आसान है, परंतु धूल में लोटने से संसार का कोई बड़ा उपकार नहीं होता और न किसी प्रकार के मानसिक संयम का अभ्यास ही आवश्यक है। और जैसा कि रवीन्द्रनाथ ने कहा कि यदि कोई निःसंकोच धूल में लोट पड़े तो इसे हम बहुत बड़ा पुरुषार्थ नहीं कह सकते। हम इस बात को योग्य भी नहीं मानेंगे, परन्तु यदि दस-पांच भले आदमी ऊंचे गले से यही कहना शुरू कर दें कि धूल में लोटना ही उस्तादी है तो थोड़ा डरना आवश्यक हो जाता है। भय का कारण इसका सस्तापन है। मनुष्य में बहुत सी आदिम मनोवृत्तियां हैं जो जरा सा सहारा पाते ही झनझना उठती हैं। अगर उनको भी साहित्य-साधना का बड़ा आदर्श कहा जाने लगे तो उसे मानने और पालन करने वालों की कमी नहीं रहेगी। ऐसी बातों को इस प्रकार प्रोत्साहित किया जाता है मानों यह कोई साहस और वीरता का काम है।"

(हजारी प्रसाद द्विवेदी, संकलित निबंध)

स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी साहित्य में पीड़ा और करुणा निश्चित रूप से आक्रोश बनकर उसी भांति फूटी है जिस तरह से शरीर के किसी हिस्से से कोई मवाद फूटे—

"बेवकूफ बनने की खातिर ही
सब तरफ अपने को लिए-लिए फिरता हूं,
और यह देख-देख बड़ा मजा आता है
कि मैं ठगा जाता हूं.....
हृदय में मेरे ही,
प्रसन्न—चित्त एक मूर्ख बैठा है"

यहां में एक ऐसे अनाम और अपरिचित लेखक को पेश कर रहा हूं जिसका कहना है-"आज के साहित्यकार के सामने अहम सवाल मानवीय सृजन और गति के पथ में अवरोध उत्पन्न करने या उस समाज-संरचना और राजनीतिक प्रणाली से है जो वर्ग-असंतुलन, युद्ध तथा मनुष्य के अस्तित्वगत संकट के लिए जिम्मेदार है। यथार्थ की बहुआयामीय प्रकृति, उसके जटिल स्वरूप की पहचान तथा उसके उद्घाटन में समकाल के रचनाकारों को कहां तक सफलता मिली है——यह विवाद और आलोचना का विषय हो सकता है, साहित्य की गुणवत्ता, अर्थवत्ता और प्रासंगिकता को लेकर बहस हो सकती है, परन्तु मौजूदा ढांचे में परिवर्तन और श्रेष्ठतर समाज व्यवस्था संबंधी उसकी चिन्ता पर संदेह नहीं किया जा सकता।

साहित्यकारों के सोच की परिधि रही है-सत्ता के पांखडी स्वरूप का उद्घाटन और व्यवस्था में परिवर्तन।" (हिन्दी साहित्य: समकालीन परिदृश्य) श्रीनिवास शर्मा नामक उसी लेखक ने एक जगह यह भी लिखा है "भारत के कुछ ऐसे ही बुद्धिजीवियों को लक्ष्य करते हुए इस्पहानी कवि आक्टोविया पांज ने श्रीकांत वर्मा को दिए गए अपने एक साक्षात्कार में कहा था—"मुझे सबसे अधिक घृणा यहां के अंग्रेजी पढ़े वर्ग से है, जो एक ओर साहित्य और संस्कृति का स्वांग करता है, दूसरी ओर अपने ही देश की सांस्कृतिक आकांक्षाओं को नष्ट करता है। इसने कला को संग्रहालय की वस्तु बना दिया है। इसकी रुचि घटिया और भद्दी है। और यही यहां का शासक वर्ग बन बैठा है। यह पाखंडी और नक्काल वर्ग है।"

पिछले चालीस-पैंतालिस वर्षों के दौरान सामाजिक—आर्थिक क्षेत्र में जो थोड़ा सा बदलाव आया है—उसका लाभ भी एक वर्ग विशेष को मिला है। इस बदलाव ने बहुसंख्यक वर्ग का अहित किया है। जहां तक संस्कृति के सांस्कृतिक मूल्यों का प्रश्न है—शासक वर्ग ने उसका उपयोग

विलासिता के रूप में किया है। देश की सांस्कृतिक विरासत और सांस्कृतिक मूल्यों का इतना बड़ा उपहास किसी और देश के सत्तासीन वर्ग ने शायद ही किया हो।

यह अकारण नहीं कि आज के साहित्य में परिवर्तन की आकांक्षा के साथ वैचारिक उत्तेजना भी मिलती है। वैचारिक उत्तेजना के पीछे साहित्यकारों की वैचारिक प्रतिबद्धता है। आज का साहित्यकार जब परिवर्तन की मांग करता है तो स्पष्ट है कि वर्तमान व्यवस्था के प्रति उसके मन में गहरा असंतोष है। वह आर्थिक सामाजिक संरचना में परिवर्तन के साथ ही सांस्कृतिक परिवेश में भी बदलाव चाहता है। सामान्य रूप से देखने पर यह बात भावुकतापूर्ण और सामयिक लग सकती है पर यह आज के युग का सबसे अहम सवाल है। वैचारिक कठोरता और प्रतिबद्धता के बिना परिवर्तन का वातावरण नहीं बन सकता।"

(हिन्दी साहित्य: समकालीन परिदृश्य)

मैंने चूंकि वृतियों की चर्चा साहित्य के संदर्भ में उठाई, उसकी इतिवृति क्या है? बीसवी शताब्दी के प्रारंभ से ही दुनिया के लगभग हर देश में नया साहित्यिक नवजागरण दिखाई देता है। आदर्श और यथार्थ की टकराहट, साम्राज्यवाद और समाजवाद की आम चर्चा, शोषक और शोषित की बहस एवं शासक तथा शासित का टकराव साहित्य के संदर्भ में भी प्रतिभाषित होने लगा। भारत इनसे अछूता न रहा। आजादी के पूर्व से ही इसकी गहरी नींव हिन्दी साहित्य में पड़ चुकी थी। आजादी के बाद यह कंठस्वर कई रूपों में उद्भाषित हुआ। कल्पना की जगह वास्तविकता की तलाश जो निराला से शुरू हुई—

"पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक
वह चल रहा लकुटिया टेक।
मुट्ठी भर दाने को
अपनी भूख मिटाने को वह आता
दो टूक कलेजे के करता
पछताता पथ पर आता!"

जैसी कविताएं एक ओर जहां मानस को कुरेदने लगीं वहीं साहित्य की दिशा संकेत को नए मूल्यों की तलाश के लिए चुनौती भी देने लगीं।

अंग्रेजी भाषा के वर्चस्व के कारण आजादी के पूर्व हिन्दी के प्रबुद्ध साहित्यकार उससे प्रभावित थे। प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष अंग्रेजी साहित्य की छाप हिन्दी साहित्य पर थी। आजादी के बाद वह रही जरूर लेकिन उसका स्वर बदल गया। साम्यवाद, समाजवाद, सर्वहारापन तथा आमजन की तलाश लगभग सभी भारतीय साहित्य में समान रूप से छाने लगी। एक ओर प्रयोगों की धूम मच गई, तो दूसरी ओर प्रगतिशील कहलाने की ललक बढ़ी। उपनिवेशवाद के खिलाफ जो स्वर उभरा उसने सांस्कृतिक और साहित्यिक दोनों पक्षों को झकझोरा। आम आदमी पहले कोई विषय नहीं था अब वह मुख्य विषय बन गया। पाठक के रूप में पहले बुद्धिजीवी की तलाश होती थी, अब आम पाठक की तलाश होने लगी। एक ओर हिन्दी साहित्य का परिदृश्य व्यापक हुआ, तो दूसरी ओर प्रकाशन और प्रसारण की सुविधाओं ने इसे विस्तृत आयाम दिया। यह माना जाने लगा कि साहित्य का आवास यूरोप और अमेरिका ही नहीं हैं, एशिया, अफ्रीका तथा लैटीन अमेरिका उनसे आगे हैं। स्वाभाविक रूप से चिंता ने चिंतन का और चिंतन ने श्रेष्ठ प्रस्तुतीकरण का रूप ग्रहण किया।

यहां मैं डा॰ नामवर सिंह को याद कर रहा हूं जिन्होंने साहित्य एकेडेमी, के मंच से कहा था-"मुद्दा चाहे परंपरा और आधुनिकता का हो, चाहे क्षेत्रीय और राष्ट्रीय अस्मिता का, रूपगत नए प्रयोगों का हो अथवा लोकधर्मी रूपों के आत्मसात का-इन सबका समाधान प्रतिउपनिवेशीकरण के ही परिप्रेक्ष्य में संभव है। इसलिए पहला सवाल यही है कि भारतीय लेखक आज प्रतिउपनिवेशीकरण की प्रक्रिया के प्रति कितने जागरूक और सक्रिय है? प्रश्न कोरा बुद्धिविलास नहीं, जैसा कि सामान्य विचार गोष्ठियों में प्रायः देखा जाता है। प्रश्न का सीधा संबंध हमारी सर्जनात्मक उर्जा के उन्मोचन से है"।

भूत और वर्तमान की उर्जा को झकझोरते हुए उन्होंने इस क्रम को आगे बढ़ाया जो निश्चय ही उल्लेखजन्य है— "कहीं ऐसा तो नहीं कि हम स्वयं अपने स्वाधीनता संग्राम के दिनों की उर्जा को खो बैठे हैं, न आज वह राष्ट्रीय भावना है, न राष्ट्रवाद ही। राष्ट्रवाद रामबाण नहीं है। राष्ट्रवाद में खतरे भी हैं। इन खतरों से मैं बेखबर नहीं हूं। लेकिन इतिहास ने अभी राष्ट्रवाद को कृतकार्य मानकर कूड़े की टोकरी में नहीं फैंका है, बल्कि उत्तरशती में बहुत कुछ उसके पुनरूत्थान के ही लक्षण दिखाई पड़ रहे हैं। किसी न किसी रूप में साम्राज्यवाद जब तक जीवित है, राष्ट्रवाद की आवश्यकता बनी रहेगी। लेकिन क्या ऐसा नहीं लगता कि हमने साम्राज्यवाद के साथ मन ही मन कहीं चुपचाप समझौता कर लिया है? बौद्धिक जगत में अब "साम्राज्यवाद" शब्द कम ही सुनाई पड़ता है, गोया उसका अस्तित्व ही नहीं है।

इसका कुछ संबंध 1947 की हमारी आजादी से तो नहीं? हममें से कितने लोगों को यह एहसास है कि हमें आजादी मिली नहीं,बल्कि हमने आजादी ली है? "मिलने" में और "लेने" में फर्क है, उसे बताने की जरूरत शायद नहीं है। आजादी लेने की बात होती तो हम खंडित आजादी क्यों लेते? जिस देश ने 1905 में बंग-भंग को ठुकरा दिया था, उसी ने 1947 में देश का विभाजन कैसे स्वीकार कर लिया? जबकि विभाजन का मूल आधार एक ही था: सम्प्रदायावाद। इन बयालिस वर्षों में इतना बड़ा बदलाव आया कि इन दोनों घटनाओं को बयान करने की भाषा तक बदल गई। बंग-भंग कहते ही "अंग-भंग" की टंकार सुनाई पड़ती है, लेकिन विभाजन, बंटवारा या तकसीम से क्या छवि निकलती है?"

नामोल्लेखों तथा उदाहरणों के मायाजाल और बोझिलता से अपने को तथा आपको भी मैं बचाऊंगा। लेकिन इसका अर्थ यह कदापि न लें कि संबद्ध विषय के अनुसार जो चर्चाएं जहां-तहां हो रही हैं उनसे हम आंखे मूदं लें। श्री अशोक वाजपेयी हिन्दी में एक बहुचर्चित नाम है। कुछ दिनों पूर्व "संकटग्रस्त शताब्दी का अंतिम दरख्त" शीर्षक से उनका एक निबंध भी मेरी आंखों के सामने आया, जिसमें कुछ अंशों पर मेरी नजर टिक गई—

"हमारा संकट यह भी है कि हिन्दी में अन्य चिन्तनपरक अनुशासनों में किसी तरह की मौलिकता और समृद्धि के अभाव के कारण हमारा ज्यादातर सोच-विचार हिन्दीतर स्रोतों से आता है और इस अर्थ में थोड़ा विजातीय ही है। दूसरे, काफी हद तक सोच विचारने का काम साहित्य को ही करना पड़ता है। बीसवीं शताब्दी में बिना गहरी और कुशाग्र प्रश्नाकुलता और विचारशीलता के कुछ सार्थक और प्रामाणिक करना संभव नहीं। दुर्भाग्य से हमारी विचार सरणियां इधर इतनी उलझ गयी हैं कि खुद अपनी हालत का तीखा और बेबाक आकलन हम नहीं कर पा रहे हैं। साहित्य की सीमित

शेष पृष्ठ 41 पर

पुरानी यादें नए परिप्रेक्ष्य

कुछ नाम प्रतीक बन जाते हैं!

–श्री गिरिजा कुमार माथुर

[यहां प्रस्तुत है, हिंदी के सुपरिचित कवि श्री गिरिजा कुमार माथुर द्वारा लिखित एक संस्मरणात्मक लेख जो प्रसिद्ध कथाकर जैनेंद्र कुमार पर केन्द्रित है। यह दुर्लभ आलेख हमें जैनेन्द्र जी के सुपुत्र श्री प्रदीप कुमार के सौजन्य से प्राप्त हुआ। — संपादक]

जैनेन्द्र जी के बारे में जब भी सोचता हूं तो सन् 1940-41 के जमाने की दिल्ली की तसवीर आंखों में घूम जाती है। कुछ शहर आधुनिक लेखकों के नाम के साथ ऐसे जुड़ गये हैं कि साहित्य में वे शहर के ही प्रतीक बन गये हैं। बनारस का नाम आते ही प्रेमचन्द और प्रसाद के नाम अनायास जुड़े चले आते हैं। भारतेन्दु की तो वह नगरी थी ही, लेकिन अपने समय में हम उसे प्रेमचन्द और प्रसाद की नगरी के नाम से ही पहचानते थे। लखनऊ का नाम आते ही निराला जी की याद आ जाती है। उस समय का लखनऊ निराला जी के नाम के साथ उसी तरह जुड़ा था जैसे वह यशपाल और अब अमृतलाल नागर के नाम के साथ जुड़ा हुआ है। इलाहाबाद, हम कवियों के लिए, पन्त और महादेवी का ही नगर रहा। कानपुर कभी स्नेही जी का नगर था। सन् 1940 से लेकर वर्षों तक दिल्ली के साहित्यिक प्रतीक जैनेन्द्र जी ही रहे। 1940-41 में तो हिन्दी के इने-गिने लेखक ही दिल्ली में थे, जिनमें सबसे प्रख्यात, वरिष्ठ और सम्मानित जैनेन्द्र जी ही थे। 1940 के अन्त में मेरा विवाह दिल्ली में हुआ और 1941 में लखनऊ विश्वविद्यालय से एम०ए० करके आजीविका की तलाश में दिल्ली आता-जाता रहता था। उस समय दिल्ली बहुत छोटा शहर था। आबादी 7 लाख से अधिक नहीं थी। पुराना किला, निजामुद्दीन, हुमायुं का मकबरा, सफदरजंग ये सब सुनसान इलाके थे। नई दिल्ली अंग्रेजी अफसरों और हिन्दुस्तानी बाबुओं का शहर जाना जाता था। नयी दिल्ली इर्विन अस्पताल के आगे दिल्ली गेट पर समाप्त हो जाती थी। उसके बाद कश्मीरी गेट तक पुरानी दिल्ली थी। पुरानी और नयी के बीच में एक नया मौहल्ला आबाद हो रहा था, नाम था—दरियागंज। जमुना तब बहुत दूर नहीं थी, इसीलिए इस आबादी का नाम दरियागंज रखा गया था। "अक्टूबर 1941 में विजय दशमी के अवसर पर दिल्ली रेडियो ने एक कवि गोष्ठी आयोजित की थी। नगेन्द्र जी भी उसमें भाग लेने आये थे। कवि रूप में नगेन्द्र से मेरा वहीं परिचय हुआ। वे उन दिनों कालेज आफ कामर्स, दरियागंज में अंग्रेजी के अध्यापक थे। दिल्ली आने पर मैं जैनेन्द्र जी से मिलने को उत्सुक था। "परख", "सुनीता," "त्यागपत्र" और "कल्याणी" के जैनेन्द्र तब एक सुप्रसिद्ध ही नहीं विवादास्पद भी हो चुके थे। 1936 में प्रेमचन्द की मृत्यु के बाद "हंस" का संपादन भी उन्होंने किया था। लेकिन जैनेन्द्र जी ने प्रेमचन्द के व्यापक सामाजिक सरोकारों की परम्परा के स्थान पर स्त्री-पुरूष के बीच प्रेम एवं काम संबंधों की त्रिकोण समस्या को अपना केन्द्रीय विषय बनाया था। नरोत्तम नागर ने इसी बात को लेकर "शुतर्मुर्ग पुराण" शीर्षक से एक लम्बा व्यंग्य लिखा था जो बहुत चर्चित हुआ था। उन दिनों लखनऊ से अमृतलाल नागर "चकल्लस" व्यंग्य पत्रिका निकालते थे जिसके "भाभी अंक" में "एक पत्नीव्रत" और "एक मातावृत्त" शीर्षक से लेख बड़े चौंकाने वाले थे। जहां तक मुझे स्मरण है "शुतर्मुर्ग पुराण" का एक अंश जीरो रोड, इलाहाबाद से 1939 में निकलने वाली "उच्छृंखल" लघु पत्रिका में भी छपा था। "उच्छृंखल" हिन्दी में पहली साहित्यिक लघु पत्रिका थी जिसका उद्देश्य चौंकाने वाले फ्रायडवादी मनोवैज्ञानिक विश्लेषण द्वारा मूर्ति-भंजन करना था। आलोचना के अतिरिक्त उसमें जो रचात्मक चीजें निकलती थीं उनमें नयी जमीन की तलाश का स्पष्ट संकेत भी होता था। रामविलास शर्मा नरोत्तम नागर के मित्र भी थे और "उच्छृंखल" के अनौपचारिक सलाहकार भी। केदारनाथ अग्रवाल और मेरी नये कथ्य-शिल्प की कविवाएं भी उसमें छपती थीं। "शुतुर्मुर्ग पुराण" लेख में कहा गया था कि जैनेन्द्र के पात्रों की तीन प्रमुख समस्याएं हैं: धन की लालसा, सैक्स की लालसा, ताकत (प्रभुत्व) की लालसा। काम, प्रेम और परिवार श्रेय और प्रेय की समस्या जैनेन्द्र जी का मुख्य सरोकार था। नरोत्तम नागर की इस पुस्तक का प्रकाशन हुआ या नहीं, यह तो मुझे नहीं मालूम लेकिन उनके सैक्स-संबंधी फ्रायडवादी व्यंग्य को लोगों ने चटखारे लेकर पढ़ा था। मैं उन दिनों तेजी से बदलते यथार्थ के अनुरूप कविता में नयी भावभूमि और रूपाकार तलाशने में खोया रहता था। दूसरे, टाइफाइड के बाद मैं अपनी बीमारी और आर्थिक संघर्ष में डूबा था। इस सब के बाद भी दिल्ली आकर जैनेन्द्र जी जैसे यशस्वी लेखक से तो मिलना ही चाहता था। नगेन्द्र जी से मिलने पर मुझे जैनेन्द्र जी का पता मालूम हुआ कि वे 7/36, दरियागंज में रहते हैं। टेलर स्कवायर से दरियागंज काफी दूर था। उन दिनों नियमित बसें चलती नहीं थी। कोई एक प्राइवेट कम्पनी जी०एन०आई०टी० (ग्वालियर एण्ड नार्दन इंडिया ट्रांसपोर्ट कम्पनी) थी जिसकी कुछ छोटी लाल इंटिया-रंग की खड़खड़िया बसें यहां वहां चलती थीं। कभी आती थीं और कभी नहीं। लोग हंसी में जी० एन० आई०टी० को "गोज नेवर इन टाइम" कहा करते थे। तांगे वाले चवन्नी सवारी लेकर चार आदमी बैठाते थे। पूरा तांगा सवा या देढ़ रुपये में होता था। उस समय एक-डेढ़ रुपया बड़ी चीज थी। पूरा तांगा करना मेरे बस की बात नहीं थी क्योंकि तब मैं न तो कहीं नौकर था और न इतने रुपये ही मेरे पास होते थे। कभी-कभी तो देढ़-दो रुपये से ज्यादा चेंज ही जेब में नहीं होती थी।

दूसरा महायुद्ध शुरू हो चुका था। महंगाई बढ़ गयी थी, खाने-पीने की चीजों की बेहद कमी हो रही थी। किरकिरा आटा ही बाजार में मिलता था। बेकारी, बीमारी, फाकामस्ती और निराशा का घोर अंधकार मेरे समाने था। खैर मैं कुछ रास्ता पैदल, कुछ तांगे की सवारी करके नगेन्द्र जी से मिलते हुए जैनेन्द्र जी के घर पहुंचा। जिस गली में जैनेन्द्र जी थे वह दरियागंज के नए फ्लैटों वाली आबादी की तरह नहीं थी बल्कि काफी पुरानी सी थी। वहां के मकान पुरानी दिल्ली की गलियों का एक भाग लगते थे। जैनेन्द्र जी का मकान देखकर मुझे बड़ा ही विचित्र अनुभव हुआ। उस संकरी-सी गली में एक दो मंजिला मकान था जिसमें नीचे गाय-भैंसे बंधती थीं और चारा काटने की मशीन लगी हुई थी। मैंने जब सिर उठाकर देखा तो एकदम खड़ी सीढ़ियां थीं—धूल-काली पुरानी, काई लगी सीढ़ियां। कोई रेलिंग या दीवार भी दूसरी तरफ पकड़ने को नहीं थी। मैं ऊपर जाने में सहमा कि चढ़ तो जाऊंगा पर उतरुंगा कैसे? मैंने सोचा रात-विरात इस पर लोग कैसे चढ़ते-उतरते होंगे। सीढ़ियों पर चढ़ते हुए तो नहीं पर शाम के धुंधलके में उतरते हुए डर लगा कि कहीं पैर ही न फिसल जाये। ऊपर पहुंच कर छोटा-सा आंगन था जिसके एक तरफ टीन शेड पड़ा हुआ था। उसी के नीचे भगवती भाभी खाना पकाती थीं। उससे सटा जैनेन्द्र जी का एक लम्बा-सा बहुत ही साधारण कमरा था। हिन्दी के लेखक और पत्रकारों की तब यही दशा थी। साधनहीनता का सर्वत्र प्रमाण था। घर की बनी हुई खद्दर की बनियान और घुटनों तक जांघिया वे पहने थे। मैंने देखा कि उनके सभी कपड़े घर के बने और घर के ही धुले थे। धोने का साबुन भी श्रीमती जैनेन्द्र घर पर ही बनाती थीं। भिगौने में भरकर उन्हें आग पर चढ़ा देती थीं जहां वे उबलते रहते थे। मुझे लगा कि लेखन से मिलता ही कितना था। एक सहज परितोष और आत्मसम्मान इस सब में लगा। लेकिन इसका भी कहीं कोई दिखावा नहीं था। शायद हिन्दी के ही नहीं अन्य भाषाओं के लेखकों की भी यही दशा अंग्रेजी शासन में थी। मैं दोपहर के बाद पहुंचा था और जैनेन्द्र जी भोजन करने जा रहे थे। मैंने अपना परिचय दिया। बड़े प्रेम से उन्होंने बैठाया और हाल-चाल पूछा। मैं कहां का रहने वाला हूं, कहां शिक्षा पायी है, दिल्ली में कहां रहता हूं, कौन सी जगह काम करता हूं। मैंने सारी स्थिति बतायी और कहा कि अभी कोई रास्ता नहीं है और इन्हीं असूझ दिशाओं में रास्ता टटोल रहा हूं। जैनेन्द्र जी कविता के क्षेत्र में मेरे नाम से कुछ परिचित हो चुके थे। उन्होंने शीतल-पाटी पर मुझे बैठाया और मैंने उनके घर पहली बार भगवती भाभी के हाथ का बना हुआ खाना खाया। दाल, सब्जी, चटनी थी। एक-एक करके गर्म-गर्म रोटियां वे खिला रहीं थी। जो स्वाद उस दिन मुझे सादे खाने में अनायास मिला वह अब तक याद है। मैं अपने जन्मस्थान में ऐसा ही सादा खाना अनेक बार खा चुका था। उसका सहज आनन्द मैं जानता था। जैनेन्द्र जी कह रहे थे, ऐसा खाना तो तुम्हें पसन्द ही नहीं आयेगा, तुम तो माथुर हो। मैंने 'हंस' कर जैनेन्द्र जी से कहा कि मेरे घर में तो प्याज भी नहीं आता। खान-पान में शुद्ध वैष्णव संस्कार के परिवार में जन्मा हूं। मैं जाति-पाति में बिल्कुल विश्वास नहीं करता लेकिन ब्राह्मण और जैनियों की बस्ती में पला हूं—वही संस्कार मेरे लिए सहज रहा है।

खाने के बाद हम लोग जैनेन्द्र जी के कमरे में जाकर बैठे और वहां मैंने कुछ साहित्यिक चर्चा करने की कोशिश की। मैंने उनसे पूछा कि वे क्या लिख रहे हैं। नई कृति के बारे में कुछ कहने में वे संकोच अनुभव कर रहे थे। बहुत पूछने पर उन्होंने बताया कि जब वे कोई चीज पूरी नहीं कर लेते, उसका जिक्र करना पसन्द नहीं करते। वे लगातार मेरी कविता के बारे में ही पूछते रहे। नये युवा कवि क्या लिख रहे हैं, क्या सोचते हैं, क्या उनका दृष्टिकोण है? यह वे अधिक जानना चाहते थे। उन्होंने पूछा कि कथा साहित्य में मेरी कितनी रुचि है। मैंने उन्हें बताया कि बहुत कम। लेकिन प्रेमचन्द और जैनेन्द्र के अन्तर को मैं पहचानता हूं। मैंने यह पूछने की भी कोशिश की कि वे प्रेमचन्द की सामाजिकता और यथार्थ के बदले अन्तर्निष्ठ मनोवैज्ञानिक दुनिया में क्यों चले गये। क्या प्रेम का त्रिकोण व्यक्ति के जीवन में इतना महत्वपूर्ण है? जैनेन्द्र जी इस सवाल का उत्तर टाल देना चाहते थे। उन्होंने सिर्फ इतना ही कहा कि सच्चाई सिर्फ बाहर नहीं होती। मेरे मन में कई प्रश्न एक-साथ कौंध गये थे। मेरे लिए तो कड़ुवी सच्चाई वास्तविक जीवन में ही दिखायी देती थी। मैं उसी रास्ते पर टक्करें खा रहा था। मेरे लिए आंतरिक मनोवेग, आत्म-संघर्ष, दुख, वेदना और पीड़ा का सारा आधार जीवन ही था। उससे कटी हुई कोई अन्य सच्चाई मुझे अमूर्त और काल्पनिक लगती थी। प्रेम को भी मैं यथार्थ जीवन में जूझने की शक्ति देने वाला और आदमी को अधिक मर्मशील तथा समृद्ध बनाने वाला एक भरपूर सामाजिक अनुभव तब भी मानता था, आज भी मानता हूं। किन्तु पहली भेंट में किसी बहस में पड़ना मुझे उचित नहीं लगा। कहां मैं 21 साल का नवयुवक और कहां मुझसे उम्र में इतने बड़े अनुभव-सम्पन्न, चिंतक और प्रतिष्ठित लेखक। थोड़ी देर बैठकर मैं चला आया।

मैं सोचता रहा कि जिंदगी के हर मार्मिक पक्ष को समेटने वाली प्रेमचन्द की सामाजिक परम्परा का जैनेन्द्र जी ने वस्तुतः विरोध किया है और आधुनिक मनुष्य के सामाजिक संघर्ष की धारा से रचनाशीलता को परिवार, विवाह, पत्नी और प्रेमिका, स्त्री-पुरुष के तनाव, मानसिक उद्वेग की आत्मनिष्ठ सीमाओं की ओर मोड़ा है। यह ठीक है कि बदलते समय के साथ स्त्री-पुरुष संबंध भी बदल रहे थे। हमारे समाज में स्त्री संबंध भी बदल रहे थे। हमारे समाज में स्त्री पर होने वाले तमाम अत्याचार, दमन और क्रूरता का लेखन भी उन दिनों काफी निकलने लगा था। किन्तु जैनेन्द्र जी ने स्त्री-पुरुष के प्रेम संबंधों की पुरानी आडम्बरपूर्ण रूढ़ि को एक तरह से नैतिक चुनौती दी थी। मुक्त प्रेम के संदर्भ में पाप और पुण्य की प्रचलित मान्यताओं पर प्रश्न चिन्ह लगाया था। प्रेय और श्रेय, स्वकीया और परकीया तथा सूरी "चेहती" स्त्री से अवैध संबंधों की बात पुराने जमाने से चली आयी थी। राधा के माध्यम से तो कृष्ण-काव्य में परकीया-भाव को एक पूरा दार्शनिक प्रभा-मण्डल ही दे दिया गया था। रीतिकाल के कवियों ने तो और आगे बढ़कर यह तक घोषित कर दिया कि "जोग हूं ते कठिन संजोग परनारी को।" सामन्ती युग की घोर विलासिता का इससे बड़ा और क्या प्रमाण हो सकता था? मध्य युग की दास प्रथा में जिसके पास ज्यादा से ज्यादा दास-दासियों की संख्या होती थी वही समर्थ और शक्तिशाली माना जाता था। उसी तरह बाद में रईसी का सबूत एक-न-एक परकीया या रखैल रखना भी हो गया था। परिवार से बाहर अलग मकान देकर उसका भरण-पोषण भी किया जाता था। तब स्त्री को सिर्फ मनबहलाव की साधन माना गया था। घर में वह काम करने वाली पतिव्रता दासी थी और बाहर की "दूसरी" औरत मनबहलाव की चीज। चूंकि इस "चहेती" का प्रवेश परिवार में नहीं था इसलिए परिवार में कोई ज्यादा बड़ा घपला या झंझट पैदा नहीं होता था।

दूसरी औरत यानी "दाश्ता" या 'रखैल' सामाजिक समस्या तब तक

नहीं बनी थी, हालांकि पत्नियों के लिए मानसिक वेदना और संताप उस समय भी कम नहीं था। लेकिन परिवार की स्त्री तो उफ़ भी नहीं कर सकती थी, वह केवल इस "सौत" को सिर्फ कलमुंही, चुड़ैल, डायन कहकर कोस ही सकती थी। पुरुष के सामने आपत्ति करने या कुछ भी कह सकने का सवाल ही नहीं था। उस ज़माने के दो दादरे या गीत चले आये थे, उसमें स्त्री का यह संताप बड़ी तीव्रता से प्रकट हुआ था। "किन सौतन संग रैन गंवाई" या "दिल से न जाना वादा निभाना, धोखा न खाना, दुनिया बड़ी, बेईमान ओ...पिया, दुनिया बड़ी बेईमान" जैसे गीत इसका सबूत थे। आज लोग इस फिल्मी गीत समझते हैं लेकिन 1920-30 तक के जमाने में यह मध्यवर्गीय घरों की स्त्रियों में एक प्रचलित लोक गीत था। यह स्थिति बहुत शीघ्र बदलने लगी। 1930 और 40 के बीच समाज में स्त्री की स्थिति को लेकर एक बड़ा परिवर्तन सामने आने लगा था। उस समय रूढ़िग्रस्त संयुक्त परिवारों में स्त्री पर होने वाले अत्याचार, दमन, शोषण, अन्याय और उसकी अत्यन्त दुखद स्थिति को केन्द्र में रखकर बहुत साहित्य रचा गया था। "चांद" के 'समाज' अंक में इस प्रकार की काफी सामग्री निकली थी। यहां तक कि उस जमाने में सस्ते दामों पर जो पापुलर उपन्यास निकलते थे। उनमें बहू पर सास-ननद-जिठानी के अत्याचारों की बड़ी लोमहर्षक कहानियां हुआ करती थीं। आगरे मुझे सही नाम याद है तो इन्दौर से कोई "सौजातीया एण्ड कं०" इस तरह के क्रमिक उपन्यास सस्ते दाम पर निकाला करती थी।

स्त्री की गरिमा, स्वतन्त्रता, अधिकार, परिवार में उसका सम्मान, शोषण और यहां तक कि नितान्त गरीबी यानी आर्थिक कारणों से ही वेश्यावृति की समस्या भी उठायी जाने लगी थी। लड़कियां किस तरह से फुसलाकर या शादी का बहाना बनाकर गांव से लायी जाती थीं, उन्हें बेचा जाता था, उन्हें किस प्रकार पहली बार शील और लज्जा के सबसे पावन अंगों को तड़प-तड़पकर पुरुष की हविस के लिए पेश करना पड़ता था, किस प्रकार इस सारे कर्म से अत्यन्त त्रस्त होकर एक प्रकार से पुरुष से अपार घृणा करती हुई उससे बदला लेने की भावना से इस कर्म में प्रवृत्त होने को वे विवश थीं—यह सारी बातें सामने आ रही थीं। आर्थिक कारणों से संयुक्त परिवार टूटने लगे थे, जमीन जायदाद के झगड़े बढ़ गये,, नारी मुक्ति आन्दोलन आरम्भ हो गया, स्त्री घर से बाहर आने लगी, पढ़ने लगी, सामाजिक कामों में भाग लेने लगी। इस तरह आदमी और औरतों का मिलना-जुलना अधिक बढ़ने लगा। इसी की नतीजा था कि परिवार से बाहर स्त्री-पुरुष के प्रेम संबंध एक सामाजिक समस्या बनकर सामने आ गये। पुराने जमाने में लोग जानते सब कुछ थे कि गली-मौहल्ले या किसी परिवार में क्या हो रहा है। घुस-पुस बातें भी हुआ करती थीं लेकिन खुलकर कोई उसकी चर्चा नहीं करता था। पुरुष के दुराचरण की इस बात पर समाज ने पर्दा डाल रखा था। जैनेन्द्र जी ने अपनी कृतियों में इन्हीं बातों पर अपना ध्यान केन्द्रित किया और इस पाखण्ड पर पड़ा पर्दा उठा दिया। शुरू-शुरू में इससे बड़ी सनसनी मची क्योंकि तब जैनेन्द्र जी का तेवर मूर्ति-भंजक का लगता था। लेकिन क्रमशः स्त्री-पुरुष के "काम-संबंध" ही उनका केन्द्रीय कथ्य बन गये। नारी मुक्ति का अर्थ सामाजिक समानता, आर्थिक शोषण से मुक्ति, स्त्री की गरिमा को जैनेन्द्र जी ने अस्वीकार तो नहीं किया किन्तु उनमें सेक्स-मुक्ति का समान अधिकार प्रमुख होने लगा। मैं सोचने लगा कि जैनेन्द्र जी का सरोकार गांव-कस्बों से दूर सुविधापूर्ण आधुनिक नगरीय सभ्यता में पनपने वाले पढ़े-लिखे वर्ग में मुक्त प्रेम की मानसिक कशमकश है। वे मनोवैज्ञानिक तथा साहित्य के सूत्रधार है। सहसा मुझे ख्याल आया कि जिस जगह वे रहते हैं वह भी एक ऐसा स्थान है जो प्राचीन को आधुनिक से मिलाता है, और अतीत को आधुनिकतावादी वर्तमान से। दरियागंज भी उसी तरह पुरानी और नयी दिल्ली की ऊंची शहरी सभ्यता और लालसाओं को जोड़ता था और मुझे लगा कि जैनेन्द्र जी शायद इसी के प्रतीक हैं।

मैं दिल्ली में शुरू में तीन साल रहा और इस बीच अपने संघर्ष में लगा रहा। इसीलिए जैनेन्द्र जी के पास मेरा बहुत आना-जाना नहीं हो पाता था। सितम्बर, 1942 में तीसरे पहर करीब 4 बजे अचानक मुझसे वात्स्यायन जी पहली बार मिले थे। पता पूछते हुए वे साइकिल पर टेलर स्क्वायर आए थे। बहुत ऊंचा कद, घनी काली दाढ़ी, कुर्ता-पायजामा, पेशावरी चप्पल और कन्धे पर झोला—इस रूप में वे साइकिल से उतर कर मुझसे मिले थे। किसी लेखक की ऐसी "धज" मैंने पहले नहीं देखी थी। वे लेखक कम राजनीतिक कार्यकर्ता ज्यादा लगते थे। मैं रेडियो प्रोग्रामों के लिए गोल मार्किट के निकट टेलर स्क्वायर से अलीपुर रोड आया करता था। मेडेन्स होटल से लगा हुआ रायल एक्सचेंज प्लेस था जो अब "एक्सचेंज स्टोर" कहलाता है। उसी के बराबर में 18, अलीपुर रोड पर रेडियो का दफ्तर था और 4, अण्डर हिल रोड के कोने वाले बंगले स्टूडियो थे। सिकन्दरा रोड और दरियागंज मेरे रास्ते में पड़ते थे और जैनेन्द्र जी से मिलने मैं कभी-कभी पहुंच जाता था। एक-दो बार अज्ञेय जी वहां मिले। जैनेन्द्र जी को अज्ञेय बहुत मानते थे, बड़े भाई की तरह आदर देते थे। जैनेन्द्र जी ने ही बतलाया था कि "अज्ञेय" उपनाम उन्हीं का दिया हुआ है और अज्ञेय की पहली कहानी उन्हीं के माध्यम से प्रकाशित हुई थी। अज्ञेय तब 'शेखर—एक जीवनी' के लेखक यानी कथाकार के रूप में चर्चित हो गये थे और आन्तरिक मनोवेगों तथा प्रेम के त्रिकोण में मुझे जैनेन्द्र जी की परम्परा के पट्ट-शिष्य लगते थे। कभी-कभी मुझे ऐसा भी अहसास होता था कि अपनी रचनात्मक दिशा में जैनेन्द्र जी मूल आलेख है और "अज्ञेय" नये ढंग से उनकी संशोधित प्रतिलिपि।

1943 में जब मैं एक बार तीसरे पहर जैनेन्द्र जी के घर पहुंचा तो अज्ञेय को फौजी वर्दी में देखकर दंग रह गया। उन्होंने दाढ़ी कटवा ली थी और कैप्टेन की वर्दी तथा पी-कैप पहने हुए थे। उस समय जापान के खिलाफ अंग्रेजों की लड़ाई चल रही थी और आसाम तथा बर्मा फ्रंट पर घमासान युद्ध हो रहा था। वात्स्यायन जी अंग्रेजी फौज में कैप्टेन बनकर आसाम फ्रंट पर जा रहे थे। जैनेन्द्र जी और भगवती भाभी बड़ी आत्मीयता से उन्हें विदाई देने के लिए नीचे खड़े हुए थे। भाभी जी के हाथ में थाली थी जिसमें रोली, चावल और नारियल रखा हुआ था। अज्ञेय जी को मांगलिक विदाई देने के लिए वे उन्हें रोली का टीका लगाना चाहती थी। अज्ञेय जी झिझक रहे थे, पीछे हट रहे थे। उन्हें अच्छा नहीं लग रहा था। मितभाषी तो थे ही। टालते हुए संकोच के साथ बार-बार कह रहे थे कि इसकी क्या जरूरत है। लेकिन भगवती भाभी नहीं मानी। उन्होंने टीका लगाया और हाथ में नारियल दिया। कलाई में वे कलावा बंधवाना नहीं चाहते थे। अज्ञेय जी जब पहली बार मुझसे मिले थे तब उनका रूप बिलकुल दूसरा स्वदेशी था और आज वह बिलकुल ही दूसरे रूप में सामने खड़े थे। उनके कैप्टेन बनने से पहले किसी को मालूम ही नहीं था कि वे फौज में जा रहे हैं। रेडियो से संबंधित दो ही लेखक तब फौज में गये थे—एक उर्दू के प्रतीकवादी कवि एन० एम० राशिद और फ्रायडवादी अज्ञेय। एक तरफ वात्स्यायन जी की आधुनिकतम मिलिट्री ड्रेस थी दूसरी तरफ रोली का टीका अचकचा लग रहा था। अंग्रेजों की तरफ से वे लड़ने

शेष पृष्ठ 77 पर

जाकिर हुसैन का हिन्दी के विकास में योगदान

—प्रो॰ माजदा असद*

भारत के तीसरे राष्ट्रपति और जामिया इस्लामिया के संस्थापक डा॰ जाकिर हुसैन का मानना था कि शिक्षा मातृभाषा के द्वारा दी जानी चाहिए। संभवतः इसीलिए जामिया इस्लामिया में उर्दू को शिक्षा का माध्यम बनाया गया, किन्तु हिन्दी भी वहां साथ-साथ आरंभ से ही अनिवार्य रूप से पढ़ाई गई। जाकिर साहब ने उर्दू के साथ-साथ हिन्दी के विकास पर बराबर जोर दिया। जामिया की राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली में आरंभ से ही हिन्दी और उर्दू को एक-दूसरे के निकट लाने की कोशिश की गई। सन् 1947 में वर्धा में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन में और 22, 23, अगस्त 1964 में मद्रास के शिक्षा सम्मेलन में मातृभाषा और राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के संबंध में जाकिर साहब ने जो वक्तव्य दिए, वे बहुत महत्वपूर्ण हैं। उन्होंने बताया कि हिन्दी किस तरह शिक्षा के माध्यम के रूप में अपनाई जा सकती है। उन्होंने जामिया में आरंभ से ही हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था कराई। महात्मा गांधी के सुपुत्र श्री देवदास गांधी यहां हिन्दी पढ़ाया करते थे। जाकिर साहब ने दोनों भाषाओं उर्दू और हिन्दी को एक-दूसरे के निकट लाने का प्रयास किया।

राष्ट्रपति होने के बाद उन्होंने अपना पहला भाषण हिन्दी में ही दिया और कहा, "सारा भारत मेरा घर है और उसमें रहने वाले मेरे परिवार के सदस्य हैं।"

जाकिर साहब हिन्दी के संबंध में बहुत उदार विचार के थे। उन्हें अपनी राष्ट्रभाषा से बहुत गहरा प्रेम था, जिसकी अभिव्यक्ति उन्होंने समय-समय पर अपने हिन्दी संबंधी वक्तव्यों में की।

1. हिन्दी देश की एकता की कड़ी है।

2. हिन्दी की प्रगति से देश की सभी भाषाओं की प्रगति होगी।

3. तमाम विरोधों के बावजूद एक दिन सबको हिन्दी स्वीकार करनी ही है।

4. हिन्दी वह धागा है, जो विभिन्न मातृभाषाओं रूपी फूलों को पिरोकर भारत के लिए सुंदर हार का सृजन करेगी।

5. भारत देश के अलग-अलग भागों के लोगों को मिलाने के लिए एक भाषा जरूरी है और हमारे संविधान में हिन्दी को देवनागरी लिपि में इस काम के लिए चुना गया है। यह हमारा राष्ट्रीय फैसला सबको मंजूर है।

6. हिन्दी का प्रचार करना राष्ट्रीय काम है। निःसंदेह वह दिन दूर नहीं जब हिन्दी असली अर्थ में 'राष्ट्रभाषा' होगी।

7. हिन्दी राष्ट्रीय एकता का सर्वश्रेष्ठ माध्यम है। इसकी विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं से शत्रुता या ईर्ष्या नहीं।

*C-1, सरस्वती कुंज, ग्रुप हाउसिंग सोसाइटी, चिल्ला, (न्यू अशोक नगर) दिल्ली-110091

जाकिर साहब की हिन्दी के संबंध में बहुत स्पष्ट नीति थी। वे यह बात अच्छी तरह जानते थे कि अंग्रेजी सदैव के लिए शिक्षा का माध्यम नहीं रह सकती। इस बात को उन्होंने बार-बार कहा। जाकिर साहब की बड़ी इच्छा थी कि उनका लिखा हुआ सम्पूर्ण साहित्य हिन्दी में प्रकाशित हो जाए। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक रियासत का अनुवाद हिन्दी में करने के लिए उन्होंने मुझसे स्वयं कहा था। यह अनुवाद हिन्दी में सन् 1971 में 'प्लेटो की रिपब्लिक' के नाम से प्रकाशित हो चुका है। अनुवाद के लिए जब यह पुस्तक उन्होंने मुझे दी तो विशेष रूप से उन्होंने इस बात पर बल दिया कि यह अनुवाद सरल, सरस और सहज भाषा में किया जाए। वे भाषा की सरलता और सरसता पर विशेष बल देते रहे। दिल्ली विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति प्रो॰ गंगोली को डा॰ जाकिर हुसैन साहब ने लिखा था कि उनकी अर्थशास्त्र सम्बन्धी पुस्तकों का हिन्दी में अनुवाद कराया जाए। जाकिर हुसैन साहब ने हम दोनों, मेरे और असद साहब के नाम भी उनके पास भेजे थे और कहा था कि इस काम में वह हमारा सहयोग लें। हम लोग प्रो॰ गंगोली से इस संबंध में मिले भी। उस समय रिपब्लिक के अनुवाद का काम चल रहा था। मैंने भी गंगोली से कहा कि पहले रियासत का हिन्दी अनुवाद पूरा कर लें उसके बाद अर्थशास्त्र संबंधी पुस्तकों के अनुवाद के कार्य को आरंभ करेंगे।

3 मई, सन् 1969 ई॰ को काल के क्रूर हाथों ने जाकिर साहब को हम से छीन लिया। रिपब्लिक, जिसको छापने के लिए उस समय बड़े-बड़े प्रकाशक आते थे और हमारे पास चक्कर लगाते थे जाकिर साहब की आंखें मूंदते ही उन्होंने आंखें फेर लीं। हम लोगों ने किस तरह जाकिर साहब के मृत्यु के उपरांत रियासत के हिन्दी अनुवाद छपवाया उस समय बड़ा कठिन कार्य था।

जाकिर साहब ने अपनी लगभग सभी उर्दू की पुस्तकों में हिन्दी का प्रयोग किया है।

जाकिर साहब की इस प्रकार की भाषा का प्रयोग बहुत ही सहज, सरल और भावशाली होता था। भाषा में प्रवाह पर उन्होंने विशेष बल दिया। अवसर अनुकूल भाषा का प्रयोग जाकिर साहब की बड़ी विशेषता थी। जैसा अवसर होता और जैसी सभा होती, जैसे लोग होते जाकिर साहब उसी प्रकार की भाषा का प्रयोग करते। एक सभा में हिन्दी के साहित्यकारों को संबोधित करते हुए जाकिर साहब ने कहा, "आपको लोगों की तालियों और जय-जयकारों की जरूरत नहीं है। आपको वोट भी शायद ही कभी दरकार हों। सच्ची बात पर आप अड़ सकते हैं। आप अड़ेंगे तो आपको कोई मुस्लिमलीगी भी न कह सकेगा। उर्दू को उसका हक दिलाइए। फिर आप देखेंगे कि भरोसे और मुहब्बत के ऐसे स्रोते हमारे देश में फूटते हैं जिनसे सारी कौमी जिंदगी सेराब होगी और एक तरह से जिंदगी की ऋतु ही बदल जाएगी।" जाकिर साहब भली-भांति समझते थे कि दोनों भाषाओं

का विकास एक-दूसरे के सहयोग से ही हो सकता है। उर्दू और हिन्दी दोनों साथ-साथ चल कर ही तरक्की कर सकती है।

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के कुलपति होने पर जाकिर साहब ने वहां हिन्दी विभाग बनाया। जाकिर साहब के वहां जाने से पहले इस संस्था में केवल एक पंडितजी थे। जाकिर साहब ने एम० ए० की कक्षा वहां शुरू की। शोध का कार्य आरंभ कराया। विभाग में बहुत-सी नियुक्तियां उन्होंने अपने समय में कीं। हिन्दी विभाग में प्रोफेसर, रीडर और प्राध्यापक नियुक्त किए गए। इस विभाग को हिन्दी जगत में प्रतिष्ठित करने का काम जाकिर साहब के द्वारा ही सम्पन्न हुआ।

हिन्दी भाषा के संबंध में बार-बार जाकिर साहब का यही कहना था कि ऐसी भाषा लिखें जो सीधी-सादी और सरल हो। पढ़ने वाले की समझ में आ जाए। उसमें कटुता और कर्कशता न हो। कोमलकांत पदावली से युक्त मधुर भाषा पर उन्होंने विशेष बल दिया। अपने हिन्दी भाषणों में जाकिर साहब सीधी-सादी और सरल भाषा को विशेष महत्व देते थे। उनकी भाषा श्रेष्ठ हिन्दी का आदर्श नमूना हो सकती है और इसे जन-जन में फैला कर लोकप्रिय बनाया जा सकता है। □

पृष्ठ 36 का शेषांश

दुनिया के मित्रों और शत्रुओं में बांटकर दिग्विजय की दिशा में गतिशील होने की हमारी आशावास्तुका सपाट दिमागीय भी अब उजागर हो चुका है।"

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास क्रम में अन्य भारतीय भाषाओं और साहित्यकारों का सान्निध्य-योग हर दृष्टि से उल्लेखनीय है। विशेषकर भारतीय भाषाओं के अधिकांश उल्लेखनीय ग्रंथों का हिन्दी में अनुवाद और उनका प्रसारण।

यदि भाषा की उपादेयता अभिव्यंजना की मधुरता है, तो साहित्य की सरसता उन अनुभावों की ग्राह्यता है। स्वातंत्र्यतोत्तर हिन्दी साहित्य की चर्चा निश्चित रूप से हमारे लिए गौरवान्वित अनुभूति है। हम अपने साध्य की बदौलत साधना में तभी अग्रणी साबित होंगे जब राष्ट्रपिता बापू के अनुसार अंग्रेजी की गुलामी से मुक्त होकर अपने वैचारिक पांवों पर खड़े होंगे तथा भारतीय साहित्य की अस्मिता एवं भारतीय संस्कृति के बोधों की व्याप्ति हिन्दी साहित्य में करेंगे।

इस बीच साहित्य के मूल्यों तथा प्रतिबद्धताओं पर गंभीर चर्चा होती रही है, लेकिन शिल्प, शैली तथा भाषा के प्रकारों पर कम बहस हुई है। नैतिक मूल्यों तथा सांस्कृतिक धरातल की खोज भी कम रही है। गद्य तथा पद्य दोनों में संख्यागत वृद्धि स्वागत योग्य है। क्योंकि प्रतिवर्ष हिन्दी में 4 से 6 हजार नई पुस्तकें प्रकाशित हो रही हैं तथा दैनिक साप्ताहिक और मासिक पत्रों की भी बाढ़ है, लेकिन कोई रवीन्द्र, शरत, प्रेमचन्द तथा प्रसाद नहीं पैदा हो रहा है।

आजादी के सैंतालिस वर्षों बाद भी हम कहीं संक्रमन-काल में तो नहीं?"

इन प्रश्नों का मैं उत्तर ढूंढ ही रहा था कि मेरे सामने मनीषी साहित्यकार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का वह कथ्य सामने आया जो उन्होंने आज के वर्षों पहले हिन्दी विद्यापीठ देवघर के दीक्षांत समारोह में बोलते हुए कहा था—

"साहित्य-सेवा या मातृभाषा की सेवा का क्या अर्थ है। किसे सामने रखकर आप साहित्य लिखने जा रहे हैं, आपके वक्तव्यों का लक्ष्यीभूत श्रोता कौन है? हिन्दी भाषा कोई देवी-देवता की मूर्ति का नाम नहीं है। हिन्दी की सेवा करने का अर्थ हिन्दी की प्रतिमा बना कर पूजना नहीं है। यह लाक्षणिक प्रयोग है। इसका अर्थ है हिन्दी के माध्यम द्वारा समझने वाली विशाल जनता की सेवा। कभी-कभी हम लोग इस भाषा के प्रति होने वाले अन्यायों से विक्षुब्ध होकर गलत ढंग के स्वभाषा-प्रेम का परिचय देते हैं। अपनी भाषा, अपनी संस्कृति और अपने साहित्य से प्रेम होना बुरी बात नहीं है। पर जो प्रेम ज्ञान द्वारा चालित और श्रद्धा द्वारा अनुगमित होता है वही प्रेम अच्छा है। केवल ज्ञान बोझ है। केवल श्रद्धा अन्धा बना देती है। हिन्दी के प्रति जो हमारा प्रेम है वह भी ज्ञान द्वारा चालित और श्रद्धा द्वारा अनुगमित होना चाहिए। हमें ठीक-ठीक समझना चाहिए कि हिन्दी की शक्ति कहां है। हिन्दी इसलिए बड़ी नहीं है कि हममें से कुछ लोग इस भाषा में कहानी या कविता लिख लेते हैं या सभा-मंचों पर बोल लेते हैं। नहीं, वह इसलिए बड़ी है कि करोड़-करोड़ जनता के हृदय और मस्तिष्क की भूख मिटाने में यह भाषा इस देश में सब से बड़ा साधन हो सकती है, हमारे पूर्वजों ने दीर्घ काल की तपस्या और मनन से जो ज्ञान-राशि संचित की है उसे सुरक्षित रखने का यह सबसे मजबूत पात्र है, अकारण और सकारण शोषित और प्रेषित मूढ़ निर्वाक जनता तक आशा और उत्साह का संदेश इसी जीवन्त और समर्थ भाषा द्वारा पहुंचाया जा सकता है, यदि देश में आधुनिक ज्ञान-विज्ञान को हमें जनसाधारण तक पहुंचाना है तो इसी भाषा का सहारा लेकर हम यह काम कर सकते हैं। हिन्दी इन्हीं संभावनाओं के कारण बड़ी है। यदि वह यह काम कर सकती है तो उसका भविष्य अत्यंत उज्जवल है। रेडियों स्टेशनों से न बोल कर और सिक्कों पर छाप कर उस भाषा का कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता। यदि वह इन महान उद्देश्यों के अनुकूल है तो फिर वह देश में हिमालय की भांति अचल होकर रहेगी, हिमालय की भांति उन्नत उतनी महान हिन्दी जनता की भाषा है। जनता के लिए ही उसका जन्म हुआ था और जब तक वह जनता के चित्त में आत्म-बल संचारित करती रहेगी, उसके हृदय और मस्तिक की भूख मिटाती रहेगी, सभी तक उसका जीवन सार्थक है। जो लोग इस भाषा और इसके साहित्य की सेवा करने का व्रत लेने जा रहे हों, उन्हें यह बात कभी नहीं भूलनी चाहिए।"

साहित्य एक सारस्वत यज्ञ है। सत्य और संस्कार उसके दो ऐसे चरण हैं जिनमें से कोई लकवाग्रस्त होता है तो उसका असर साहित्य के गति पर पड़ेगा। मेरा यह मानना है कि आज भारतीय साहित्य तीव्र गति से आगे बढ़ रहा है, राष्ट्रभाषा और संपर्क भाषा के नाते हिन्दी का योगदान इसमें सबसे अधिक है लेकिन पिछले दो दशकों से हिन्दी साहित्य किसी संक्रमण काल में है। मूल्यों की तलाश और दिशा का बोध ये दो अनिवार्य शर्तें हैं, जिनकी हम अवहेलना नहीं कर सकते हैं। आज हमारे साहित्यकारों के ऊपर बहुत बड़ा उत्तरदायित्व इस बात पर है कि वे एक ओर भारतीय साहित्य के संपर्क सूत्रों को दृढ़ करें वहीं दूसरी ओर हिन्दी की अंतर्राष्ट्रीय व्यापकता को ध्यान में रखते हुए इसे गरिमा प्रदान करें। □

विश्व हिंदी दर्शन

चैक देश में हिंदी

—विष्णु प्रभाकर*

जब कभी भी कोई दूसरा देश किसी दूसरे देश की भाषा सीखने में रुचि लेता है तो उस देश को खुश होना स्वाभाविक है। हम भी समय-समय पर बड़े गर्व से कहते रहते हैं कि अमुक-अमुक देश हमारी संपर्क भाषा हिन्दी सीखने में बहुत रुचि ले रहे हैं। हमें इस बात पर गर्व होता है।

विदेशों से जब भी कोई हमारे देश में आया तो उसने इस देश की लोक प्रचलित भाषा सीखने की पहल की। इतना ही नहीं उसका प्रचार और प्रसार करने का सार्थक प्रयत्न भी किया।

ऐसा क्यों होता रहा, इस बात की गहराई में जाने का हम लोगों ने कोई प्रयत्न नहीं किया। जब भी कोई समर्थ राष्ट्र दूसरे देश में जाता है तो उसका उद्देश्य या तो वहां अपना व्यापार फैलाना होता है या फिर उस देश को कमजोर पाकर उस पर अपना अधिकार करना होता है। यह काम तभी हो सकता है जब विदेशी हमलावर उस देश की जनता को प्रभावित कर सकें और ऐसा वे उस देश की संपर्क भाषा को सीख कर ही कर सकते हैं और जनता के विश्वास को जीत सकते हैं।

ईसाई जब इस देश में आए तो सभी जानते हैं, उन्होंने हिन्दी के प्रचार और प्रसार के लिए कितना काम किया। वे हम पर कोई अहसान नहीं कर रहे थे बल्कि यह उनका स्वार्थ था। हमारे मनों को जीतने के लिए उन्हें हमारी भाषा से बड़ा कोई माध्यम नहीं मिल सकता था।

भाषा मात्र शब्द नहीं है। भाषा संस्कृति की वाहक है। हम क्या हैं, इसकी पहचान हमारी भाषा के द्वारा ही होती है। इसीलिए हिन्दी के एक विदेशी विद्वान ने मुझ से कहा था, "हम आपकी भाषा का व्याकरण और उसके शब्द ही नहीं सीखना चाहते हम आपकी संस्कृति को भी समझना चाहते हैं बल्कि आपकी संस्कृति को समझना ही आपको अपना बनाना है।"

हिन्दी को जब से हमने अपनी संपर्क भाषा स्वीकार किया, तब से इसके प्रचार और प्रसार से मेरा गहरा संबंध रहा है। देश के स्वाधीन होने से पूर्व तो हम हिन्दी को राष्ट्रभाषा कहते थे। लेकिन स्वाधीनता के बाद सभी भाषाएं राष्ट्रभाषाएं मानी गई और उन सबको जोड़ने वाली हिन्दी "संपर्क भाषा" के नाम से विख्यात हुई।

मैं मूलतः एक लेखक हूं। उस दृष्टि से मेरे लिए संसार की सारी भाषाएं समान हैं। सभी भाषाओं से मुझे प्यार है। हिन्दी के प्रचार और प्रसार से मेरा संबंध अनायास ही हो गया था। उससे मुझे एक लाभ हुआ कि मैं न केवल अपने देश के सभी प्रमुख साहित्यकारों के संपर्क में आया बल्कि समुद्र पार के देशों के अनेक लेखकों से मेरे आत्मीयतापूर्ण संबंध बन गए।

इस लेख में केवल एक देश की चर्चा करना चाहूंगा। जब मेरा उससे संबंध स्थापित हुआ, तब उसका नाम 'चेकोस्लोवाकिया' था। संबंध तो मेरे 1953 में ही स्थापित हो गए थे लेकिन मुझे वहां जाने का अवसर अप्रेल, 1989 में ही मिल सका। उस समय हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान और मेरे प्रिय मित्र डा॰ पोरिज़्का का देहांत हो चुका था। उनके मित्र और शिष्यों से मेरी उनके संबंध में बहुत बातें हुई। उसके कुछ ही दिन बाद वह देश दो देशों में बंट गया। एक का नाम हुआ चेक देश और दूसरे का स्लोवाकिया। चेक देश में हिन्दी का अधिक प्रचार व प्रसार हुआ। विश्वविद्यालय में भी प्राच्य भाषाओं का एक अलग विभाग है। बहुत दिनों तक डा॰ पोरिज़्का इस विभाग के अध्यक्ष रहे। बाद में अनेक कारणों से उन्हें ये पद छोड़ना पड़ा लेकिन हिन्दी का काम वह जिंदगी के अंतिम क्षण तक करते रहे। हमारे परिचय की अवधि में वह दो बार भारत भी आए। दोनों बार वह मुझ से मिले। वह कम्युनिस्ट नहीं थे, कम्युनिस्ट मैं भी नहीं हूं। शायद इसी कारण वह मेरी ओर आकृष्ट हुए। लेकिन हम दोनों का सम्बन्ध केवल हिन्दी भाषा तक ही था।

वह न केवल भाषा के पण्डित थे, बल्कि भारत तत्व विद्या के वैज्ञानिक शोधकर्ता भी थे। गीता के पण्डित थे, इसलिए डाक्टर आफ डिवीनिटी की उपाधि भी मिली थी। इसलिए उनकी भारत में रुचि केवल भाषा को लेकर ही नहीं थी बल्कि उसकी संस्कृति में भी थी। उन्होंने चेक विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए "हिन्दी भाषा का पाठ्यक्रम" नामक एक पुस्तक भी तैयार की थी। अंग्रेजी में इस Hindustina Hindi Language Course का नाम दिया था। अभी वह इसका प्रथम भाग ही तैयार कर पाए थे। इसके दूसरे भाग 'हिन्दी भाषा का कोश' पर काम करते-करते उनका देहांत हो गया।

प्रथम भाग तैयार करने में ही उन्होंने आठ वर्ष लगा दिए थे। प्रसिद्ध भाषाविद् डा॰ सुनीति कुमार चटर्जी और डा॰ जगदीश चन्द्र जैन के अलावा वह मुझ से भी निरंतर पत्र-व्यवहार करते रहते थे और भाषा एवं संस्कृति संबंधी प्रश्न पूछते रहते थे। मुझसे इसलिये कि मेरा और खडी बोली (हिन्दी) का जन्म एक ही जनपद में हुआ है।

*818-कुण्डेवालान, अजमेरी गेट, दिल्ली-6

"हिन्दी भाषा का पाठ्यक्रम" यह पुस्तक रायल साईज के लगभग 550 पृष्ठों में तैयार हुई।

उनके शिष्यों में डा॰ स्मेकाल (अब भारत में राजदूत) और डा॰ व्लादिमीर मिल्तनेर आदि से मेरी मुलाकात हुई है। चेक यात्रा की दौरान हमारे साथ जो सहायिका रहीं उसे भी हिन्दी आती थी। वह अभी हिंदी पढ़ रही थी। लेकिन वह अच्छी हिंदी बोल लेती थी। मेरे भारत लौटने पर उसने मुझे अंग्रेजी के साथ-साथ हिंदी में भी पत्र लिखा था। मैंने यह अनुभव किया कि चेक लोग हिन्दी पढ़ने में काफी रूचि लेते रहे हैं। डा॰ पोरिज़्का ने गीता का भी गहरा अध्ययन किया था।

मेरे पास उनके सौ पत्र सुरक्षित हैं और उनमें वो प्रायः गीता के श्लोक उद्धृत किया करते थे।

उनकी पाठ्यक्रम की इस पुस्तक से एक बात बहुत स्पष्ट हो जाती है कि वे जिस प्रकार भाषा विज्ञान में गहराई से पैठते थे, उसी प्रकार वह इस बात का भी पूरा ध्यान रखते थे कि उस पुस्तक को पढ़ते हुए पाठक उस देश के व्यक्तियों के रहन-सहन, स्वभाव आदि के बारे में अर्थात संस्कृति के बारे में जान सके। पूरी पुस्तक में इस बात के प्रमाण मिलते हैं। जब वह किसी घर का वर्णन करते हैं तो उसकी पूरी तस्वीर खींच देते हैं, जैसे "हमारे बैठने, खाने और सोने के कमरे हैं। मकान में बैठने का कमरा खूब लम्बा-चौड़ा है। बीचोंबीच एक छोटी सी मेज है। इस पर मेजपोश रखा है। फूलदान में ताजे फूलों का गुलदस्ता रखा है। छत से बिजली की बती झूलती है। दीवारों पर कुछ चित्र टंगे हैं। दरवाजे के किवाड़ों में कांच लगे हैं। खिड़कियों पर परदे लटकते हैं। खिड़कियों के शीशों से बाहर के बगीचे के पेड़ दिखाई देते हैं।

खाने का कमरा इतना बड़ा नहीं तो भी हवादार है। उसमें हम खाना खाते हैं। सोने के कमरे में दो पलंग हैं। उस कमरे के साथ स्नानगृह है। स्नानगृह में एक बड़ा टब है, जिस में दो नल लगे हैं- एक गरम पानी का और दूसरा ठंडे पानी का। रसोईघर में बिजली का चूल्हा है। घर की सीढ़ियों पर हर समय आने-जाने का शोर सुनाई देता है।

यह वैसे किसी भी देश के घर का दृश्य हो सकता है। लेकिन जब वह एक बातचीत के दौरान हिन्दी के समाचार-पत्रों की बात करते हैं तो वे जानना चाहते हैं कि अमुक समाचार-पत्र किस दिन का है और दिनों के लिए उन्हीं नामों का व्यवहार करते हैं जैसे भारत में करते हैं-जैसे बुधवार, रविवार आदि।

जब वह यह प्रश्न पूछते हैं कि क्या इस समय रातें बड़ी हैं या छोटी उत्तर मिलता है-न बहुत छोटी है न बहुत बड़ी। रात और दिन की लम्बाई एक सी है तो वह इसमें भारत की विशेषता दर्शाते हैं क्योंकि यूरोप के देशों में रात और दिन में बहुत अन्तर होता है। यहां बहुत कम।

भारत के महा नगरों और तीर्थों का वर्णन भी वह अपने इन पाठों में देते हैं।

एक और बात उनकी पुस्तक से प्रकट होती है कि वह जब हिन्दी भाषा पढ़ाने की बात करते हैं तो उनके सामने संस्कृत प्रधान भाषा होती है। जैसे "जो व्यक्ति बचपन में स्वस्थ रहता है वह बलवान और दीर्घजीवि बनता है।" ऐसा नहीं है कि उन्हें उर्दू अथवा हिन्दुस्तानी शब्दों से परहेज है। वह 'अपेक्षा' और 'तुलना' के साथ-साथ 'निस्बत,' 'बनिस्बत' और 'तंदुरूस्ती' जैसे शब्दों का प्रयोग भी सिखाते हैं लेकिन कुल मिलाकर उनका और संस्कृत शब्दों पर अधिक रहता है। 'साढ़े आठ बजे भोजन करने और साढ़े दस बजे सोने की बात' भी भारत के संदर्भ में आती है। इस तरह यह सारे पाठ हमें परोक्ष रूप में भारत के बारे में सारी जानकारी दे देते हैं।

कभी-कभी वह छोटी-छोटी कहानियों का प्रयोग करते हैं। फिर उसके एक-एक वाक्य का विश्लेषण करते हुए उसका अर्थ बताते हैं। हमारे गणतन्त्र दिवस को वह नहीं भूलते। हमारी ऋतुओं का भी वह विषद् वर्णन करते हैं। अधिक-पास (मलमास) के बारे में भी वह बताते हैं। हमारे शक् सम्वत और तिथियों का भी वह विस्तार से विवेचन करते हैं। जैसे वह एक स्थान पर बताते हैं-तारीख 26 नवम्बर, 1949 ई॰ (मिती मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी-सम्वत 2006 विक्रमी) को"। इस वाक्य का वह फिर अपने चेक पाठकों के लिए विश्लेषण करते हैं।

उन्होंने अपनी इस पुस्तक में मेरे हाथ का लिखा एक पत्र मेरी हस्तलिपि उद्धृत किया है क्योंकि इसमें मैंने अपनी हिमालय यात्रा का वर्णन किया है।

भारत के उत्तर में हिमालय पर्वत है। हमारी दो बड़ी और पवित्र नदियां गंगा और यमुना इसी पर्वत से निकलती हैं। जहां इनका उद्गम है, वहां तीर्थ बन गए हैं। प्रतिवर्ष हजारों यात्री वहां जाते हैं। वास्तव में उद्गम तीर्थों से कुछ और आगे हैं। वहां तक जाना बहुत ही कठिन है। कुछ साहसी लोग ही जा पाते हैं। हमारी पार्टी उस स्थान तक गई, जहां एक बहुत बड़ी हिमानी (ग्लेशियर) से गंगा निकलती है। वह स्थान समुद्रतल से 13,000 फुट ऊंचा है। मार्ग विकट है, चोट लग जाना साधारण बात है, पर हमारा दल आनन्दपूर्वक यात्रा करके लौट आया।

इससे स्पष्ट है कि वह लोग हमारे इतिहास और भूगोल में भी रुचि रखते हैं। यानि हमारी भाषा को, हमारे देश और संस्कृति से अलग करके नहीं देखते। ऐसे अनेक पत्र व लेख इस पुस्तक में दिए गए हैं अर्थात हमारे देश में जो कुछ होता है उसको जानने की ललक उनमें है। हिंदी के सभी प्रख्यात लेखकों की रचनाएं और रचनाओं के अंश भी देने की प्रवृति इस पुस्तक में दिखाई देती है। और इस सबको जानने के लिए वे बार-बार भारत में अपने मित्रों को लिखते रहते थे। वे एक-एक घटना के मूल में जाने का प्रयत्न करते थे। अवसर आने पर वह दैनंदिन जीवन की चर्चा भी विस्तार से करते हैं। जैसा कि मैं कह आया हूं कि व्याकरण व भाषा विज्ञान की दृष्टि से वे हर वाक्य का विश्लेषण करते हैं।

वे हमारे गांवों में जाते हैं, हमारे शहरों में जाते हैं। हमारे घरों में जाते हैं। वे हमारे अन्तर में भी जाते हैं। इसीलिए यह पुस्तक मात्र पुस्तक ही नहीं रह जाती, हमारे देश का दर्पण बन जाती है।

वह हमारी भाषा को अपने देश की संस्कृति से नहीं जोड़ते बल्कि हमारे ही देश की संस्कृति से जोड़ते हैं।

अपने अध्ययन में वह भारत के नाना रूप लेखकों की रचनाएं पढ़ते हैं और जहां वह उनके द्वारा किए गए किसी शब्द के प्रयोग में अन्तर देखते हैं वहां वह तुरंत उसका स्पष्टीकरण मांगते हैं। एक लेखक मेज के दांई ओर लिखता है और दूसरा लेखक मेज के दायें ओर-ऐसा क्यों? ऐसे अनेक उदाहरण हैं जो उनकी जिज्ञासा और अंतरदृष्टि को दर्शाते हैं।

वे भारत की राजनीति में तो नहीं उलझते थे पर वे भारत के विधान-संविधान व पंचवर्षीय योजनाओं जैसे रचनात्मक कार्यों को पूरी तरह समझने की कोशिश करते थे। उदाहरण के रूप में बताने के लिए वे हमारे

ही देश के लेखकों के ही वाक्य चुनते थे। एक शब्द में कह सकते हैं कि वह हिन्दी और हिन्दुस्तान को एक बना देते हैं।

हिन्दुस्तान का अर्थ होता है-आत्मा से आत्मा को पहचानना। ये सभी तो संस्कृति के उपादान हैं। डा॰ पोरिज्का का किसान प्रेमचंद का किसान है, किसी चेक लेखक का नहीं।

दूसरे खंड को वह एक कोष के रूप में लिख रहे थे। वह कोश पूरा नहीं हो सका। उनका शरीर पूरा हो गया, लेकिन सौभाग्य से उसके कुछ पन्ने मुझे वहीं के सुप्रसिद्ध भाषाविद् डा॰ क्रासा की कृपा से प्राप्त हो गए हैं। पाठक देखेंगे कि वो इसमें हिंदी के एक-एक शब्द को अपने चेक पाठकों के लिए विश्लेषित करते हैं। उदाहरण के लिए मैं उनके दो-तीन पृष्ठ यहां उद्धृत कर रहा हूं। (देखें परिशिष्ट-I) जो इस बात का प्रमाण है कि कोश तैयार करना विशेषकर किसी दूसरे देश की भाषा का कोश तैयार करना कितने गहन अध्ययन की अपेक्षा रखता है और यह भी कि अध्ययन करने वाला कितना ईमानदार है।

डा॰ पोरिज़्का से मेरा प्रथम परिचय मार्च, 1958 में हुआ था तब वह एक प्रतिनिधि मण्डल के साथ भारत आये थे। यहां से लौटकर उन्होंने मुझे 15 मार्च,1958 को एक प्यारा सा पत्र लिखा,लेकिन वह अंग्रेजी में था।

उसी पत्र से हमारी भाषा सम्बन्धी यात्रा आरम्भ हुई। मैंने उसका विस्तृत उत्तर हिन्दी में दिया। उन्होंने ढेरों प्रश्न पूछे थे। उसका बाद में उन्होंने मुझे हिन्दी में पता लिखा तब से लेकर 1980 तक हिन्दी में ही लिखते रहे। मैं उनका हिन्दी में लिखा पहला व अन्तिम पत्र दोनों यहां दे रहा हूं। (देखें परिशिष्ट-2) उन पर मुझे टिप्पणी करने की **आवश्यकता नहीं, वे स्वयं बोलते हैं।**

मैं यहां उनके एक शिष्य के भी दो पत्र दे रहा हूं (देखें परिशिष्ट-3) इसलिए कि हम समझ सकें कि वह हिन्दी कैसी होगी जो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर रूप लेगी। लेकिन साथ ही हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि यह एक देश की कहानी है। दूसरे देशों की हिन्दी में अन्तर होना स्वाभाविक है। यह अन्तर ही तो भाषा को गति देता है, समृद्ध और सशक्त बनाता है।

हम हिन्दी भाषाभाषी व्यक्तियों को इस बात को विशेष रूप से समझना है।

परिशिष्ट 1

अ

अ- a- (S. a-; cf. अन- an-) předpona záporová nebo privativní
a negative or privative prefix

अशांति aśānti f. {a-; śānti} S. neklid, nedostatek klidu
unrest, want of tranquillity

अंक aṅk m.S. hák, ohyb; klín (sedící osoby); bok (těla); objetí;
křivá čára, značka (znak, ražba na mincích apod.); bod (varu,
mrazu apod.; bod dosažený ve hře nebo v zápase); známka (vyjadřující
stupeň prospěchu žáka ve škole apod.); číslice; číslo (jednotlivý
vytisk časopisu apod.); jednání (dramatu)
hook, bend; lap (of a seated person); flank (of the body);
embrace; curved line, mark (sign, stamp on coins, etc.); point
(boiling, freezing point, etc.; point scored in a game or in a
contest); mark (indicating a degree of a student's accomplishment

in school, etc.); (numerical) figure; number (a single issue of a periodical, etc.); act (of a drama)

अंकगणित aṅkgaṇit, अंक-गणित aṅk-gaṇit m.S. aritmetika

arithmetic

अंकित aṅkit adj.S. označkovaný (opatřený značkou nebo značkami); očíslovaný (označený číslem); opatřený nápisem; vytištěny (razítkem apod.); orazítkovaný; narýsovaný, načrtnutý

marked (having a mark or marks); numbered (marked with a number); inscribed (with); impressed (with a stamp, etc.); stamped; drawn, delineated

अशुद्ध aśuddh adj. {a-; śuddh} S. nečistý; nesprávný, chybný, mylný, pochybený

impure; incorrect, wrong, erroneous, mistaken

अशुद्धि aśuddhi f. {a-; śuddhi} S. nečistota; nesprávnost, chyba, omyl; chyba tisku

impurity; incorrectness, mistake, error; erratum

अशुद्धिपत्र aśuddhipatr(a), अशुद्धि-पत्र aśuddhi-patr(a) m. {a-; śuddhi; patra} S. chyby tisku (seznam tiskových chyb s jejich opravami)

-patr(a), -pattr(a)

errata (list of misprints with their corrections)

अशुभ aśubh {a-; śubh} S. 1. adj. nepříznivý (nevěstící nic dobrého), zlověstný, neblahý (jsoucí zlým znamením); zlý, špatný

inauspicious, ill-omened, sinister (ominous); evil, bad

2. subst. m. zlo, neštěstí, pohroma

evil, misfortune, calamity

अश्रु aśru [aśru, aśśru] m.S. ☐ slza
☒ ☐ tear (tear-drop)

अश्रुत aśrut [aśrut, aśśrut] adj. {a-; śrut} S. ☐ neslyšený;
☒ neslýchaný; nevzdělaný, nezkušený
☒ ☐ unheard; unheard-of; uneducated, inexperienced

अश्रुतपूर्व aśrutpūrv(a), अश्रुत-पूर्व aśrut-pūrv(a) [aśrut-, aśśrut-] adj.
☒ {a-; śrut; pūrva} S. ☐ neslychaný; nebývalý, neobyčejný,
☒ nezvyklý, jedinečný
☒ ☐ unheard-of; unprecedented, uncommon, novel, unique

अश्रुपात aśrupāt [aśru-, aśśru-] m.S. ☐ proud slz; prolévání slz
☒ ☐ flow of tears; shedding of tears

अश्लील aślīl [aślīl, aśślīl] adj. {a-; ślīl} S. ☐ obscénní,
☒ neslušný; pornografický
☒ ☐ obscene, indecent; pornographic

इंकार iṅkār [iṅ-, in-] m.A., v. इनकार

इंक़िलाब iṅqilāb [iṅ-, in-] m. (A. inqilāb), v. इनक़िलाब

इंक़िलाबी iṅqilābī [iṅ-, in-] adj., subst.m. (cf. A. inqilāb);
☒ v. इनक़िलाबी

इंगलिस्तान iṅglistān m. {cf.E. English; P. -istān, -stān}
☒ ☐ Anglie
☒ ☐ England

इंगलिस्तानी iṅglistānī adj. (cf. इंगलिस्तान iṅglistān) ☐ anglický
☒ ☐ English

इंग्लैंड iṅglaiṇd [-ṇd, -nd] m. (E. England) ☐ Anglie
☒ ☐ England

इंगित iṅgit S. l. adj. ☐ naznačený, (narážkou) připomenuty

indicated, hinted at

2. subst.m. posunek, pokyn; naznačení, znamení; narážka

gesture, hint; indication, sign; allusion

इंग्लिस्तान inglistān m., v. इंगलिस्तान

इंग्लिस्तानी inglistānī adj., v. इंगलिस्तानी

इंग्लैंड inglaind [-nd, -nd] m., v. इंगलैंड

इंच iñc [iñc, inc] m.(f.) (E. inch) palec (délková míra, 2,54 cm)

inch (measure, 2.54 cm)

इंजन iñjan [iñ-, in-] m. (E. engine) (hnací) stroj (parní, benzínový, naftový, elektrický; lokomotiva; motor)

engine (worked by steam, gas, petrol, or electric power, and used for imparting motion; locomotive; motor)

रेल का इंजन rel kā iñjan m. lokomotiva

locomotive (locomotive engine)

इंजिन iñjin [iñ-, in-] m. (E. engine), v. इंजन

कढ़ाना karhānā vb.c.ag. (deverb.; cf. काढ़ना kārhnā) dávat (něco) vytáhnout; dávat vyšít (ozdobný vzor apod.); dostávat do popředí (pomáhat někomu, aby vynikl jako zpěvák, hudebník apod.)

to cause to be pulled out; to get (a decorative design, etc.) embroidered; to further (to help a person to get ahead as a singer, musician, etc.)

कढ़ाव karhāv [-āv, -āŏ] m. vyšívání; výšivka

(act of) embroidering; embroidery

कढ़ी karhī f. (cf. Tam. kari) k a r h í <kari> (směs několika druhů ostrého mletého koření; také název pokrmu, k jehož přípravě se tohoto koření používá; složení směsi se řídí druhem jídla <zelenina, luštěniny, mořský ráček, skopove, vejce aj.>)

k a ṛ h ī <curry> (a condiment consisting of several pungent ground spices; also name of a dish cooked with curry powder blended according to the type of food <vegetables, pulse, shrimp, mutton, egg, etc.>)

कण kaṇ m.S. nepatrná částečka (nějaké hmoty); zrnko (písku, soli, prachu apod.); špetka (nejmenší drobet, troška)

minute particle (of something material); grain (of sand, salt, dust, etc.); jot (the least bit)

कणिका kaṇikā f.S. zrníčko (pylu apod.); tělísko (v krvi apod.); nepatrná částečka (nějaké hmoty)

granule (as of pollen, etc.); corpuscle (in the blood, etc.); minute particle (of something material)

कण्टक kaṇṭak m.S., कण्टक- kaṇṭak- [-ṇṭ-, -nṭ-], v. कंटक, कंटक-

(किसी को) खरी-खरी (खरी खरी) सुनाना (kisī ko) kharī-kharī (kharī kharī sunānā vb.c.ag. mluvit otevřeně, říkat (někomu) své mínění; říkat (někomu) nepříjemnou pravdu

to speak out plainly, to give (someone) a piece of one's mind; to speak out the unpalatable truth (to someone)

(किसी को) खरी-खोटी (खरी खोटी) सुनाना (kisī ko) kharī-khoṭī (khaṛī khoṭī) sunānā vb.c.ag. dělat (někomu) kázání (dosl. říkat <někomu> dobrá <a> zlá <slova>), plísnit (někoho), nadávat (někomu)

to take (someone) to task (lit., to say <someone> good <and> bad <words>); to chide, to abuse (someone)

खराद kharād (cf. A. kharṭ; khirāṭa, khirāṭat) 1. m.(f.) soustruh (turner's) lathe

2. f. soustruhování; obrábění

(act of) turning (out) (on a lathe); (act of) shaping

खरादना kharādnā vb.c.ag. (cf. A. kharṭ; khirāṭa, khirāṭat; H. -nā)

soustruhovat; obrábět

to turn on a lathe; to shape

खरादी kharādī m. (cf.A. kharrāṭ) soustružník turner

खरापन kharāpan m. čistota, ryzost (zlata apod.); pravost (autentičnost); poctivost; upřímnost, otevřenost

pureness, purity (of gold, etc.); genuineness (authenticity); honesty; sincerity, plain speaking

खराब kharāb adj. A. špatný (o věcech, o lidech, o chování, o počasí apod.), zlý; zkažený; vadný, defektní; mravně zkažený; bídný, ubohý; ruinovaný; nešťastný, neblahý (den apod.)

bad (thing, man, conduct, weather, etc.), evil; spoiled; faulty, defective; depraved; miserable, wretched; ruined; unfortunate, unlucky (day, etc.)

प्राहा (प्राग) १-५-१९५८

प्रिय मित्र,

आपके ६ अप्रैल के पत्र के लिये बहुत धन्यवाद। उत्तर लिखने में मैंने कुछ देर लगाई इस कारण से कि अधिक पत्र भेजने से आपको कष्ट न हो।

आपकी लिखी हुई सब सूचनाएं और आपकी जीवनकथा आदि ये सब वस्तुएं मेरे लिये और मेरे काम के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। मैं आपकी कृपा का बहुत ही आभारी हूं। आपकी हस्तलिपि पढ़ने में कोई कष्ट न हुआ। केवल आपके जन्म का दिनांक अस्पष्ट है - २१-६-१९१२ पढ़ना चाहिये आपका जीवन अब तक संघर्ष-परिपूर्ण था और आज भी जो स्वतंत्रताप्रेमी शीलस्वभाव आप प्रकट करते हैं वह वस्तुतः आश्चर्यजनक है। मैं आपको पूरी सफलता की कामना भेजता हूं।

संदेह बहुत से हैं - १ 'नमस्ते' शब्द बहुत पाठों में आता है, 'आदाब अर्ज़' किसी में नहीं आता। क्या 'आदाब अर्ज़' किसी न किसी पाठ के अन्तर्गत नहीं हो सकता ? -२ (क्या 'हजामत बनवाना' के स्थान पर 'हजामत बनवानी चाहता हूं' लिखना अशुद्ध है ? 'बाल कटवाने चाहता हूं' भी अशुद्ध है ? -)३ क्या 'हजामत बनवाना' इस वाक्य के अर्थ हैं To get shaved, or to have a hair cut ? दोनों ? (४) 'ईमानदार लड़का' नामक नाटक के पहले दृश्य में आप लिखते हैं 'आयु... १२ वर्ष की है', दूसरे दृश्य में 'आयु... दस वर्ष है'। यदि मैं दूसरे दृश्य में 'आयु' और 'वर्ष' हटाकर 'उम्र' और 'साल' लिख दूं तो आपको कोई आपत्ति न होगी ?-५ 'मोटर उसके ऊपर से निकल गई' = '... उस पर से (निकल) गई' ? दोनों प्रकार शुद्ध हैं ? -६ 'A car "ran over him"' = मोटर ने उसे कुचल दिया (या कुचल डाला)?७ धोबी टोला जा रहा हूं = धोबी टोले में जा रहा हूं ?(८) 'कहना (कहो) एक लड़का बीमार पड़ा हुआ है, एक मोटर ने उसे कुचल डाला' =

कहना कि एक लड़का ... ? 'आपका परिवार नाम क्या है ? प्रभाकर ? हमारे परिवारों का एक ही नाम होता है उदाहरणार्थ 'पोरीज़्का'- मैं विन्त्सेन्त्स पोरीज़्का हूं, मेरा भाई कारेल पोरीज़्का, मेरी बहिन मारिये पोरीज़्का इत्यादि। भारतियों की कोई और प्रथा होगी न ?

जो कुछ अशुद्ध लिखा हुआ आप मेरे पत्र में पाएं उस सब की सूचना भेजिये।

आज भी मैं कुछ पाठ भेज देता हूं। इनको ठीक करने की कृपा करें।

पुनश्च-देवनागरी-लिपि-सुधार के विषय में आपका शुभचिंतक

आपका क्या मत है ?

Vincent Poirzka
Nalevej Legil 9
Praha 16 - Smichov, Czechoslovakia.

शेष पृष्ठ 27 पर

वह स्वतन्त्र नहीं हो सकती।" ये दोनों वाक्य मेरी उसी अवधारणा को पुष्ट करते हैं जिसका मैंने अभी जिक्र किया है।

इस उपन्यास के लिए मैंने मनोवैज्ञानिकों, आध्यात्मवादियों, राजनीतिज्ञों आदि सभी धाराओं के अधिकृत व्यक्तियों से विचार-विनिमय किया है तभी मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं।

मैंने इस उपन्यास का आरम्भ बलात्कार की समस्या को लेकर किया है। इसलिए किया है कि बलात्कार में नारी का दोष नहीं होता लेकिन हमारे मध्यवर्गीय समाज में वह सदा के लिए कलंकित हो जाती है। मैंने यह बताना चाहा है, और पात्रों के माध्यम से ही बताया है कि बलात्कार में केवल शरीर दूषित हो सकता है पर नारीत्व नहीं। और नारी इसी नारीत्व का नाम है, शरीर का नहीं।

इस कृति में जितने भी प्रमुख पात्र आए हैं वह मैंने वास्तविक जीवन से लिए हैं। घटनाएं, भेंट-वार्ताएं सब वास्तविक हैं, काल्पनिक नहीं। समाज में फैले भ्रष्टाचार की शिकार हुई नारी पात्र, अनाथालय में पली, सभी वास्तविक हैं।

केवल मध्यवर्गीय हिन्दू समाज ही नहीं बल्कि दूसरे वर्गों के लोग भी हैं। दूसरे प्रान्तों और दूसरे देशों के पात्र भी हैं। कहीं-कहीं अन्तर होते हुए भी सब की प्रतिक्रिया एक जैसी ही रही है। उन सभी के संघर्ष को मैंने स्वर दिया है। हाँ, मैंने एक नए समाज के निर्माण के लिए एक 'नयी संहिता' की ओर संकेत अवश्य किया है पर कोई समाधान देने की धृष्टता नहीं की है। मेरे सामने केवल तलाश.... और तलाश है।

इस उपन्यास की एक पात्र है विभा। प्रारम्भ में वह एक दुर्बल चरित्र है लेकिन उपन्यास का अन्त होते-होते वह सबसे शक्तिशाली हो उठती है। वही अपने सूक्ष्म अन्तर में 'अर्द्ध-नारीश्वर' को अपनी अर्द्ध संज्ञा में देखती है और हर्ष से चिल्ला उठती है, अरे!
यह तो हमारे ही भगवान् अर्द्धनारीश्वर हैं।

वहाँ बैठा द्वारपाल हंस पड़ता है और कहता है कि, 'तुम लोग हर किसी को भगवान बना देते हो और वह होने से बच जाते हो जो वास्तव में हो।'

विभा चकित रह जाती है, 'यह कौन सी विभा थी जो मेरे अन्तर की आवाज बन गयी।'

'वहीं से उत्तर मिला, वही तो वास्तविक विभा थी। कुछ बातें ऐसी होती हैं जिन्हें हम स्वयं नहीं जानते। कुछ जानते भी हैं तो किसी से कह नहीं सकते। उनका बोझ सलीब की तरह हमें अपने कंधों पर स्वयं ढोना पड़ता है। पर चिन्ता मत करो, तुम्हारी तलाश जारी है अर्द्धनारीश्वर की तरह। तुम्हें पूर्ण करने वाला मिलेगा। अपने को अपने से मुक्त कर लो।'

अब विभा हर आक्रमण के लिए तैयार थी। राह लम्बी है और उसे राह ही चाहिए, मंजिल नहीं। उसका कहीं कोई अस्तित्व होगा तो वह खुद चलकर उसके पास आएगी उसका उद्देश्य भी यही है।

मेरी ज़िन्दगी एक मुसलसल सफ़र है
जो मंजिल पर पहुंचा तो मंज़िल बढ़ा दी।

यह मेरा ही तो स्वर है। मैंने नर-नारी की समानता की खोज में इस उपन्यास में सफ़र ही सफ़र किया है। मंजिल पर नहीं पहुंचा हूँ।

मिथक की बात सिर्फ इतनी ही है। शेष तो जो आज का जीवन है उसी की कहानी है। जैसा मैंने पहले कहा सारे पात्र जीवन से उठाए हैं। उनमें से बहुत-से आज भी जीवित हैं और संघर्ष कर रहे हैं। कुछ गौण पात्र काल्पनिक भी हैं। उनका निर्मित होना आवश्यक था कथा को एक रूप देने के लिए।

मुझे बस इतना ही कहना है। मैं कहां तक सफल हुआ कथा, शिल्प और भाषा, सभी दृष्टियों से, इसको मेरे सुधी समीक्षक और जिज्ञासु पाठक ही जान सकते हैं। मैं यह दावा नहीं करूंगा कि यह मेरी श्रेष्ठ रचना है वह तो मुझे अभी लिखनी है। लिख पाऊंगा या नहीं इसकी भी मूझे कोई चिन्ता नहीं है। अपनी पात्र विभा के शब्दों में कहूं तो राह लम्बी है और मुझे राह ही चाहिए, मंजिल नहीं।

मुझे भी चलते चले जाना है जब तक चलने की शक्ति है।

पाठ ~~नम्बर एक~~ [पहला पाठ] / मेज़ / यह क़लम है, वह ~~पिन्सल~~ पैंसिल है। यह क़लम काला है वह ~~पिन्सल~~ पैंसिल पीली है। यहाँ कुर्सी है, वहाँ मेज़ है। मेज़ पर दवात है। दवात में स्याही है। यहाँ दो किताबें हैं, वहाँ तीन कापियाँ हैं। यह किताब नीली है, वह किताब लाल है। यह ~~पिन्सल~~ पैंसिल सब्ज़ है, वह ~~पिन्सल~~ पैंसिल काली है। / सवाल - यह क्या है? / जवाब - यह मेज़ है / वह क्या है? / वह किताब है। / वह किताब कहाँ है? / वह किताब मेज़ पर है। / क्या यह किताब लाल है? / जी हाँ, यह किताब लाल है। / क्या यह काग़ज़ काला है? / जी नहीं, यह काग़ज़ नीला है। / यहाँ कितनी कुर्सियाँ हैं? यहाँ बहुत कुर्सियाँ हैं। ~~[इस पाठ में अ, आ, इ ई आदि स्वर शब्द के आरंभ में न आने चाहियें।]~~ ——

~~पाठ नम्बर से~~ [दूसरा पाठ] / कमरा। यह कमरा है। इस कमरे में बहुत चीजें हैं। सामने लिखने की मेज़ है। उस पर बिजली की बत्ती रखी है। इस बत्ती के पास फ़ोन रखा है। मेज़ के पास एक कुर्सी है। बाईं ओर एक दरवाज़ा है, ढाई ~~(दाहिनी)~~ ओर ~~एक~~ कोने में एक अलमारी है और उसमें बहुत सी पुस्तकें हैं। दीवारों पर कुछ तसवीरें हैं। नीचे फ़र्श पर क़ालीन बिछा है। ऊपर छत पर बिजली की बत्ती है। / एक दोस्त से मिलने पर / नमस्ते / (उत्तर-) नमस्ते। कैसे हो गोपाल? / अच्छा हूँ। / पिताजी कैसे हैं? माताजी कैसी हैं? / भाई तुम्हारी कृपा ~~[मेहरबानी]~~ है। सब कुशल से हैं। ~~[पाठ १ और २ में ट, ठ, ड, ढ, ड़, ढ़, ण - ये अक्षर न आने चाहियें।]~~ ——

~~पाठ नम्बर तीन~~ [तीसरा पाठ] - मकान। हम एक बड़ी इमारत की दूसरी मंज़िल में रहते हैं। हमारे मकान में बैठने, खाने और सोने के कमरे हैं। बैठने का कमरा सब कमरों से बड़ा है। उसकी खिड़कियों के शीशों से बाहर बग़ीचे के पेड़ दिखाई देते हैं। खिड़कियों पर पर्दे लटकते हैं। एक दरवाज़ा घर के बरामदे में जाता है, दूसरा ड्योढ़ी [=vestibule/?] में खुलता है। दरवाज़ों के किवाड़ों में काँच लगे हैं। एक दीवार के सहारे ~~साथ~~ [=along?] कौच का सेट है। खाने का कमरा भी लम्बा-चौड़ा है। सोने का कमरा उससे छोटा है। उसमें दो पलंग हैं। सोने के कमरे के साथ स्नानगृह ~~[गुस्लखाना]~~ है। उसमें ~~वहाँ~~ एक बड़ा टब है और ~~उसमें~~ दो नल लगे हैं - एक गरम पानी का, ~~और~~ दूसरा ठंडे पानी का। रसोईघर उतना बड़ा नहीं लेकिन वह भी हवादार है। घर की सीढ़ियों पर हर ~~वक़्त~~ (समय) चढ़ने उतरने का शोर सुनाई देता है। प्रश्न आप का शुभ नाम क्या है? उत्तर - मेरा नाम गोपाल प्रभाकर है। - आप कहाँ रहते हैं? - नई दिल्ली में या काम करते हैं? - जी, ~~हाँ~~ मैं ~~डाकघर~~ [डाकखाने] में नौकरी करता हूँ। / परिचय कराने पर - / रामकुमार - कृपा ~~[मेहरबानी]~~ करके ~~मुझे~~ अपने दोस्त का परिचय दीजिये। ~~से मिलाइये~~। / रामनाथ - आप हैं मेरे दोस्त हनीफ़ुल्ला साहब ईरान से आए हैं। और आप हैं मिस्टर रामकुमार, ~~बड़े~~ मशहूर लेखक। / रामकुमार - आपसे परिचय ~~[मुलाकात]~~ हो जाने से मुझे बड़ी प्रसन्नता ~~[बहुत मुशी]~~ हुई है क्योंकि आप एक ऐसे देश से आए हैं, जिससे मुझे बहुत प्रेम है। - / हनीफ़ - मैं आपकी कृपा का बहुत ही आभारी हूँ॥ —— इति

५-९-८०

Un seul être vous manque
et tout est dépeuplé
Lamartin

एकमात्र प्राणी के वियोग से
विश्व जनशून्य हो जाता है

प्रिय मित्र,

आप के सब पत्र यथासमय मिल गये, बड़ी प्रसन्नता हुई। आप की कृपा के लिए आप का बहुत आभारी हूँ। आप ने मेरा लेख पढ़ लिया, इस के लिए भी मैं आप का अनुगृहीत हूँ। पढ़ते समय कहीं कहीं शंकाएँ अवश्य हो रही होंगी। पृष्ठ ३३० पर मैं ने सु० कु० चट्टोपाध्याय का वाक्य दिया है - "Conductor, put me down at the head of the street." यह मेरा अनुवाद नहीं, सु० कु० चट्टोपाध्याय का है। बंगाली वाक्य के साथ साथ सु० कु० चट्टोपाध्याय ने उस का अंगरेज़ी अनुवाद भी दिया है। इस लिए at the head of के स्थान पर at the turning of देना असम्भव है, लेखक के शब्द परिवर्तन किये बिना उद्धृत करने पड़ते हैं।

पृष्ठ ३२३ - "I thought /lit., it occurred in my mind/" - यह शब्दानुवाद है, इस लिए उस में 'मन' शब्द का अनुवाद देना पड़ा। नहीं तो शब्दानुवाद देना निरर्थक होता।

किसी बंगाली मित्र से सलाह कर लेना असम्भव था - मेरे कोई बंगाली मित्र नहीं हैं। हां, पृष्ठ ३३१ पर मैं ने श्रीमती अणिमा तनेजा का नाम दिया है, उन का नाम श्री काशीराम शर्मा के सौजन्य से मिला। कुछ बंगाली उदाहरण लिख कर श्री काशीराम शर्मा को भेज कर मैं ने उन से परामर्श लेना चाहा। उन्हों ने मेरा पत्र श्रीमती अणिमा तनेजा को दिया।

२४-६-८० को मुझे यह पत्र मिला - Probal Dasgupta, Rotterdam, Netherlands.
Dear Dr. Pořízka, I just got a letter from Peter Hook mentioning that he had recently sent you a copy of my 1977 article on the grammar of the Bangla compound verb and that you had recently published an article in Archiv orientalni, on the subject. Since I have no access now to university libraries, and since my 40-hour-a-week youth internship with the World Esperanto Association makes it difficult for me to make special trips to universities elsewhere in Holland, I will not be able to read your paper soon, although I would very much like to. Could you spare a copy? ...
Starting from September, I will be teaching in Calcutta University's Department of Comparative Philology and Linguistics. ...
Most sincerely - Probal Dasgupta.

The same day I sent a copy of my article to Probal Dasgupta.
On July 10, 1980, I received another letter:
Dear Dr. Pořízka, Thank you very much for your postcard and the offprint of your 1979 article "On the perfective verbal aspect in Bengali". The article is an intricately woven set of arguments with supporting data and deserves to be read and discussed by many students of aspect and compound verbs in Indian languages. Thank you for having done this research so painstakingly. It will, no doubt, play a rôle in situating the perfective aspect in Bangla grammar. ....."

आज कुछ प्रश्न भी हैं - १. श्रीमती डॉ० दागमार अंसारी श्री जैनेन्द्रकुमार की कहानियों का अनुवाद प्रकाशित करती हुई ("अपना अपना भाग्य", आदि) लेखक का नाम "जैनेन्द्रकुमार जैन" देती हैं। लेकिन "जैनेन्द्रकुमार जैन" एक और लेखक का नाम है - न ? — २. क्या खलिहान सुबे आसमान के नीचे होता है ? - ३. "सर्रा" शब्द विकारी है - न ? सर्रे का, सर्रे में इत्यादि। - ४. आप लिखते हैं - "स···ई हो रही है। द्वारों पर सौन रखे जा रहे हैं।" - "स···ई" शब्द अस्पष्ट रूप से लिखा है। "सौन" शब्द किसी शब्दकोश में नहीं मिलता। - ५. आप लिखते हैं - "काश! हम सब प्रेम करना सीख सकें।" - लेकिन आप ने "ममता का विष" नामक नाटक भी लिखा। दुनिया ममता के विष का राज्य है। जब तक यह राज्य बना रहेगा तब तक प्रेम और शान्ति की जीत नहीं होगी।

शुभ कामनाओं के साथ

आप का

Vincenc Pořízka

Dr. Vincenc Pořízka
Novodvorská 1119/57
8200 Praha 4 - Branik
Czechoslovakia

Dr. Vladimír Miltner CSc.
Hurbanova 11/1385
142 00 PRAHA 4-KRČ

19/11

प्राग, चेकोस्लोवाकिया
९.१०.१९८३

माननीय श्री प्रभाकर जी,

सादर नमस्कार। पिछले सप्ताह को मुझे त्रैमासिक गगनांचल का दूसरा अंक मिला है। इस में आप का लेख देखकर और पढ़कर मुझे हर्ष बहुत हुआ कि सुदूर पवित्र देश भारत में मेरे पूज्य स्वर्गीय अध्यापक डा० पोरीज़्का और उनके कार्य का यथोचित सम्मान रहता है। इस के लिये मेरा धन्यवाद और कृतज्ञता स्वीकार कीजिये।

डा० पोरीज़्का के मार्गदर्शन से मैं सन् १९५३ से लेकर १९५८ तक प्राग विश्वविद्यालय के दार्शनिक संकाय में भारततत्व का अध्ययन करता था और उसी समय से मैं उन्हें न केवल अध्यापक बल्कि अपना गुरु जैसा मानता था। अध्ययन समाप्त करके (मेरा शोध-प्रबंध - बिहारीलाल कृत सतसई) मैं प्राच्य विद्या संस्थान में अनुसंधान करता था, फिर मैंने पेरिस में तीन वर्ष बिताये और अब चेकोस्लोवाक रेडियो में प्रसारण-केंद्र में काम करता हूँ। जो भी मैंने समय समय पर प्रकाशित किया, यथा लेख, अनुवाद या पुस्तक-पुस्तिका, सब कुछ की प्रथम प्रति उन्हीं को

भेजता था। तथा सदा उन्होंने मुझे कृपापूर्ण पत्र या कार्ड लिखकर मुझे और प्रोत्साहन दे दिया।

जो बातें उन्होंने आपको अपने पत्रों में लिख दीं ये सब उस समय हम विद्यार्थियों को ज्ञात नहीं थीं, केवल कुछ कुछ अशुभ आशंकाएँ थीं हमें। हाँ, वे नियमनिष्ठ और कभी कभी व्यंग्यपूर्ण थे परन्तु इस का कारण यह था कि वे असावधानता, आलस्य और पल्लवग्राहिता सह नहीं सकते। साथ ही वे दूसरे लोगों के तर्कसंगत विचारों के प्रति बहुत उदार थे। आपने अपने लेख में ठीक लिखा है कि वे दुर्लभ व्यक्तित्व थे। ऐसे मनुष्य इस संसार में कम मिलते हैं। उन्हीं से मैं बहुत सीखा और उनकी याद सदा के लिये सुरक्षित रखूँगा।

'बोले मेरे गुरु।
स्वकर्तव्यं कुरु॥'

माननीय श्री प्रभाकर जी, मेरा हार्दिक प्रणाम स्वीकार करें।

आपका कृतज्ञ,

व्लादिमीर मिलतने

17.11.93
की छपा है

प्राग, 3.12.62.

माननीय श्री प्रभाकर जी,

सादर प्रणाम !

आपका कृपा-पत्र अचानक पाकर मुझे हर्ष बहुत हुआ। तथा यह जानकर कि आपका बड़ा उपन्यास प्रकाशित हो चुका है और भी हर्ष हो गया। मेरी हार्दिक शुभकामना स्वीकार कीजिये !

अफ़सोस की बात है कि इस समय हमारे देश में राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियाँ काफी जटिल हैं। पहली जनवरी से हमारा राष्ट्र विभाजित होनेवाला है। यहाँ चेकिया में (यानी बोहीमिया और मोराविया में) स्थिति सुदृढ़ रहेगी, लेकिन स्लोवाकिया कमज़ोर है। इस के दक्षिण भाग में लगभग ६ या ७ लाख हंगेरियन लोग रहते हैं। स्लोवाकिया के सब निवासियों की संख्या ५० लाख होगी लेकिन केवल ३० लाख स्लोवाक हैं। हंगेरियन लोगों के अतिरिक्त वहाँ युक्राईनियन, पोलिश, जर्मन आदि लोग रहते हैं। हंगेरियन स्कूल स्लोवाकिया में बन्द हो गये हैं। सन् १९१८ तक पुराने 'आस्ट्रिया - हंगेरी' राष्ट्र में स्लोवाकिया हंगेरी का एक प्रान्त था। हंगेरियन लोग यह भूल गये नहीं। और हंगेरियन गणतंत्र डन्यूब नदी के पार है, बिलकुल नज़दीक। अब स्लोवाक शासन के प्रतिनिधियों का कहना है कि 'जो भी स्लोवाक गणतंत्र का नागरिक होना चाहता है वह स्लोवाक भाषा बोलेगा और स्लोवाक स्कूलों में अपना अध्ययन करेगा'। मेरे विचार में यह बहुत खतरनाक है। अगर स्लोवाकिया के हंगेरियन निवासी यह निश्चय करेंगे कि 'हम लोग हंगेरियन गणतंत्र के नागरिक बनना चाहते हैं', तो क्या होगा ? चेकोस्लोवाकिया के विभाजन

के बाद फिर स्लोवाकिया का विभाजन होनेवाला है ? और पूर्वी स्लोवाकिया के युक्राईनियन लोग, वे क्या करेंगे ? जहाँ तक मुझे ज्ञात है, तो न युक्राईनियन (प्रेशोव नगर के आसपास) न पूर्वी स्लोवाक (कोशित्से नगर के आसपास) पश्चिमी स्लोवाकों के साथ एक राष्ट्र में रहना नहीं चाहते। जैसा कि कहा जाता है कि 'जिस आशावादी को ठीक और पूर्ण जानकारी प्राप्त हुई है वह निराशावादी बन जाता'।

यदि आप चेक दूतावास के पुस्तकालय से कोई पुस्तक इस विषय में पढ़ना चाहते हैं, तो निम्नलिखित लेखकों की कृतियाँ पढ़ लेने योग्य हैं :- PAVEL TIGRID, VÁCLAV HAVEL, VÁCLAV ČERNÝ, IVAN SVITÁK (बड़ी सावधानता के साथ, वे पागल हैं)। पिछले हफ्ते से ~~लन्दन के सुप्रसिद्ध~~ SUNDAY TIMES में ALEXANDER ~~का संस्मरण~~ प्रकाशित होती है। यह भी बहुत महत्त्वपूर्ण होगा। खेद की बात है कि हमारे यहाँ अंग्रेज़ी भाषा में कुछ भी नहीं मिलता। अगर कुछ हाथ में पड़े तो ज़रूर भेजनेवाला हूँ।

माननीय श्री प्रभाकर जी, मेरे सादर प्रणाम स्वीकार करने की कृपा कीजिये !

भवदीय

व्लादिमीर मिलतनेर

पुनश्च :- स्मेकल विश्वविद्यालय से जाकर शायद हमारे दूतावास (दिल्ली) में कोई काम करनेवाला है।

भारतीय भाषा संगम

[इस स्तंभ में इस बार तेलुगु कवि श्री ज्वालामुखी, गुजराती कवि श्री उद्यन ठक्कर और कोंकणी के कवि श्री प्रकाश वाडगांवकर की चुनी हुई कविताओं के हिंदी रूपांतर प्रस्तुत हैं। इन सभी रचनाओं के हिंदी रूपांतरकार श्री गिरधर राठी हैं। श्री गिरधर राठी हिंदी के प्रसिद्ध कवि और लेखक हैं तथा सम्प्रति साहित्य अकादमी की त्रैमासिक पत्रिका 'समकालीन भारतीय साहित्य' के संपादक हैं।

-संपादक]

नदी

-ज्वालामुखी

यहां यह नदी है
गिरती पहाड़ के आंसू की भांति
विकटतम परीक्षा से रेंगकर निकल आती
सच करती सपना
रोड़ों के सामने कण-कण बिखरती
राह बना लेती है
संघर्ष बनता है मुख्य-धार
वर्चस्व होता है जीवन-उमंग का

नदी है एक राग चट्टानों के बीच
जगाती गांव के लोगों को
आकर वे उगलते हैं अपने विषाद
और भर लेते हैं हृदयों में मधुर गीत

सपनों का जुलूस
विद्युन्मय कर जाता पीढ़िया अनेक
रचने को, करूणामय संस्कृति के लिए
महाकाव्य विप्लव का

नदी है गाथा युग-युगांत की
गाती हैं गति एक अनगाये लोगों का।

*प्रश्न पत्र

-उदयन ठक्कर

1. मेरा हाथ अपने हाथ में लो और उगंलियों के बीच **खाली स्थान भरो।**
2. तुमने भी मेरा लंबा इतंजार किया, नहीं? **हां, या न में उत्तर दो।**
3. (आओ, सराबोर करो मुझे सावन की बरखा की भांति।) **कोष्ठक के निर्देशों का पालन करो।**
4. चैन से बैठा था अपनी छोटी-छोटी चीज़ों के साथ/और तभी, हे भगवान, तुम दिख गये। तुमसे बड़ी अब कोई धरती मेरे पास नहीं/.. संतोषजनक विकल्प बताओ।
5. मेरे अस्तिवत्व का कारण क्या है? **पर्याप्त कारण गिनाओ।**
6. मैं आता हूं तुम्हारे पास निर्मल और पवित्र। **कृपया काट-छांट और मिटाना कम-से-कम रहे।**
7. "तुमसे मुझे प्यार है, हमेशा रहेगा।" **कब, किसके द्वारा और किससे यह (नहीं) कहा गया?**
8. और अब सत्य से साक्षात्कार का क्षण। कागज़ के पुर्जे पर यह रहा मेरा नाम। **चूम लो इसे या रद्द कर दो जो लागू न हो।**

दृश्य

मुंबई में तीसरे भोईवाड़ा में "हरिनिवास" मकान की छत। एक कोने में मोरी के पास एक अधेड़ उम्र का आदमी फुर्ती के साथ बर्तन मांज रहा है। वर्षा की छोटी-छोटी बूंदे गिनरने लगी हैं।

नेपथ्य में:

पांडु कांबले लब्ध-प्रतिष्ठित, खातरी वाला रामा है,
हाथ में जिसके बड़े-बड़े श्रीमानों का पजामा है।
कपड़ा-बासन से महीने में तीस नगद का भत्ता है,
पांडोबा का रूतबा भोईवाड़ा में अलबत्ता है।
मुंह भर पान चबाता रहता, शब्द निठल्ले डोल रहे!
पांडोबा बरसों से चुप है, बासन-लत्ता बोल रहे...

आकाश में सात रंग फूट रहे हैं। ताज़ा खिले मेघधनुष की नज़र "हरिनिवास" पर आ ठहरती। कौन जाने क्यों, मेघधनुष को पांडोबा पर प्यार हो जाता है।

मेघधनुष:

अह अह ... (पांडोबा का ध्यान खींचने के लिए खंखारता है)

पांडोबा :

खटर-पटर (बासन चमकाता है)

मेघधनुष:

सदा काम-डूबी आंखों में चुटकी भर विस्मय भर कर,
मांज चुके बर्तन-भांडे, तब देख मुझे भी एक नज़र।
याद है, कितने बरस हो गये? तुझसे थी इक भेंट हुई?
धूप सुहानी थी, खेतों की सांसें जिसमें घुली हुई
तेरे माथे पर बरखा के कण अनवरत टपकते थे,
तेरे हाथों में इस जोड़ा कोमल हाथ खनकते थे!
पंछी के जोड़े-सा, तुमको देखा मैंने बरखा में-
मौन कूंजते, नेह भीगते, होकर उलझे...
तुझे सात रंगों से ईर्ष्या हुई या नहीं, खबर नहीं;
लेकिन होंठ बिना अपने जीवन के क्षण मुझको खटके!

पांडोबा :

(बर्तन बग़ल में सरका देता है, हाथ की राख झाड़ता है, मेघधनुष की तरफ़ ताकता है।)

मेघधनुष :

खेत जिसे छोटे पड़ते थे-आज चारदीवारों में
करता है वह प्रेम-टेम भोईवाड़ा की चालों में।
भोईवाड़ा से बढ़ कर क्या? बेहतर क्या बटलोई से?
नहीं जानता, इसीलिए खोया जीवन दिलजोई में?
चाहे कम जी, लेकिन जगमय जीवन तो जी, पांडोबा;

(पांडोबा उठ कर खड़ा हो जाता है।)

हाथ बढ़ाकर मेघधनुष को पकड़ लेता है। आकाश से उतार लेता है। "501-बार" साबुन से उसे धोता है। निचोड़ता है। फिर सफ़ेद-झक हो चुके मेघधनुष को क्लिप लगा कर आकाश में टांग देता है।

यह सब देख कर "हरिनिवास" के दूसरे माले पर बैठा एक तोता पिंजड़े के भीतर से बोल उठता है कि "पगार तीस रूपट्टी हो उसके तई अच्छे-से-अच्छा मेघधनुष भी सूना-सफ़ेद होकर रह जाता है। सीता राम!"

देवालय की मूर्ति

-प्रकाश पाडगांवकर

देवालय की मूर्ति एक दिन
चुपके-से मनुष्य का रूप धारण कर
मंदिर से भाग निकली
और मनुष्यों की तरह
बिताने लगी एक संसारी जीवन।

तब आसपास सभी लोग
जात-पाँत के बिल्ले उस पर चिपका कर
करने लगे उससे खींचातानी।
समझ गयी मूर्तिः
कितना दरदरा और अर्थहीन है मनुष्यों का जीवन
द्वेष, राग, मत्सर के दलदल में खोया हुआ।

भग्नमोह मूर्ति ने त्याग दिया
बाना मनुष्य का
और चली आयी उसी मंदिर में।
तभी फिर लोगों ने
प्राण-प्रतिष्ठा की दोबारा।

पहनाए अलंकार
सजा दिया रंगारंग वस्त्रों से
दूध-घी-सुगंध के भोग किये अर्पित
आरती-भजन से गुंजार किया देवालय
चरणों में आ गिरे दीन-हीन और धनी।

बीत गये कितने ही कल्प और युग।
लेकिन उस मंदिर में मूर्ति की
प्रतिष्ठा अक्षुण्ण है।
भक्तजन निकालते हैं यात्रा हर वर्ष;
कितनी पीढ़ियां आती और जाती है
लेकिन उस मूर्ति को परवा नहीं किसी की।
मूर्ति की प्रतिष्ठा, किन्तु
बढ़ती ही जाती है।

लेकिन मनुष्य?
वह भी जैसा का तैसा।

मेरे हाथ

—प्रकाश पाडगांवकर

खोह-कंदराओं में, कंटीले झाड़ों में
इन्हीं मेरे खुरदुरे हाथों ने कभी
उठाये थे भाले, पत्थरों के हथियार
हिंस्र पशुओं के शिकार के लिए!

इन्हीं मेरे अनाड़ी हाथों ने
ईसा के माथे रखा कांटों का ताज
घुमाया उसे गली-गली, मारा-दुत्कारा
और चढ़ा दिया सूली पर!

इन्हीं मेरे अनोखे हाथों ने
किये हैं नये-नये आविष्कार
क्षण भर में मिटाते अलंध्य-सी दूरियां,
रेडियो टीवी से जोड़ते पल भर में
लाखों-करोड़ों के नयन-कान!

यही मेरे हाथ बढ़े आगे
छेड़ते हैं महासमर, गुंजारते युद्धघोष,
बहाते हैं रक्त की नदियां; और उसी रौ में
उद्बोधन करते हैं मनुष्य के बचाव का,
सहलाते जाते हैं हाइड्रोजन बम और न्यूट्रोन बम!

*

[उर्दू के सुपरिचित कवि कृष्ण मोहन भारतीय राजस्व सेवा के निवृति-प्राप्त वरिष्ठ अधिकारी रहे हैं। उर्दू में इनके पच्चीस कविता-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। अपनी कतिवाओं में ये हिंदी और उर्दू की मिश्रित शैली के लिए पहचाने जाते हैं। उनकी एक कविता और तीन गज़लें यहां प्रस्तुत हैं; इन का देवनागरी में लिप्यतंरण हिंदी के लेखक श्री गोबिन्द प्रसाद ने किया है।
-संपादक]

ग़ज़ल

—कृष्ण मोहन

तेरी हस्ती का राज़े-दिलजू हूँ
तू नहीं तू है, मैं मगर तू हूँ
खुश हूँ थोड़ी सी रौनी पाकर
मैं शबे-आरज़ू का जुगनू हूँ
नाच के बाद उतार फेंका हो
नर्तकी ने जिसे वो घुंघरू हूँ
कब मेरा दिल लगा है दुनिया से
मैं गृहस्थ आश्रम का साधू हूँ
मैं रिवायत के बन्द कमरे में
बन्द कैसे रहूँ कि खुश्बू हूँ
मेरा दिल भी है कुफ्र से बरहम
मैं मुसलमां नहीं परन्तु हूँ
'कृष्ण मोहन' उदास है जीवन
यास का यात्री हूँ भिक्षु हूँ

ग़ज़ल

—कृष्ण मोहन

जो थे खुश एतबार वो अरबाब तो गए
महफ़िल हुनूज़ गर्म है, आदाब तो गए
आरामो-इन्बिसात मयस्सर हो किस तरह
आरामो-इन्बिसात के असबाब तो गए
अफ़कारे-खुश्क रह गए बाक़ी किताब में
जिन में पयामें-शौक था वो बाब तो गए
पीरी में कर रहा हूँ हक़ीकत का सामना
देखे थे जो शबाब में वो खाब तो गए
होने लगी है मंज़िले-आखिर भी अब तमाम
अब हम भी जाने वाले हैं अहबाब तो गए

आखिरी उम्र में

—कृष्ण मोहन

ये जहां दीदगी
आयी बालीदगी
मेरे अहसास में
आ गयी है कमी
मेरे विश्वास में
बेकसी बेदमी
ज़िदगी दर्द है
दूद और गर्द है
चेहरा-ए ज़र्द है
मौसमे-सर्द है
कोई हम दम नहीं
कोई महरम नहीं
मेरी हस्ती है अब
फर्ते-रंजो-ताब
आखिरी उम्र में
सोच ही सोच है
सोच संकोच है
पाँव की मोच है

ग़ज़ल

—कृष्ण मोहन

हुई है खत्म कहानी यक़ीं नहीं आता
गुज़र गई है जवानी यक़ीं नहीं आता
तुम्हारा हुस्न है फ़ानी यक़ीन आता है
हमारा इश्क़ है फ़ानी यक़ीं नहीं आता
सुना के अपनी कहानी जो मैंने देखा है
तुम्हारी आँखों में पानी यक़ीं नहीं आता
ये आईने में नहीं आप और है कोई
कोई है आप का सानी यक़ीं नहीं आता
हुई है मेरी मज़म्मत मेरे हरीफ़ों में
और आप ही की ज़बानी यक़ीं नहीं आता
सलाए फ़िक्रों-नज़र दे रही है दुनिया को
हमारी शोख बयानी यक़ीं नहीं आता
तेरे जुनूने-महब्बत में कृष्ण मोहन ने
बनों की खाक न छानी यक़ीं नहीं आता

प्रेरणा पुंज

राजनीति की धूप और साहित्य की छांव में झुलसते-विहंसते

श्री शंकर दयाल सिंह

मौलिक विचारक, सर्जनात्मक साहित्यकार तथा कर्तव्यनिष्ठ राजनेता श्री शंकर दयाल सिंह का जन्म बिहार के औरंगाबाद जिले के देवे गांव में 27 दिसम्बर, 1937 को हुआ। प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, साहित्यकार और बिहार विधान परिषद के सदस्य स्व० श्री कामता प्रसाद सिंह "काम" के पुत्र श्री सिंह ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि प्राप्त की और पटना विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर शिक्षा ग्रहण की। इसके साथ विधि की भी शिक्षा ली। श्री सिंह अपने विद्यार्थी जीवन से ही साहित्यक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र में सक्रिय रुचि लेते रहे हैं।

सन् 1966 से आज तक उनकी राजनीतिक यात्रा अनवरत चल रही है। आपने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, जनता-दल, श्रमिक आंदोलन आदि के क्रियाकलापों में अनेक महत्वपूर्ण पदों पर रह कर योगदान दिया है। 1971 में वे पांचवी लोकसभा के सदस्य बने।

श्री सिंह का हिन्दी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान है। श्री सिंह 30 मौलिक पुस्तकों के रचयिता होने के साथ-साथ 16 वर्षों तक "मुक्तकंठ" पत्रिका के संपादक रहे। वे विभिन साहित्यिक और सांस्कृतिक संगठनों के संरक्षक और अध्यक्ष रहे। आपके उच्च कोटि के सैकड़ों महत्वपूर्ण लेख देश की विविध साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। आप विभिन्न संगठनों, राज्य सरकारों और ख्यातिप्राप्त संस्थाओं की ओर से प्रतिष्ठित लेखक के रूप में पुरस्कृत हुए हैं। सन् 1990 में आपको "बिहार रत्न" की उपाधि प्रदान की गई। श्री सिंह द्वारा हिन्दी-साहित्य की विपुल सेवा का समादर करते हुए विक्रमशिला हिन्दी विद्यापीठ ने 1987 में उन्हें विद्यासागर "डी०लिट्" की मानद उपाधि प्रदान की तथा 1993 में विशिष्ट हिन्दी सेवाओं के लिए नागपुर में राष्ट्रपति के हाथों "शेवड़े हिन्दी सेवी पुरस्कार" से उन्हें सम्मानित किया गया।

श्री सिंह राष्ट्रीय समाचार एजेंसी "समाचार भारती" के तीन वर्षों तक निदेशक मंडल के अध्यक्ष रहे। श्री सिंह शिक्षाविद होने के नाते विभिन्न विश्वविद्यालयों और शैक्षिक संस्थाओं से भी संबंधित रहे।

वे भारतीय रेल परामर्शदात्री समिति, देवघर हिन्दी विद्यापीठ, राष्ट्रीय शिक्षानीति-भारत सरकार, राष्ट्रीय साक्षरता मिशन प्राधिकरण-भारत सरकार, राजभाषा समिति-बिहार, केन्द्रीय हिन्दी सलाहकार समिति, काशी नागरी प्रचारिणी सभा की कार्यकारिणी समिति, हिन्दी साहित्य सम्मेलन की कार्यकारिणी समिति, आथर्स गिल्ड आफ इंडिया की कार्यकारिणी समिति के सदस्य हैं। आप माखनलाल चतुर्वेदी पत्रकारिता विश्वविद्यालय, भोपाल के शासी निकाय के भी सदस्य हैं। आप केन्द्रीय हिन्दी शिक्षण मंडल के पूर्व उपाध्यक्ष तथा संसदीय राजभाषा समिति उपाध्यक्ष हैं। 1990 से संसद सदस्य, राज्य सभा के रूप में और राज्य सभा उपाध्यक्ष-पैनल के सदस्य और एक दर्जन से अधिक कमेटियों के सदस्य के रूप में एक जगह योगदान दे रहे हैं।

एशिया की सबसे बड़े लायब्रेरी दिल्ली पब्लिक लायब्रेरी बोर्ड के अध्यक्ष के रूप में श्री सिंह मनोनयन उनकी विद्वता तथा पुस्तकों के प्रति निष्ठा का प्रतीक है।

श्री शंकर दयाल सिंह के व्यक्तित्व के बहुआयामी कोण हैं जिसके अन्तर्गत उनका बालिका विद्यापीठ लखीसराय का अध्यक्ष होना, रेलवे-बुक स्टाल सुधार समिति का चेयरमैन पद, गांधी जी के 125वीं जयंती हेतु गठित राष्ट्रीय समिति के सदस्य, अशोक विचार मंच के अध्यक्ष तथा भारतीय पुनर्वास एवं विकलांग परिषद् की कार्यकारिणी के सदस्य के रूप में भी उनकी सेवाएं उल्लेखनीय हैं।

श्री सिंह ने सोवियत संघ, अमेरिका, इंग्लैंड, जापान, दक्षिण कोरिया, अल्जीरिया, मारीशस, आस्ट्रिया, आस्ट्रेलिया, हंगरी, लैटिन अमेरिका, नेपाल आदि विभिन्न देशों में समय-समय पर भारत के शिष्ट मंडलों का नेतृत्व और प्रतिनिधित्व किया है। उनकी उल्लेखनीय विदेश यात्रा के प्रसंग में महामहिम राष्ट्रपति डा० शंकर दयाल शर्मा जी के साथ 1993 में की गई आठ देशों की यह महत्वपूर्ण यात्रा है जिसमें यह ईरान, उक्रेन, टर्की, ब्रिटेन, हंगरी ग्रीस तथा बहरीन की यात्रा पर गए। अपनी विदेश यात्राओं में आपने इस बात का अवलोकन किया है कि वे लोग अपनी भाषा को कितना गौरव देते हैं। आपने देश-विदेश में निर्भीक होकर हिन्दी की अस्मिता की रक्षा की है। विभिन्न क्षेत्रों यथाः सरकार, प्रशासन, उद्योग, व्यवसाय, शिक्षा आदि में राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन के लिए आपने भारत सरकार की विभिन्न सलाहकार समितियों के सदस्य के रूप में बहुमूल्य मार्गदर्शन प्रदान किया है। श्री सिंह राष्ट्रभाषा और राजभाषा हिन्दी के बड़े सशक्त और समर्थ प्रतीक हैं। उनकी हिन्दी सेवाओं के प्रति राष्ट्र आश्वस्त है।

श्री सिंह की आत्मा में साहित्य का देवता निवास करता है जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण उनके द्वारा रचित विपुल साहित्य है। उनका साहित्य समाज की आकांक्षाओं और राष्ट्र की संवेदनाओं को व्यक्त करता है। विगत 27 दिसम्बर 1993 को राष्ट्रपति भवन में श्री शंकर दयाल सिंह ने राष्ट्रपति जी को अपनी तीन पुस्तकें—सुरभित, धार के इस पारः धार के उस पार तथा यह कहानी नहीं है—भेंट की, जो लेखक की तीस वर्षों में लिखे संस्मरण, यात्रा तथा कहानियों के संग्रह हैं।

उनकी प्रमुख कृतियां इस प्रकार हैं:

ललितनिबंधः निबंध, यात्राः भीगी धरती को सोंधी गंध, परिवेश का सुख, यदाकदा, पास से देखने का सुख, एक दिन अपना भी, कुछ ख्यालों में: कुछ ख्वाबों में, पहली बारिश की छिटकती बूंदे, गांधी के देश से: लेनिन के देश में, कहीं सुबहः कहीं शाम, समय-असमय, आइए कुछ दूर हम साथ चलें, बात जो बोलेगी, मुरझाए फूल, पंखहीन बटेर, यायावरीः एक मादक गंध तथा धार के इस पारः धार के उस पार।

संस्मरणः याद एक यायावर की, कुछ बातेंः कुछ लोग, यादों की पगडंडियां, मैंने इन्हें जाना, जो साथ छोड़ गए तथा सुरभित स्मृतियां।

सामयिक बोधः समय संदर्भ और गांधी, इमरजेंसीः क्या सच क्या झूठ, भारत छोड़ो आंदोलन, जनतंत्र के कटघरे में तथा राजनीति की धूपः साहित्य की छांव।

कथा साहित्यः कितना क्या कनकहा, मेरी प्रिय कहानियां, पासपड़ोस की कहानियां तथा यह कहानी नहीं है।

समीक्षाः भाषा और साहित्य, हिन्दी साहित्यः कतिपय मोड़।

संबंधितः गंगाबाबू की याद, बिहारः एक सांस्कृतिक वैभव, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदीः स्मृति धरोहर, प्रेमचंदः स्मृति धरोहर, बाबू गंगाशरण सिंहः व्यक्ति या संस्था, मुक्तकंठः समापन अंक, एक आदर्श भारतीय साहित्य।

स्थायी पताः
कामता सदन बोरिंग रोड,
पटना-800001

दिल्ली का पताः
15, गुरूद्वारा रकाब गंज रोड,
नई दिल्ली-110001

पुलिस दूरसंचार के

हिन्दीतर भाषी अधिकारी का हिन्दी प्रेम

श्री आर॰ वी॰ राघवन

तमिलनाडु के थन्जावुर शहर में 10 नवम्बर, 1949 को जन्मे श्री आर॰ वी॰ राघवन ने मदुराई विश्वविद्यालय से विज्ञान में स्नातक की उपाधि ग्रहण करने के बाद दिनांक 12 अक्टूबर, 1970 को केन्द्रीय सरकारी सेवा में प्रवेश किया।

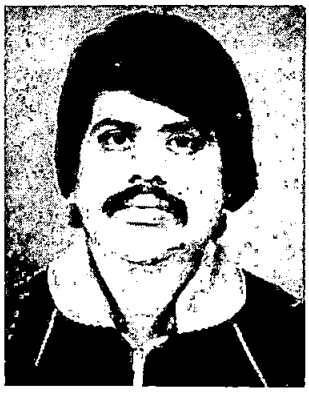

यद्यपि स्कूल, कालेज स्तर पर श्री राघवन हिन्दी का प्रशिक्षण प्राप्त नहीं कर सके किन्तु वर्ष 1970 के दौरान दिल्ली में पहुंचने पर उनको हिन्दी सीखने की प्रेरणा मिली और अपनी सर्विस के दौरान उन्होंने हिन्दी सीखने का भरपूर प्रयास किया। फलस्वरूप आज वह सरकारी काम-काज हिन्दी में करने के लिए पूर्णतः सक्षम हैं।

श्री राघवन इस समय पुलिस दूरसंचार में लेखा अधिकारी के रूप में काम कर रहे हैं। एक हिन्दीतर भाषी अधिकारी होने पर भी लेखा संबंधी कार्यों में हिन्दी का प्रयोग करने हेतु अपने स्टाफ के लिए प्रेरणास्रोत बने हुए हैं। परिणामस्वरूप लेखा अनुभाग का प्रत्येक कर्मचारी हिन्दी में कार्य करने के लिए तत्पर हैं।

पुलिस दूरसंचार के निदेशक श्री आर॰के॰ पंडित, भा॰पु॰से॰ ने श्री राघवन को हिन्दी में कार्य करने के लिए वर्ष 1993 के सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार से सम्मानित किया तथा 2 मार्च, 1994 को आयोजित पुरस्कार वितरण समारोह के दौरान निदेशक महोदय ने अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री राघवन के प्रयासों की सराहना करते हुए अन्य लोगों को हिन्दी में कार्य करने के लिए प्रेरणा दी।

समारोह के दौरान श्री राघवन से जब पूछा गया कि उनको हिन्दी में कार्य करने पर कैसा महसूस होता है तो श्री राघवन ने उत्तर दिया—यद्यपि हिन्दी में कोई उच्च प्रशिक्षण प्राप्त नहीं किया है, फिर भी मुझे हिन्दी में कार्य करने पर गौरव महसूस होता है और खाली समय में हिन्दी पुस्तकें, पत्रिकाएं पढ़ना अच्छा लगता है।

प्रस्तुतिः सत्य प्रकाश भारद्वाज

पुस्तक समीक्षा

वैज्ञानिक दृष्टिकोण और धर्म निरपेक्षता

गीतेश शर्मा एक वैज्ञानिक दृष्टि संपन्न मानवतावादी चिन्तक और वरिष्ठ पत्रकार हैं। अभी तक **विकृत समाज, साम्प्रदायिकता एवं साम्प्रदायिक दंगे, पंजाबः सुलगता सवाल** शीर्षक से इनकी विभिन्न कृतियां चर्चित रही हैं। **'धर्म के नाम पर'** इनकी एक और नई पुस्तक पिछले दिनों प्रकाशित हुई है। इस पुस्तक में समाज में व्याप्त घोर विषमता और अज्ञानता के बुनियादी कारणों पर प्रकाश डालते हुए धर्मांधता और संकीर्ण दृष्टि के विरुद्ध सहिष्णुता और उदारता की पैरवी की गई हैं। पुस्तक में मानव-चेतना के इतिहास की इस विडंबना को रेखांकित किया गया है कि मनुष्य ने अपनी विराट और उदात्त कल्पना शक्ति के द्वारा ईश्वर और धर्म की रचना की, तथापि कालांतर में मनुष्य इनका गुलाम बन कर रह गया। ईश्वर एक है, सर्वव्यापी और सर्वशक्तिमान है तो दुनिया में उसके अलग-अलग स्वरूपों की कल्पना कर विभिन्न सम्प्रदायों के लोग आपस में लड़ते क्यों रहे हैं।

पुस्तक का प्रतिपाद्य है कि मनुष्य अपनी नियति अथवा भाग्य का निर्माता है। ऐसी कोई व्यवस्था जो मनुष्य को उसके जन्मसिद्ध मौलिक अधिकारों यथा समता, स्वतन्त्रता, न्याय, आदि से वंचित करती है, वह मानव विरोधी है, फिर चाहे वह धार्मिक हो या सामाजिक, राजनैतिक हो अथवा समाजार्थिक।

जैसा कि शीर्षक से ही स्पष्ट है वरिष्ठ पत्रकार एवं लेखक गीतेश शर्मा द्वारा लिखित एवं सुश्री कुसुम जैन द्वारा संपादित इस पुस्तक में धर्म के नाम पर मनुष्य पर किए गए अत्याचारों का ऐतिहासिक विश्लेषण किया गया है। पुस्तक धर्म की संकल्पना के सर्वथा विरुद्ध नहीं है। लेखक ने इस तथ्य को स्वीकार किया है कि धर्म के दो रूप हैं। धर्म का जो आन्तरिक सार-तत्व है वह मनुष्य को ऊंचा उठने की प्रेरणा देता है तथापि धर्म का एक बाहरी रूप है जिसका हर युग में निहित स्वार्थों द्वारा दुरुपयोग भी किया गया है। पुस्तक में इतिहास की इस विसंगति को उभार कर प्रस्तुत किया गया है कि इतिहास के विविध चरणों में धर्म की स्थापना रूढ़ियों, कुरीतियों, अंध विश्वासों, और वैचारिक उच्छृंखलताओं के विरुद्ध हुई तथापि बाद में वही धर्म उन्हीं बुराइयों का शिकार होता गया जिनके विरुद्ध उसका आविर्भाव हुआ था।

पुस्तक में इस तथ्य की ओर भी प्रकारांतर से इशारा किया गया है कि धर्म का समाज के सामन्ती ढांचे से तथा यथास्थितिवादी प्रवृत्तियों से तालमेल बना रहता है, साथ ही यह भी कि धर्म की विज्ञान से अक्सर पटरी नहीं बैठती और जब-जब वह विज्ञान से हारा है उसने चमत्कारवाद का आश्रय लिया है।

कुल मिला कर यह कहा जा सकता है कि पुस्तक विचारोत्तेजक, पठनीय और रोचक है तथा जागरूक पाठकों को बहुत रास आएगी।

— राजकुमार सैनी

धर्म के नाम पर, लेखकः गीतेश शर्मा **संपादकः** कुसुम जैन **सम्पर्क-समायोजनः** 19 बी, जवाहर लाल नेहरू मार्ग, कलकत्ता।

एक समकालीन आंचलिक उपन्यास

हिंदी के सुविख्यात कथाकार श्री द्रोणवीर कोहली का नया उपन्यास **'तकसीम'** विभाजन-पूर्व के पश्चिमोत्तर भारत के उन नागर, कस्बाई और ग्रामीण अंचलों की तस्वीर उतारता है जो सन् 1947 के बाद पाकिस्तान का हिस्सा बन चुके हैं। बीसवीं सदी के चौथे दशक का कालखंड रचनात्मक धरातल पर साकार हो उठता है। 'तकसीम' एक संयुक्त परिवार के खंड-खंड हो कर बिखर जाने की गाथा है। संयुक्त परिवारों का तकसीम होना हमारे समय की अनिवार्य नियति है।

उपन्यास की आंचलिक भाषा विशेष रूप से हिंदी पाठकों का ध्यान आकर्षित करेगी। उपन्यास की पृष्ठभूमि लेखक की जन्मभूमि के इर्द-गिर्द घूमती है, जो कि पश्चिमोत्तर आंचल का एक दुर्गम क्षेत्र (रिमोट एरिया) है। कोई चाहे तो इसे रेणु के 'मैला आंचल' की परम्परा में हिंदी का समकालीन आंचलिक उपन्यास भी कह सकता है।

आकार की दृष्टि से डिमाई साइज़ में लगभग 400 पृष्ठ का महीन-मुद्रित औपन्यासिक कलेवर महाकाव्यात्मक है। प्रकार की दृष्टि से भी उपन्यास को महाकाव्यात्क कहना अत्युक्ति न होगी।

उपन्यास के आमुख (प्रीऐम्बल) के रूप में लेखक ने उक्त अंचल के कवि तालिबा चकवाली की निम्नलिखित पंक्तियां उद्धृत की हैं:

आज फिर खोली है मैंने,
अपनी यादों की किताब
आज फिर उठने लगा
माज़ी के चेहरे से नकाब।

ज़ाहिर है कि यह उपन्यास-लेखक की जन्मभूमि से जुड़ी स्मृतियों का एक सर्जनात्मक लवाज़मा है।

— राजकुमार सैनी

◦ **तकसीमः** लेखकः द्रोणवीर कोहली, ◦ **प्रकाशकः** किताबघर, नई दिल्ली-110002 ◦ **पृष्ठ संख्याः** 400; **मूल्य,** 150 रुपए।

यायावरी लेखनः एक विधा

यायावर अर्थात सदा घूमने वाला (घुमन्तु) और यायावरी लेखन है— यायावरी के दौरान अनुभवों का ब्यौरा। श्री शंकर दयाल सिंह के अनुसार कहीं सुबह, कहीं शाम और कहीं रात, तो कहीं दिन। कभी खाना नसीब हो तो सोना नहीं और कहीं सोने को मिल जाए तो खाना गायब। रेल, जहाज, मोटर, पैदल और कभी-कभी घोड़ा-इस प्रकार धर-मार पछाड़ करते हुए भटकना भी एक मादक गंध है।

यूं तो साहित्य में शिकार कथाएं, पर्वतारोहण, यात्रा-संस्मरण आदि निबंध लिखे जाते रहे हैं, किन्तु आज यायावरी लेखन एक नई साहित्यिक विधा के रूप में देखा जाने लगा है। श्री शंकर दयाल सिंह अपने को इस परम्परा से जोड़ते हुए समीक्ष्य कृति की भूमिका में लिखते हैं— "सत्यदेव परिव्राजक ने इस गंध को जाना था, महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने इसे भोगा था, "अज्ञेय" ने इसका कदम-कदम पर एहसास किया था और बिना पैसे के पैदल सफर के यात्री सतीश कुमार ने ऐसे अनेक क्षणों से टकराव किया था और लेखक (शंकर दयाल सिंह) स्वयं भुगतभोगी रहा है और ऐसे क्षणों का जिनमें शीतल बयार और मादक गंध दोनों की अनुभूतियां हैं।" **"यायावरीः एक मादक गंध"** में यही अनुभूतियां संजो दी गई हैं। इस परम्परा में बाबा नागार्जुन और विष्णु प्रभाकर के नाम भी मैं जोड़ देना चाहूंगा।

श्री शंकर दयाल सिंह एक वरिष्ठ राजनेता तथा हिंदी के एक लोकप्रिय लेखक हैं। इन्होंने रूस, अमरीका, जापान, फ्रांस मारीशस, गुयाना, त्रिनीडाड, सूरीनाम. दक्षिण अमरीका के विभिन्न देशों आदि की यात्राएं की। संवेदनशील लेखक और सजग राजनेता की दृष्टि से उन्होंने अपनी यायावरी का लेखा-जोखा बड़े रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। जिन देशों/शहरों की यात्राएं की, पुस्तक में उनके बारे में साहित्यिक एवं कलात्मक शीषर्क दिए गए हैं। "अमलतास का गदराया गुच्छा" में आस्ट्रिया की राजधानी "वियना" में 'आठवें विश्व संस्कृत सम्मेलन' में भाग लेते समय श्री शंकर दयाल सिंह आस्ट्रिया का इतिहास सूक्ति रूप में प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं — "वीरता और धीरता में भी यह (वियना) किसी भी धरती से कम नहीं है। जर्मनी के साथ-साथ इसका भाग्यफल बनता-बिगड़ता रहा है। दोनों विश्व-युद्धों में आस्ट्रिया ने खोया और उसके बाद उन मलबों पर सुनहला महल खड़ा कर दिया" (पृ० 10)

अपने छोटे-छोटे आलेखों में आस्ट्रिया के सफेद स्पेनिश घोड़े, आधुनिक स्थापत्य कला, अच्छी यातायात व्यवस्था के वर्णन के साथ-साथ आस्ट्रिया की भाषानीति का उल्लेख वे इस प्रकार करते हैं: "यहां सैंकड़ों अखबार तथा पत्र-पत्रिकाएं निकलती हैं। एक-से-एक खूबसूरत। लेकिन अंग्रेजी में बिल्कुल नहीं। जर्मन ने खूब धता बताया है अंग्रजी को — ज्ञान-विज्ञान दोनों में। कैसे लोग कहते हैं कि बिना अंग्रेजी के उन्नति नहीं हो सकती।" (पृ० 14)

वियना की यात्रा के समय महाकवि गेटे की 10 फुट ऊंची मूर्ति देखकर लेखक अभिभूत हो उठता है! "कौन है यह इतिहास पुरूष-निश्चय ही मध्य युग के किसी वीर और महाराजा की यह प्रतिमा होगी; सोचते हुए जब सामने होता हूं तो जर्मन में लिखे इस नाम को पढ़कर श्रद्धावश माथा झुक जाता है। महाकवि गेटे। जिन्होंने कहा था कि इस पृथ्वी पर कवि नहीं हुए। किन्तु उसी कवि ने जर्मन विषयों को संस्कृत का महत्व पहली बार बताया था।"

वियना की तरह कोलम्बिया के नामकरण के बारे में बड़े रोचक ढंग से जानकारी दी गई है। कोलम्बस चला था भारत की खोज में, लेकिन वह यहां से तीन-चार सौ मील पर जब किसी द्वीप पर पहुंचा तो उसने समझा कि यही "इंडिया" है। उसका साथी या सहचर इस भूमि पर पहुंच गया और स्पेन का झंडा यहां गड़ गया। सबसे पहले वे कार्टीजीना के ही तट पर पहुंचे थे। इसीलिए पूरे देश का नाम उस संसार-खोजी के नाम पर 'कोलम्बिया' पड़ा और जिस व्यक्ति ने स्पेन के चंगुल से इस भूमि को मुक्त कराया उसके नाम पर कोलम्बिया के इस ग्राम का नामकरण हुआ — वोलवियर हां हमारे यहां गांधी जी के नाम पर ग्राम है— "गांधी ग्राम"। राजधानी है — गांधी नगर। कोई प्रांत कहां है! विदेशों में लेखक ने सदैव हवाई यात्राएं की हैं। (पृ० 24) हवाई यात्राओं के रोमांच और मानव मन में छिपे भय को लेखक ने इस प्रकार प्रगट किया है — "रेल दुर्घटना हो या बस कार-दुर्घटना, उसमें कई आदमी मरते हैं, कई घायल होते हैं और कई बच जाते हैं। यदि कहीं कुछ हो जाए तो शायद ही कोई यात्री अपनी शेष कहानी कहने को रहे। अतः हवाई यात्री का सौभाग्य-दुर्भाग्य अकसर एक ही खूंटे में बंधा होता है। (पृ०30)

श्री शंकर दयाल सिंह की खूबी है कि किसी भी देश की यात्रा के अनुभवों का भारत के साथ तुलनात्मक चित्र प्रस्तुत करते हैं। कोलम्बिया की राजधानी बगोटा के बारे में वे लिखते हैं कि "शिमला, श्री नगर, दार्जिलिंग और ऊटी को मिलाकर जो तसवीर बनती हो वही है बगोटा। कम से कम "हिल्टन होटल" की सताईसवीं मंजिल का यह छठा कमरा तो बिल्कुल वही नजारा दे रहा है। सामने पहाड़, पहाड़ पर बादल, हरे भरे पेड़ और उनके बीच सीढ़ी नुमा मकान, काटेज, हरियाली-सच में अद्भुत दृश्य है। लग रहा है मानो पहलगाम या गुलमर्ग के किसी काटेज में हैं।" इस तरह के वर्णन से भारतीय पाठक अपने देखे हुए शहरों के आधार पर लेखक के माध्यम से वर्णित देशों की यात्रा का आनंद अपनी कल्पना में उठा लेता है।

भारतीय भाषाओं का अपमान अथवा दुर्गति लेखक को सहन नहीं है। 8वें विश्व संस्कृत सम्मेलन में अंग्रेजी के वर्चस्व से पीड़ित होकर वे लिखते हैं कि "विचित्र सम्मेलन में भाग लेने आया हूं — आठवां विश्व संस्कृत सम्मेलन" जहां हर काम अंग्रेजी या जर्मन में हो रहा है। एक भी शब्द देवनागरी या संस्कृत का देखने-सुनने को न मिला। बैनर, पोस्टर, पत्र, भाषा, परिपत्र, पुस्तकें, बातचीत — सब के सब अंग्रेजी या जर्मन में। हमारे यहां के लोग भी यहां आकर अंग्रेजीदां हो गए हैं। (पृ 9)

इसी सम्मेलन में बेंगलूर से पधारी डा० गायत्री कहती हैं कि "कनार्टक में एक सौ ऐसे परिवार हैं जो संस्कृत में ही बातें करते हैं, संस्कृत हमारी मातृभाषा है।" यह सम्भाषण लेखक के मनमाफिक था, अतः उन्हें अच्छा और प्यारा लगा है।

भारत के साथ थाईलैंड, श्री लंका, जापान, दक्षिण कोरिया आदि की अधिक निकटता तथा संवेदनात्मक संबंध यदि बौद्ध धर्म के कारण हैं तो सुरीनाम, गुआना, त्रिनिडाड, मारीशिस, फीजी आदि के निवासियों के पूर्वज प्रायः भारतीय हैं। फलतः वर्तमान में भारतीय कला, संस्कृति, भाषा आदि इन देशों को अपने मूल उत्स भारत से जोड़े हुए है। मारीशिस त्रिनीडाड, सुरीनाम, हंगरी आदि देशों में हिंदी के प्रति इन देशों का अथाह प्रेम, रहन-सहन, संस्कृति कला आदि का सजीव चित्रण — इन देशों की भारत से निकटता और स्नेहिल संबंधों की मजबूती दर्शाता है।

सदैव प्रसन्नचित रहने वाले मस्तमौला श्री शंकर दयाल सिंह अपनों के प्रति सैदव स्नेह लुटाते हैं, किन्तु अपने दायित्व के प्रति लापरवाही बरतने वाले को वे कदाचित पसंद नहीं करते।

लेखक द्वारा सिओल नगर की यात्रा वृतान्त में दक्षिण कोरिया के इतिहास,व्यापार, खेल-कूद में सर्वोत्तम प्रदर्शन,देशवासियों की खूबसूरती, कर्मठता और राष्ट्रीयता आदि का वर्णन पाठक के मन में गुदगुदी पैदा करता है।

दक्षिण कोरिया की शिक्षा प्रणाली और स्वच्छता प्रेम से लेखक अत्यधिक प्रभावित हुआ है। लेखक अपने देश के शिक्षित युवा वर्ग को दक्षिण कोरिया से प्रेरणा लेने का संदेश देता है। कश्मीर से कन्याकुमारी, पश्चिम से पूर्व तक फैले देश के विभिन्न महत्वपूर्ण नगरों की यात्राओं के रोचक वृतान्त भी इस पुस्तक में सम्मिलित हैं।

सामान्यतः आम आदमी के लिए अपने ही देश का भ्रमण सम्भव नहीं हो पाता क्योंकि हम में पर्यटन के प्रति उत्साह की कमी है और साधन भी सीमित हैं। ऐसी स्थिति में विदेश यात्रा की तो कल्पना ही की जा सकती है। किन्तु 'यायावरी-एक मादक ग्रंथ' के माध्यम से श्री शंकर दयाल सिंह की लेखकीय प्रतिभा के सहारे हम विश्व भ्रमण का आनंद ले सकते हैं। 'यायावरी-एक मादक गंध' अत्यंत उपयोगी, ज्ञानवर्धक तथा एक संग्रहणीय पुस्तक है।

—डा॰ गुरूदयाल बजाज

चर्चित कृति-यायावरीः एक मादक गंध, **लेखक**—श्री शंकर दयाल सिंह **प्रकाशक**-पारिजात प्रकाशन, पूर्वी बोरिंग रोड़, पटना-9, **मूल्य**-100/-

राजभाषा प्रबन्ध

पिछले दिनों राजभाषा साहित्य में श्रीवृद्धि की है श्री गोवर्धन ठाकुर की नई पुस्तक "राजभाषा प्रबन्ध" ने। –

श्री ठाकुर पिछले दो दशकों से राजभाषा कार्य से घनिष्ठ रूप से जुड़े रहे हैं। पहले हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड में, उसके पश्चात मेकन में और सम्प्रति नेशनल मिनरल डेवलपमेंट कारपोरेशन के मुख्यालय हैदराबाद में। अतएव इस पुस्तक के कथ्य में प्रामाणिकता है। श्री ठाकुर ने राजभाषा के एक नए आयाम "राजभाषा प्रबन्ध" को पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित अपने लेखों द्वारा और इस पुस्तक के द्वारा रेखांकित किया है। इस पुस्तक में सरकारी कार्यालयों/उपक्रमों/बैंकों में राजभाषा से संबंधित काम को राजभाषा प्रबन्ध की संज्ञा दी गई है और इस कार्य के सभी पहलुओं को विस्तार से उजागर किया गया है। इस विषय पर कदाचित यह अनूठी और अकेली पुस्तक है। अतएव इसके विषय में यह अनुशंसा की जा सकती है कि बैंकों/उपक्रमों के प्रशिक्षण संस्थानों में इस पुस्तक का उपयोग राजभाषा कार्मिकों के प्रशिक्षण कार्य में किया जा सकता है। यद्यपि सरकारी कार्यालय इस पुस्तक के विषय क्षेत्र से परे नहीं है किन्तु इस पुस्तक की पृष्ठभूमि में नेशनल मिनरल डवलपमेंट कारपोरेशन जैसे उपक्रम ही हैं जहां श्री ठाकुर सम्प्रति कार्यरत हैं। अच्छा होता कि लेखक ने राजभाषा विभाग के स्थान पर राजभाषा प्रभाग शब्द का प्रयोग किया होता क्योंकि राजभाषा विभाग शब्द गृह मंत्रालय के अंतर्गत राजभाषा से संबंधित विभाग के लिए रूढ़ हो गया है। इस पुस्तक के माध्यम से उपक्रमों के कारपोरेट कार्यालय के राजभाषा प्रबन्धक के कार्य और कार्यालय के जन-सम्पर्क अधिकारी के कार्य का तुलनात्मक अध्ययन करके यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि राजभाषा प्रबन्धक को सौंपे गए कार्यकलाप किसी भी तरह से जन-सम्पर्क अधिकारी के कार्य से कम महत्व के नहीं हैं। लेखक का यह निष्कर्ष भी समीचीन प्रतीत होता है कि किसी उपक्रम अथवा संगठन में सतर्कता, विधि, मानव संसाधन विकास आदि विभागों के कार्य से भी यदि राजभाषा प्रबन्धक के कार्यों की तुलना की जाए तो किसी भी प्रभाग की अपेक्षा राजभाषा का कार्य कहीं अधिक वैधिक और बहु-आयामी है। इस तुलनात्मक अध्ययन से लेखक ने राजभाषा प्रबन्ध के लिए अलग बजट आदि का जो निष्कर्ष निकाला है वह अत्यन्त तार्किक और प्रभावपूर्ण है।

इस पुस्तक में कहीं-कहीं लेखक ने कुछ विवादास्पद बातें भी कहीं हैं जो प्रासंगिक नहीं हैं। जैसे लेखक के अनुसार "विभागीय स्वतंत्रता, प्रशासनिक और वित्तीय शक्तियां अन्य विभागों के प्रबन्धकों को सहज ही प्राप्त हैं, राजभाषा प्रबंधक को उपलब्ध नहीं हैं। भारत सरकार की संघीय राजभाषा हिन्दी के प्रति ढुलमुल नीति तथा सरकारी तन्त्र द्वारा संकल्पित प्रयास का अभाव भी एक हद तक इसके लिए जिम्मेदार है।" लेखक की एक मान्यता यह भी है कि हिन्दी अपने मातृ प्रदेश दिल्ली और उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले और उसके आस-पास के अतिरिक्त अन्यथा कहां की भी मातृभाषा नहीं है। "वह बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हरियाणा आदि राज्यों में वहां के राज्यों द्वारा राजकीय प्रयोजनों के लिए स्वीकृत की गई है और इन राज्यों को अपनी-अपनी अलग-अलग मातृभाषाएं हैं।" यह धारणा विवादास्पद है। लेखक ने इसी प्रसंग में आगे भी लिखा है कि यदि यह "हिन्दी" हावी है तो उत्तर भारतीय भाषाओं पर हावी है जहां की यह राजभाषा बन चुकी है और उक्त क्षेत्रों में जहां उनकी मातृभाषा राजभाषा होती आज किसी भी सरकारी प्रयोजन हेतु वह अपने ही क्षेत्रों में प्रयोग से वंचित की जा
चुकी है।" अच्छा होता कि लेखक ने इस मुद्दे को इस पुस्तक में न उठाया होता क्योंकि इसका विषय से कोई सीधा संबंध नहीं है।

इस पुस्तक की भाषा कहीं-कहीं बोझित और बनावटी हो गई है। "उन-उन" "उन-उन विषयों से संबंधित" के लिए लेखक ने "तद-तद," "तद-तद विषयक" तथा "इसके लिए" "एतदर्थ" का प्रयोग किया है। लेखक में राजभाषा प्रबन्ध का दायरा बढ़ाने के लिए दूसरे विषयों को भी सम्मिलित करने को प्रवृत्ति पाई जाती है जैसे राजभाषा ललित साहित्य का परिगणन। यह स्पष्ट नहीं है कि राजभाषा ललित साहित्य में किस प्रकार के वांडमय को शामिल किया जाएगा।

पुस्तक की साज-सज्जा-आवरण और मुखपृष्ठ आकर्षक है किन्तु पुस्तक का मूल्य (95 रूपए) कुछ अधिक प्रतीत होता है।

—कृष्ण चन्द्र श्रीवास्तव

पुस्तक का नामः राजभाषा प्रबन्ध, **लेखकः** श्री गोवर्धन ठाकुर, प्रकाशकः मैथिली प्रकाशन, प्लाट नं॰-23 टीचर्स कालोनी, गनराक, सिकन्दराबाद। **मूल्यः** 95 रूपए।

जीवन-मूल्य और स्कंदगुप्त

'गुणो भूषयते रूप, गुणो भूषयते कुलम्।
गुणो भूषयते विद्या, गुणो भूषयते धनम्।।'

अर्थात आदर्श गुणों से ही मनुष्य के रूप की शोभा होती है, गुणों से ही कुल की शोभा होती है, गुणों से ही विद्या सुशोभित होती है और गुणों से ही मानव के धन की शोभा होती है। मानवीय गुण, जिन्हें साहित्यिक भाषा में 'व्यक्ति का जीवन-दर्शन' और अर्थशास्त्रीय भाषा में 'जीवन के मूल्य' कहते हैं, ही मानवता का आधार हैं।

संसार में उत्पन्न विषमताओं के कारण हमारे प्राचीन जीवन-मूल्यों का ह्रास हुआ है और पुराने जीवन-मूल्यों का स्थान नए जीवन-मूल्यों ने ले लिया है। परिणाम यह हुआ है कि मनुष्य अब स्वयं से ही कटता जा रहा है। दया, प्रेम, क्षमा, त्याग आदि भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषताएं और अनमोल धरोहर रहे हैं। पश्चिमी सभ्यता के अन्धानुकरण में जब हम अपने नैतिक दायित्व तथा कर्त्तव्य से विमुख हो रहे हैं तो ऐसे में साहित्यकार हमारी सुप्त चेतना जगाने तथा कर्त्तव्यों के प्रति हमें सजग करने का प्रयास अपने साहित्य के माध्यम से करता हैं।

जयशंकर प्रसाद मुख्यतः कवि हैं परन्तु उनके नाटकों में धर्म, संस्कृति, इतिहास, दार्शनिक चिन्तन आदि का अद्वितीय समन्वित रूप देखने को मिलता है। प्रसाद जी ने अपने भावपूर्ण ऐतिहासिक नाटकों में राष्ट्रीय जागृति, नवीन आदर्श और भारतीय संस्कृति के प्रति अगाध श्रद्धा व्यक्त की है।

'स्कंदगुप्त' प्रसाद जी की प्रमुख ऐतिहासिक नाट्य-कृति है जिसमें कथानक व देशकाल के रूप में गुप्त काल को लिया गया है। प्रसाद जी ने इस नाटक के माध्यम से पारिवारिक घटनाओं से शासन एवं राजनीति पर होने वाले प्रभावों को इंगित किया है।

प्रसाद जी के नाटकों के विभिन्न पक्षों को अनेक विद्वानों ने विवेचित—विश्लेषित किया है, किन्तु उनके नाटकों में जीवन-मूल्य' पर अपेक्षाकृत बहुत कम लिखा गया है। श्रीमती कमलेश सिंह ने अपनी कृति 'जीवन-मूल्य और स्कन्दगुप्त' को बड़े सहज ढ़ंग से पठनीय बनाया गया है। श्रीमती कमलेश सिंह ने अपनी उक्त शोध कृति के बारे में लिखा है— "कंचन, कामिनी, कादम्ब के बहुरूपी प्रबल आकर्षणों से संचालित यह विवश मानव आखिर किस दिशा की ओर बढ़ रहा है? भव-मंच पर कठपुतली के सदृश अभिनय करते इस मानव का सूत्रधार कौन है? सत् और असत् के शाश्वत संघर्ष के पीछे किसकी इच्छाशक्ति कार्य कर रही है? इन सब संगतियों और विसंगतियों के बीच एक व्यक्ति अपनी सम्पूर्ण मानवीय निष्ठा और संवेदना के साथ अपने जीवन में उदात्त जीवन-मूल्यों, आदर्शों का समायोजन व निर्वहन किस प्रकार और किस रूप में कर पाता है? यही कुछ जिज्ञासाएं मेरे प्रस्तुत अध्ययन की स्त्रोत रहीं। प्रसाद के नाटक मेरी जिज्ञासाओं के उत्तर देते प्रतीत हुए।"

कृति 'जीवन-मूल्य और स्कन्दगुप्त' छः अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय पृष्ठभूमि के रूप में 'जीवन-मूल्य की अवधारणा और स्वरूप' तथा 'जीवन-मूल्यों के कारक तत्व' को लिया गया है जिनका आधार आर्थिक परिस्थितियां, राजनीति, इतिहास, संस्कृति और धर्म को माना हैं। द्वितीय अध्याय में 'स्कन्दगुप्त में व्यक्ति केन्द्रित जीवन-मूल्य' शीर्षक के अन्तर्गत प्रेम, क्षमा, त्याग, करुणा, अधिकार-चेतना आदि को लिया गया है। तृतीय अध्याय 'स्कन्दगुप्त में समाज केन्द्रित जीवन-मूल्य' शीर्षक को राष्ट्रीय-चेतना, मानवतावाद और नैतिकता का प्रश्न, इन तीन उपशीर्षकों में विभक्त किया है। चतुर्थ अध्याय 'स्कन्दगुप्त में धर्म, दर्शन केन्द्रित जीवन-मूल्य' को धार्मिक समन्वय का आदर्श, भारतीय दर्शन का प्रभाव, जीवन, जगत व मृत्यु के प्रति मौलिक दृष्टि और नियतिवाद सहित चार उपशीर्षकों में विभाजित किया गया है। पांचवें अध्याय में 'स्कन्दगुप्त में जीवन-मूल्यों की अभिव्यंजना के माध्यम' अर्थात् कलापक्ष के अन्तर्गत भाषा, संगीत, कविता, घटनाचक्र, पात्रों की सृष्टि आदि में लेखिका ने विवेचना की है। छठा अध्याय 'उपसंहार' के रूप में है।

समीक्ष्य कृति में श्रीमती कमलेश सिंह ने जिन जीवन-मूल्यों को लिया है, वे जीवन-मूल्य हमारी भारतीय संस्कृति की महानता के परिचायक हैं। लेखिका ने जिस सहजता और स्पष्टता से इन जीवन-मूलयों को 'स्कन्दगुप्त' के परिप्रेक्ष्य में देखा है, वह उल्लेखनीय है।

—**कु॰ रेखा खुराना,** 821, माडलटाउन, पानीपत (हरियाणा)

पुस्तक का नामः जीवन -मूल्य और स्कंदगुप्त, **लेखकः** श्रीमती कमलेश सिंह, **प्रकाशकः** साहित्य निकेतन, पीतमपुरा, नई दिल्ली, **मूल्यः** पचास रुपए।

राजभाषा नीतिः कार्यान्वयन

"सरकार की राजभाषा नीति की जानकारी सभी संबंधित अधिकारियों को अच्छी प्रकार से हो, वे अपने सहयोगियों को सही दिशा दे सकें और मूल रूप से हिंदी में काम करने की प्रवृत्ति अधिकतम लोगों में उत्पन्न कर सकें, तो हिंदी का प्रयोग कई गुणा बढ़ सकता है" — आलोच्य पुस्तक की प्रस्तावना के इस अंश में विद्वान लेखक ने पुस्तक का कथ्य सार रूप में उल्लेख कर दिया है। जो वास्तविक अर्थ रखता है।

प्रस्तुत पुस्तक में संघ सरकार की राजभाषा संबंधी नीति को स्पष्ट रूप से एवं इनसे संबंधित विभिन्न संकल्पों, आदेशों, नियमों आदि के क्रियान्वयन के विविध पहलुओं पर विस्तार से चर्चा की गई है। राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के परिप्रेक्ष्य में सरकार की कार्य प्रणाली और उसके प्रयासों की उपलब्धियों का आकलन तथा अनेक व्यावहारिक सुझाव इस पुस्तक की उपयोगिता को बढ़ाते हैं।

इस पुस्तक की सबसे बड़ी विशेषता है, इसमें लेखक के सुदीर्घ प्रशासकीय अनुभव और राजभाषा हिंदी के संदर्भ में उनकी निर्भ्रान्त व्यावहारिक दृष्टि का सरल और सुस्पष्ट शैली में विवेचन। राजभाषा नीति का कार्यान्वयन सरकार का सांविधिक दायित्व है। राजभाषा विभाग तो इस दिशा में सतत् सक्रिय है ही, सरकार के अनेक मंत्रालय, विभाग, प्रतिष्ठान आदि भी इस ओर रूचि से काम कर रहे हैं। यह पुस्तक वैसे अधिकारियों के लिए अत्यधिक उपयोगी होगी, जो राजभाषा नीति कार्यान्वयन से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े हैं। बल्कि वैसे अधिकारियों के लिए तो और भी उपयोगी होगी, जो सरकारी फाइलों की भाषा (राजभाषा) को दोयम दर्जे की आवश्यकता मानकर इसे मुख्य राजकाज से कोई अलग बात मानते हैं। हिंदी-राजभाषा के लिए अलग से समय न निकालना पड़े, वस्तुतः

इससे देश का बड़ा हित होगा; लेकिन यह तभी होगा, जब फाइलें आप ही आप हिंदी में बोलने लगेंगी.....प्रस्तुत पुस्तक अधिकारियों की मानसिकता, कार्यशैली और राजभाषा के प्रति उनकी रुचि का पर्याप्त परिष्कार और संस्कार कर पाएगी, बशर्ते वे इसे एक बार अवश्य पढ़ें।

संक्षेप में, "राजभाषा नीति कार्यान्वयन" पुस्तक पठनीय है, इसमें दिए गए सुझाव मानने योग्य हैं। इसे सर्वसुलभ बनाने के लिए कम-से-कम सरकारी गैर-सरकारी, विश्वविद्यालयों आदि के पुस्तकालयों में इसकी पर्याप्त प्रतियां रखना उपयोगी होगा।

—जयप्रकाश नारायण

लेखकः हरिबाबू कसल, **प्रकाशकः** सुधांशु बंधु, ई-9123, वसन्त विहार, नई दिल्ली-110057, **मूल्यः** 70 रूपए **पृष्ठः** 160।

श्रीराम वैदेही

'श्री राम वैदेही' रामाख्यान श्रृंखला में एक और काव्य कृति है। पुस्तक देखने में स्फुट काव्यकृति लगती है। पर आवरण पर महाकाव्य मुद्रित होने से ध्यान आता है कि यह महाकाव्य है। आधुनिक परिवेश में श्रीराम की जीवन गाथा का पूर्ण समावेश होने तथा 'वैदेही' का शीर्षक में जुड़ना बड़ा स्वाभाविक लगा। कहने को तुलसीदास जी ने कहा "सीया राम मय सब जग जानी" तथा "गिरा अर्थ जल विचि राम कहियत भिन्न न भिन्न" पर काव्य रहा 'रामचरित मानस' ही। इस दृष्टिकोण से यह शीर्षक अत्यन्त महान लगा। इसके लिये 'त्यागी' जी बधाई के पात्र हैं। अतः साहित्यकार संसद तथा मैथिलीशरण गुप्त काव्य पुरस्कार से इस काव्य का सम्मानित होना उचित है।

इस महाकावय की शैली सरस, सामयिक व स्वाभाविक भावनाओं से ओतप्रोत है। एकादश पर्वों में इस महाकाव्य की रचना सम्पन्न हुई है। इसका प्रणयन युगानुकूल प्रबन्ध शैली में हुआ है। मूलकथा के स्वरुप का रसभंग न करते हुये अपनी-भावनाओं का ऐसा रंग चढ़ाया है जो भगवान के लोकपावन-चरित्र को और भी महिमा मंडित करने के साथ समाज में उसके प्रति रुचि, निरन्तर आकर्षण, प्रेम, आत्मीयता व श्रद्धा का सम्बन्ध भी जगाता है। समीचनी परिवेश में व्याप्त सामाजिक आचार-विचार के पतन पर वज्र प्रहार किया है कवि ने इस प्रबन्ध काव्य के द्वारा।

प्रस्तुत काव्य छन्दबद्ध है व मुक्तक भी जो लयात्मक होते हुये सरस है। प्रस्तुत काव्य में अनेक ऐसे प्रसंग हैं जिन्हें कवि-कल्पना व मौलिकता ने उन्हें मधुर रोचक व सहजगम्य बना दिया है।

रामावतार के पूर्व की सामाजिक व्यवस्था आज की कराहती व्यवस्था दर्शाती है:

"चोरी, हिंसा, बलात्कार की घटनायें नित घटती।
जाति-धर्म, सम्प्रदायवाद में अग-जग उलक्ष गया है।
घुसखोरी, बटमारी, लम्पटता, राजनीति का छल है।
जगह-जगह अपहरण काण्ड ललनायें लूटी जातीं।"

नारी के गौरव चित्रण में कवि ने विशेष काव्य प्रतिभा व शैली का परिचय दिया है। क्यों न ऐसा हो? जब बन्दनीया जगज्जननी महा सीता जो "अतिशय प्रिय करुनानिधान की" प्रबन्ध-काव्य की नायिका हों और शीर्षक में श्रीराम के साथ 'वैदेही' जुड़ा हो। रावण मुक्ति के बाद जब राम सीता से मिलते हैं उस समय का वर्णन देखिये:—

पावन सीता श्रीराम चन्द्र की परिणीता।
वह पिघल पड़ी प्यारी प्रभु की प्रिय नवनीता।
नयनों से करुण झड़ी, झड़ी शेफाली सी।
प्रभु लोचन में टहकी पलाश की लाली सी।"

इन पंक्तियों में नारी की कोमलता व संवेदनशीलता प्रस्फुटित होती है।

त्यागी जी की वाणी में ओज, उत्साह और शौर्य का भाव प्रेषण निखरे हैं। जब रावण विज्ञान तन्त्र में अमर व विजयी होने के लिये तल्लीन है उस समय श्रीराम आदिशक्ति की पूजा-आराधना करते हैं पर पूजन काल में जब पाया कि एक कमल कम हो रहा है, तब श्रीराम "अब यज्ञ कुण्ड में काया अर्पणा हित व्याकुल" तब आदि शक्ति प्रकट हो।

"श्रीराम चन्द्र को थाम कहा मां ने तत्क्षण
मैं साथ तुम्हारे हूं रविकुल नन्दन।"
लग गये राम करने मां कपिला का वन्दन।
वर दो मानव हित अर्पित मेरा मन"।

त्यागी जी की कविता सफल व सहज है। छन्द का चयन भी भावों के अनुकूल हुआ है। राम काव्य परम्परा में 'श्री राम वैदेही' खड़ी हिंदी की प्रतिनिधि कृति है।

—राम निवास तिवारी 663, सैक्टर 28, नोएडा-201301

काव्य कृतिः श्री राम वैदेही, **कवि :** रामचन्द्र सिंह त्यागी, **प्रकाशकः** ऋतु प्रकाशन, पटना, **मूल्यः** 40/-रूपए

सुरभि के पंख

'सुरभि के पंख, विजया गोयल का दूसरा कहानी-संग्रह है। संग्रह में कुल बारह कहानियां संकलित है। वास्तविक परन्तु यथार्थ से परिपूर्ण उनकी रचनाएं सुरुचिपूर्ण और रोचक हैं जिसमें बोल-चाल की सीधी सपाट शैली का प्रयोग किया गया है— "अम्मा, मठरी में तनिक आजवायन भी छोड़ देना, मुझे अच्छी लगती है।" **सन्देह बाण** में प्रवीण कहता है, "मैं कल पांच बजे तुम्हारा इंतजार करूंगा। मुझे निराश मत करना।"

"शापिंग सेंटर", "आंटी", "टी स्टाल", 'सिविल सर्विस", "शो रूम", "सरप्राइज", "बुकिंग", "जॉब" जैसे आम बोल चाल के अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करने से उनकी कृतियां और भी सरस हो गई हैं। उनकी कहानियों में आम आदमी की समस्याओं को उभारा गया है। कई स्थानों पर समाज के कमजोर वर्ग की वेदना और व्यथा, विवश्ता और मजबूरी, परेशानी और निराशा का सजीव तथा मार्मिक चित्रण मिलता है। कुल मिलाकर कर उनका प्रयास प्रशंसनीय है।

—सुरेंद्र लाल मल्होत्रा

कृतिःसुरभि के पंख **लेखकः** विजया गोयल, **प्रकाशकः** आर्य बुक डिपो, करोल बाग, नई दिल्ली-110005, **मूल्यः** रु० 40/-

नमस्कार

लम्बे समय से दूरदर्शन से जुड़े हुए श्री शांति प्रसाद अग्रवाल द्वारा रचित "नमस्कार" दूरदर्शन पर उद्घोषणा तथा समाचार-वाचन प्रस्तुतीकरण संबंधी विषयों का सोदाहरण निरूपण करने वाली कृति है।

आज दूरदर्शन सभी जनसंचार माध्यमों में सबसे अधिक प्रभावशाली मीडिया के रूप में उभर कर सामने आया है। आज दूरदर्शन के इस व्यापक प्रसार ने युवा वर्ग में उद्घोषक या समाचार वाचक बनने की रूचि बढ़ा दी है। लेकिन एक ही पल में करोड़ो दर्शकों तक चेहरा दिख जाने की चाह में इस काम को अपनाने वाले लोगों को बुनियादी और तकनीकी बातों की जानकारी नहीं होती। अतएव इस कमी को काफी समय से महसूस किया जा रहा है।

'नमस्कार' के जरिए लेखक ने उद्घोषणा का महत्व और इसके लिए जरुरी प्रशिक्षण आवश्यक बताया है। यह पुस्तक दूरदर्शन पर उद्घोषक बनने के इच्छुक व्यक्तियों तथा पहले से काम कर रहे उद्घोषकवर्ग—दोनों का समान रूप से मार्गदर्शन करने के उद्देश्य से लिखी गई है।

श्री अग्रवाल का कहना है कि दूरदर्शन के कार्यक्रम चाहे कितने भी अच्छे क्यों न बने हों, पर यदि उन्हें सही तरह से पेश न किया जाए तो उनका आनंद कम हो जाता है। कार्यक्रम भले साधारण हो किन्तु उन्हें अच्छी तरह पेश किया जाए तो दर्शक उससे बंधे रह सकते हैं।

इस पुस्तक में कई रेखा-चित्रों के माध्यम से तकनीकी और व्यावहारिक जानकारी दी गई है। पहले और दूसरे अध्याय में दूरदर्शन के सामान्य सिद्धान्तों और दूरदर्शन केन्द्र की कार्य-प्रणाली से परिचित कराती है। इसके बाद पूरी तरह उद्घोषणा पर केंद्रित हो जाती है। सामान्य उद्घोषणा, समाचार वाचन, कार्यक्रम संचालन, घटनाओं की रिपोर्टिंग, इंटरव्यू वाचन, विज्ञापनों के लिए उद्घोषणा, दर्शकों के सामने कार्यक्रम संचालन, साप्ताहिक उद्घोषणा आदि के विविध रूपों की जानकारी दी गई है। उद्घोषक के लिए जरुरी योग्यताओं की जानकारी अलग अध्याय में दी गई है। इसमें आत्मविश्लेषण, दर्शकों की अपेक्षाएं, अच्छे व्यक्तित्व का महत्व, आवाज जैसे मुद्दों को विस्तार से बताया गया है।

दूरदर्शन में कितने लोगों की कितनी भागीदारी और उनका रुख और भूमिका क्या होती है तथा एक अच्छे उद्घोषक को इन सभी लोगों के साथ कैसे बेहतर तालमेल बनाकर काम करना चाहिए आदि की जानकारी विस्तार से दी गई है।

इस पुस्तक की भाषा काफी सहज और रोचक है तथा इसके तत्व इसकी उपयोगिता बढ़ाते है।

श्री शान्ति प्रसाद अग्रवाल पुणे के भारतीय फिल्म और टेलीविजन संस्थान से दूरदर्शन निर्देशन के मौलिक सिद्धान्तों का प्रशिक्षण प्राप्त हैं। 1963 में आकाशवाणी में बतौर ट्रांसमिशन एक्जीक्यूटिव और 1973 से दूरदर्शन से कार्यक्रम प्रबंधक और नियंत्रक के रूप में जुड़े हुए हैं।

हिन्दी में श्री अग्रवाल ने यह पुस्तक प्रस्तुत करने में पहल की है इसके लिए वे बधाई के पात्र हैं।

—शान्ति कुमार स्याल,

पुस्तक का नामः नमस्कार, **लेखकः** शांति प्रसाद अग्रवाल, **प्रकाशकः** ऋतंभरा प्रकाशन, बी-2/161, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-110021. **मूल्यः** पेपर बैक संस्करणः 120/- और डीलक्स संस्करणः 250/- रु०

आल्हा-ताला

'आल्हा-ताला' शीर्षक कुछ अटपटा सा दीखता है शुरु में उपन्यास हाथ में लेकर। 'आल्हा ताला' की अनुनय-विनय तो इन्सान देख जाता है पर चतुर्वेदी जी ने आल्हा व ताला का युगल शीर्षक चुनकर ऊंची सूझबूझ का परिचय दिया है। आल्हा-ऊदल तो भारतीय लोक साहित्य में सतत सुने व पढ़े जाते हैं पर 'ताला' को कोई उतना नहीं जानता। ये ताला इस उपन्यास के एक महान वीर योद्धा व साहसी इन्सान हैं जिनका नाम "सैय्यद ताला" है जो आल्हा-उदल के संरक्षक-मार्गदर्शक व सेनापति हैं।

ईसा की ग्यारहवीं सदी के अन्त में भारत विभिन्न राज्यों में विभक्त था। प्रस्तुत उपन्यास उसी समय की ताला सैय्यद की अमर गाथा है जो देश के ही नहीं विश्व के इतिहास में हिन्दू और मुसलमानों की अटूट दोस्ती और उनके बीच मधुर सम्बन्धों की अनूठी मिसाल है। महोबा के नरेश आल्हा-ऊदल अपने अद्भुत शौर्य के लिए विख्यात थे। लोक कवि जगनिक ने अपनी पुस्तक आल्हखंड में उनके युद्धों का विस्तार से वर्णन किया है। अपनी ताकत के बलबूते पर वे बावन किलों के विजेता थे।

युद्धों में उनकी विजय का सारा श्रेय ताला सैयद को था। सयैद साहब शहर बनारस के वीर सरदार थे, कौम के मुसलमान थे। महाराज मंडलीक आल्हा के पिता सरदार जस्सराज के दाहिने हाथ थे। वे अभिन्न मित्र ही नहीं, सहोदर भाइयों के समान थे। अपने पिता की मृत्यु के समय अल्हा केवल पांच वर्ष की आयु का अबोध बालक था। ऊदल मां के गर्भ में ही था। उनकी परवरिश सैयद साहब की देख रेख में हुई थी, सैयद सहब की बदौलत वे बावन किलों के विजेता हुए। उनके परिवार में सैयद साहब का प्रमुख स्थान था। ताला में अपार बल था, युद्धों को जीतने की कलाओं में वे माहिर थे, उनके स्वरूप का वर्णन इस भांति मिलता है—

पेट कठोती मुहं बटुआ सो
दाड़ा राहयो घोंदि पै छाय
तीन पसेरी घी जे खाय जांय
बारह धरी दूध पी जांय
वासठ मन की तोप जमजमा
धरि छाती पै देंय चलाय
बारह बेटा छप्पन नाती
जे मीर वे से नांय डारायं

दुर्भाग्य है, सब जानते हैं लड़ाई बुरी है, कोई लड़ना भी नहीं चाहता लेकिन इन्हें लड़ाया जाता है। हमें ऐसे तत्वों से सावधान रहना है।

इस नवीन कृति में लेखक ने साम्प्रदायिक विचारधारा को नवीन मोड़ देने का सफल प्रयास किया है। सभी शिक्षित हिंदू और मुसलमान इसे पढें तो उनकी एकता के लिए महत्वपूर्ण योगदान मिलेगा।

—शिप्रा तिवारी

अरुण विहार, 663/28 नोएडा-201301

उपन्यासः 'आल्हा-ताला', **लेखकः** श्री राम नारायण चतुर्वेदी, **मूल्यः** 30 रुपए, **प्रकाशकः** अनिल प्रकाशन, 69, लाजपत कुंज, आगरा-282 002

आदमी का व्याकरण

नेमपति प्रजापति की 'आदमी का व्याकरण' नामक कृति में 49 कविताएं संग्रहीत हैं।

आम आदमी की बेचारगी और लाचारी को शब्दों में ढाल कर कविता के रूप में प्रस्तुत हैं। लेखक ने भूमिका में ही स्पष्ट किया है कि "अपनी मिट्टी और जमीन से जुड़ी हुई रचनाएं शास्त्रीय और कलात्मक स्तर पर भले ही खरी न उतरें, लेकिन वर्तमान सत्य की दृष्टि से कविताएं सार्थक है।"

प्रस्तुत कृति में कवि ने वर्तमान राजनीति, साम्प्रदायिकता और समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार को विषय बनाया है।

अधिकतर कविताओं में जैसे विठा पाई, जूता, बंदर भेड़िया, संवाद, भारतीय इंसान, दर्पण, दूध, पानी और लहू, बेटी बनाम कुर्सी, चरित्र प्रमाण-पत्र और गीदड़ वाली आदि में कवि चुभता हुआ व्यंग करता है।

कवि ने सरल और सुबोध भाषा का प्रयोग किया है या यूं भी कह सकते हैं कि कवि की भापा जन-सामान्य की भाषा है। कई कविताएं जैसे उसूल, लहू ब्लड ग्रुप और पैसे की नकेल, वर्कमैन कम्पंसेशन एक्ट शेड्यूल फोट, में कवि ने हिंदी के साथ उर्दू और अंग्रेजी का उपयोग बड़ी खूबी से किया है।

कविताओं में प्रायः निराशावाद ही झलकता है। समाज पर केवल व्यंग ही नहीं कसे जा सकते बल्कि दिशा भी दी जानी चाहिए थी। यूं तो सम्पूर्ण संग्रह पठनीय है यदि कवि कुछ आशावादी कविताएं भी जोड़ देता तो यह संग्रह और अधिक ग्राहय बन जाता।

—अनिल बलूनी

202 डी, पाकेट-एक, मयूर विहार फेस-1 दिल्ली-110001

पुस्तक का नामः आदमी का व्याकरण, **लेखकः** नेमपति प्रजापति, **मूल्यः** 35 रुपए, **प्रकाशकः** पावन प्रकाशन, 'भारतेश्वरी धाम, अंकित विहार, पथेण्डा मार्ग, मुजफ्फर नगर (उ०प्र०)-251001.

पुलिस चिन्तन

महिलायें अब न केवल पुलिस के विभिन्न कार्य पद्धति में शामिल हो रही हैं एवं पुलिस में उच्च पदों पर पदासीन हो रही हैं, वरन् पुलिस से सम्बन्धित अनेक विषयों में लेखन व शोध कार्य की ओर भी अग्रसर है। ऐसी ही एक लेखिका सुश्री राजेन्द्र राजावत की लेखनी की परिणति है प्रस्तुत पुस्तक "पुलिस चिन्तन", जो अभी राजस्थान विश्वविद्यालय से पुलिस विषय पर पी०एच०डी० कर रहीं हैं। इनके कई लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं।

पुलिस बल कैसा हो, इस पर अपने अमूल्य विचार व्यक्त करते हुए महात्मा गांधी जी ने कहा था कि वे लोगों के स्वामी नहीं, बल्कि सेवक होंगे। जहां तक पुलिस के कार्य का संबंध है, वे न तो मुसलमान हैं, न हिन्दू और न ही सिक्ख हैं। वे केवल भारतीय हैं जो धर्म की ओर ध्यान दिए बिना दुखियों को पूरा-पूरा संरक्षण प्रदान करने की शपथ से बंधे हुए हैं। सरदार बल्लभ भाई पटेल ने भी पुलिस बल को यह सलाह दी थी कि ऐसा कोई भी कार्य न करें जो उस वर्दी के लिए असम्मानजनक हो जिसे आप पहने हुए हैं। ऐसा कोई कार्य न करें जिससे उस राष्ट्रीय ध्वज की प्रतिष्ठा को धक्का लगे जिसे आप सलामी देते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में प्रेरणा स्वरूप पुलिस हेतु आचार संहिता का विवेचन किया गया है। पुस्तक को इस अध्यायों में विभाजित कर पुलिस का उद्भव एवं विकास, नागरिक के मूल अधिकार एवं पुलिस, पुलिस शोध, पुलिस में मानव संसाधन विकास एवं प्रशिक्षण, पुलिस कार्य-प्रणाली की बाधायें एवं विसंगतियां, पुलिस समाज तथा अपराध, महिलाओं में बढ़ती हुई अपराधिक प्रवृत्तियां, समाज के कमजोर वर्ग एवं पुलिस तथा बड़े शहरों में पुलिस व्यवस्था पर भी प्रकाश डाला गया है।

पुलिस की आलोचना क्यों होती है? पुलिस कैसे एक बेहतर संगठन बन सकती हैं? राजकीय शक्ति के प्रतीक से हटकर पुलिस कैसे एक सेवा-संस्था बने? क्यों लोग समाज कंटकों के खिलाफ पुलिस से मदद और सुरक्षा की अपेक्षा तो करते हैं, परन्तु निडर हो कर चश्मदीद गवाह होने के बाद भी उस अपराधी के खिलाफ अदालत में बयान देने को तैयार नहीं हो पाते? खतरों में पड़कर अपराधी को पकड़ने वाले पुलिस-कर्मी का बयान साक्ष्य अधिनियम के अनुसार अमान्य हैं, क्यों? रंगे हाथों जुर्म करते पकड़ा गया व्यक्ति भी गवाहों के अभाव में बच निकलता है और पुलिस कसमसा कर रह जाती है, क्यों? ऐसे ही कुछ बुनियादी सवाल हैं, जो प्रत्येक संवेदनाशील एवं चिन्तनशील व्यक्ति को उद्वेलित करते हैं। पुलिस विभाग में प्रत्येक स्तर पर कार्यरत अधिकारियों एवं कर्मचारियों के जेहन में ये प्रश्न उठते रहने चाहिए। लेखिका ने ऐसे ही प्रश्नों का विश्लेषण किया है और यह उचित ही लिखा है कि अनेक विवशताओं के बावजूद भी पुलिस को चिन्तनशील बने रहना ही चाहिए।

पुस्तक में पुलिस प्रशासन के विभिन्न पहलुओं पर इस उद्देश्य से विचार व्यक्त किये गए हैं कि पुलिस कार्य-प्रणाली एवं प्रशासनिक स्तर के मध्य जो विसंगतियां एवं विरोधाभास विद्यमान हैं, उनसे उत्पन्न हुई पुलिस प्रशासन की आन्तरिक अव्यवस्था तथा पुलिस एवं जनता के मध्य परस्पर अविश्वास का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण द्वारा सांमजस्य स्थापित करने हेतु नये सिरे से प्रयास प्रारम्भ किये जा सकें।

पुलिस कर्मियों को शैक्षिक एवं जागरूक बनाया जाना जरूरी है ताकि वे प्रबुद्ध एवं चिन्तनशील बनकर प्रजातान्त्रिक समाज में अपने कार्य एवं व्यवहार के आधार पर जन आकांक्षाओं के अनुरूप अपने को ढाल सकें।

सभी पुलिस कर्मियों एवं विभागों तथा साथ ही जन-सामान्य के लिए भी पुस्तक की उतनी ही उपयोगिता है। विचारों की अभिव्यक्ति में स्पष्टता एवं परिपक्वता है। सभी सम्बन्धित क्षेत्रों में यह पुस्तक स्वागत योग्य हैं।।

— माला गुप्ता

डी-1ए/115, जनक पुरी, नई दिल्ली-110 058

पुस्तक का नामः पुलिस चिन्तन, **लेखकः** राजेन्द्र राजावत, **प्रकाशकः** कीर्ति पब्लिकेशन्स, सी 250-ए, मालवीय नगर, जयपुर, **मूल्यः** 150 रुपए, **पृष्ठः** 129।

धरा की गोद से

आलोच्य कृति में लेखिका विजया गोयल की 15 कहानियां संग्रहीत है।

जीवन के यथार्थ को ज्यों का त्यों प्रस्तुत करना अपने आप में एक बड़ा काम है। हल्की-फुल्की कहानियों के माध्यम से श्रीमती विजया गोयल ने समाज की वेदना व पीड़ा को व्यक्त करने का प्रयास किया हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि कहानी लेखिका की कहानियों के पात्र हमारे अपने आस-पास ही हैं। जैसे "आंतक" के अफसर 'श्री धर मानव। ऐसे अफसर हमारी व्यवस्था और दफ्तरी परिवेश के अनिर्वाय अंग बन चुके हैं। "मुक्ति का मोहन' समाज के बहुत से नव-युवकों की अपनी स्वयं की व्यथा है। "श्रद्धा" एक फ्रेम के अन्दर कैद समाज का चित्रण है तथा समाज में व्याप्त कुरीतियों पर भी प्रहार किया गया है। एक उदाहरण देखें- "मैंने सफेद वस्त्र धारण करके कोने में बैठ जाने से न तो मेरे पति की आत्मा को शान्ति मिलेगी न मुझे ही सुख।" और "उनके श्राद्ध के दिन मैं अनाथ आश्रम में बच्चों की मदद किया करूंगी। श्राद्ध तो श्राद्ध है, प्रेम है, दिखावा नहीं।" 'बाबू जी' एक लड़की जिसे उसके पिता जिन्होंने उसे संस्कारित किया है। उसकी अपने पिता के प्रति श्रद्धांजलि है। कहानी के अन्त में लेखिका कहती है "सदैव बाबू जी के बताए रास्ते पर चलूंगी और वह जो दहेज उन्होंने मुझे दिया है। उसे किसी को भी नहीं छीनने दूंगी। वह पुश्त दर पुश्त बंटता रहेगा" जो कि पिता के प्रति श्रद्धा की अभिव्यक्ति है।

लेखिका ने केवल समाज की पीड़ा ही नहीं, "त्रासदी" भी निम्न पंक्तियों के माध्यम से अभिव्यक्त की है। "क्या! वीर जी की बेटी मीना, रमा बनेगी, क्यों वह काम मांगने जाएगी घरों में? नहीं ऐसा नहीं हो सकता, कभी नहीं। अरे! कोई तो मसीहा बनकर यह अनर्थ रोके"। एक रास्ता भी सुझाया है।

लेखिका की भाषा सरल व जन सामान्य की है। कहानियां घटना प्रधान है तथा सामान्य रुचि के प्रत्येक पाठक को पसन्द आ सकती है।

—अनिल बलूनी

पुस्तक का नामः धरा की गोद से, **लेखिकाः** विजया गोयल, **प्रकाशकः** किताब महल, 22 ए, सरोजनी नायडू मार्ग, इलाहाबाद, **मूल्य** : 30 रुपए

भारतीय पुलिस

भारतीय पुलिस के विषय में पंडित जवाहर लाल नेहरु ने कहा था कि पुलिस को हमेशा यह महसूस करना चाहिए कि उन्हें केवल जनता की सेवा ही नहीं करनी, बल्कि उनका सहयोग भी प्राप्त करना है। दूसरी ओर जनता के मन में यह दृढ़ भावना होनी चाहिए कि समग्र रूप से पुलिस बल उनकी सेवा के लिए हैं और देश के लिए पुलिस बल अनिवार्य है। उन्हें उनकी सेवाओं का उपयोग करना चाहिए व अपराध का पता लगाने तथा व्यवस्था बनाए रखने में पुलिस को सहयोग देना चाहिए।

इसी सन्दर्भ में पुलिस के स्वरूप एवं कार्यकलापों की गहनता से छानबीन की है डा॰ ब्रजमोहन शर्मा ने अपनी प्रस्तुत पुस्तक "भारतीय पुलिस" में। किसी भी समाज में पुलिस का हमेशा से महत्वपूर्ण योगदान रहा है। राज्य के मूलभूत उद्देश्यों की प्राप्ति एवं सामान्य कानूनों के कार्यान्वयन में पुलिस की भूमिका हमेशा से आवश्यक रही है। पुलिस के अभाव में सुसंगठित समाज की कल्पना करना भी कठिन है। पुलिस पर अत्यधिक भार किसी न किसी रूप में हमेशा से ही रहा है। फिलहाल उनके कार्यों की प्रशंसा कम, पर आलोचना व आक्रोश अक्सर ही दिग्दर्शित होता रहा है। पुलिस की भी अपनी सीमाएं, समस्याएं तथा कठिनाइयां होती हैं, जिनको अक्सर नगण्य समझा जाता रहा है। पुलिस भी समाज के उसी रूप में अंग हैं, जैसे अन्य लोग। इनकी सीमाएं व कठिनाइयां जानना व उनका निराकरण करना अत्यन्त आवश्यक है। इस संस्था की सफलता के लिए निरन्तर व सतत् प्रयास करते रहना आवश्यक है।

लेखक डा॰ शर्मा राजस्थान विश्वविद्यालय के राजनीति विज्ञान विभाग से लम्बे अरसे से सम्बद्ध रहने एवं "पुलिस मजिस्ट्रेसी रिलेशन्स" विषय में पी॰एच॰डी॰ प्राप्त करने के फलस्वरूप भारतीय पुलिस के अन्तर्द्वन्द्व से भलीभांति परिचित रहे। आपकी इस पुस्तक भारतीय पुलिस के लिए भारत सरकार के गृह मंत्रालय के अन्तर्गत कार्यरत पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, नई दिल्ली द्वारा गोविन्द बल्लभ पंत पुरस्कार भी प्रदान किया गया है। पुलिस से सम्बन्धित अनेक विषयों पर बराबर आपके लेख प्रकाशित होते रहे हैं, जो उनके गहन अध्ययन व अभिरुचि के द्योतक हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में उन्होंने भारतीय पुलिस के सर्वांगीण स्वरूप व विकास पर गहनता से प्रकाश डाला है तथा भारतीय गणतंत्र में पुलिस के अहम कार्यशैली पर विचार दिग्दर्शित किया है। उन्होंने भारत देश के चहुमुखी विकास पर एवं केन्द्र व राज्य में शान्ति स्थापित रखने पर पुलिस के महत्वपूर्ण योगदान का विश्लेषण किया है। पुलिस पर जो राजनीतिज्ञों व कानून एवं न्यायपालिका की बाधायें होती है एवं उन पर कैसे विजय प्राप्त की जा सकती है, इस पर भी उन्होंने गहनता से विचार कर अपने महत्वपूर्ण सुझाव पेश किए हैं।

पुस्तक को छः अध्यायों में विभाजित करके लेखक ने काफी कुशलता से अपने विचार व्यक्त किए हैं। प्रथम अध्याय में समाज, राज्य, सरकार एवं पुलिस के अन्तःक्रिया, द्वितीय अध्याय में वैदिक काल तक भारतीय पुलिस के विकास, तृतीय अध्याय में भारतीय पुलिस व्यवस्था के संगठनात्मक रूप, चतुर्थ अध्याय में पुलिस के सन्दर्भ में केन्द्र राज्य सम्बन्ध, पांचवें अध्याय में कानून एवं व्यवस्था-पुलिस मजिस्ट्रेजी की साझेदारी और अन्तिम अध्याय में भारत में पुलिस जनता सम्बन्ध पर गहनता से अध्ययन कर प्रकाश डाला गया है। इस विषय पर विशेष अध्ययन एवं अपने अनुभवों के आधार पर लेखक ने अनेक व्यावहारिक व रचनात्मक सुझाव भी प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने पुलिस की छवि सुधारने एवं जनता की असली शुभचिन्तक संस्था बने रहने की ओर भी महत्वपूर्ण सुझाव पेश किया है। उन्होंने पुलिस की छवि आपके लिए आपके साथ हमेशा एवं जनता के सच्चे दोस्त बने रहने हेतु विद्वतापूर्ण बहुमूल्य सुझाव प्रदान किये हैं।

उनका यह सुझाव ध्यान देने योग्य है कि पुलिस सहृदयी बने। पुलिस अधिकारियों का जनता के प्रति ऐसा दृष्टिकोण अवश्य हो जनता और पुलिस के बीच की खाई कम कर सकेगा। यह ध्यान देने योग्य है कि कोई भी व्यक्ति पुलिस को तभी शिकायत करता है, जब वह गहरे संकट में होता हैं। यह भी सत्य है कि हर व्यक्ति को बिना प्रमाण व पुष्टि के नहीं स्वीकारा जाना चाहिए, विशेषतः जब तक लिप्त अधिकारी पर पहले

से भी कोई आरोप नहीं लग चुके हों। सारतः जनता या शिकायतकर्ता के मन में यह धारणा बननी चाहिए कि अधिकारीगण उनकी शिकायतों की छानबीन में अभिरुचि रखते हैं तथा वे भ्रष्टाचार से परे हैं। सचमुच किसी को न केवल ईमानदार होना चाहिए, बल्कि उनके कार्यकलापों से जनता को यह दिग्दर्शित भी होना चाहिए।

प्रस्तुत पुस्तक समस्त पुलिस संस्थाओं एवं संगठनों के अतिरिक्त कार्यपालिका व न्यायपालिका एवं योजना से सम्बद्ध लोगों तथा समस्त जनता के लिए भी अत्यन्त लाभकारी व उपयोगी है। इसकी शैली व साजसज्जा भी रोचक है तथा मूल्य काफी उचित है।

— माला गुप्ता डी-1ए/115 जनकपुरी, नई दिल्ली।

पुस्तक का नामः भारतीय पुलिस, **लेखकः** डा॰ ब्रजमोहन शर्मा, **प्रकाशकः** पंचशील प्रकाशन, जयपुर, **मूल्यः** 70 रुपए, **पृष्ठः** 151

कविता का सृजन और मूल्यांकन

अलग-अलग समय पर लिखे गए पन्द्रह निबंधों का यह संकलन है। ये निबंध भिन्न-भिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित-प्रसारित अथवा जो गोष्ठियों में पढ़े जा चुके है। फिर भी, संभवतः एक पुस्तक रूप में इनकी अपनी एक दृष्टि विशेष से उपयोगिता है। "कविता की प्रेरणा" कविता की रचना प्रक्रिया", "समसामयिक हिंदी कविता के मूल्यांकन की समस्या", नई कविता", "हिन्दी कविता में आधुनिकता", "नव्य प्रगतिशील साहित्य की समस्याएं", "हिंदी की नव्य प्रगतिशील कविता" सरीखे लेख गंभीर चिन्तन, स्पष्ट वैचारिक्ता और संशिलष्ट अभिव्यक्ति के परिचायक है।

"कविता की प्रेरणा" में लेखक ने स्वीकारा है कि कविता के जीवन्त विषय को ही कविता की प्रेरणा का नाम दिया जा सकता है। कविता के विषय सारी दुनिया में, दृश्य और अदृश्य जगत में बिखरे पड़े है। उन्हें पहचानने के लिए कवि की दृष्टि चाहिए और उससे पहले कवि का हृदय चाहिए।

लेखक आधुनिक युग में वैज्ञानिक उन्नति और बौद्धिक विकास के साथ साहित्य एवं कला संबंधी प्राचीन मान्यताओं को पूर्णतः स्वीकार नहीं करता कि "कला साहित्य के सृजन में कहीं दैवी शक्ति, प्रतिभा अथवा आलौकिक तत्व" की स्पष्ट भूमिका रहती है।

"कविता की रचना प्रक्रिया" में कविता को विचार तक पहुंचने के लिए "भावोदय, भावोत्तेजना और भाव शमन" की स्थितियों से गुजरने की चर्चा की गई है।

लेखक स्वयं कवि भी है; इसीलिए वह प्राचीन आचार्यों तथा आधुनिक समालोचकों और अपने समकालीन कवियों की मान्यताओं आदि का विश्लेषण "समसामयिक हिंदी कविता के मूल्यांकन की समस्या" में करता है। वह शब्द ध्वन्यार्थ, प्रतीक, बिम्ब विघाटन आदि की चर्चा भी करता है और अपनी मान्यता स्पष्ट रूप से निरूपित करता है कि "कविता के पुराने प्रतिमानों को ध्वस्त करके आज की कविता के मूल्यांकन के लिए उपयुक्त प्रतिमान विकसित किए जाएं।" लेखक की यह मांग जायज़ हो सकती है।

"हिंदी कविता में आधुनिकता" में वह मानता है कि "आधुनिक शब्द को "अवधारणा मूलक शब्द के रूप में ही ग्रहण करना होगा। वह जहां आधुनिकता को औद्योगिकरण तथा विज्ञान की उपलब्धियों" से जोड़ता है, वहां यह भी स्वीकार करता है कि भारत में आधुनिकता का विकास भारत की परिस्थितियों के अनुसार हुआ।

लेखक आवश्यक नहीं मानता कि "कविता में गूढ़ प्रतीकों एवं जटिल संश्लिष्ट बिम्बों की योजना" अथवा "क्लिष्ट और अभिजातपूर्ण भाषा" का व्यवहार ले।

"जातीय परंपरा और मैथिलीशरण गुप्त" मैथिलीशरण गुप्त का धार्मिक समन्यव तथा मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में राष्ट्रीय चेतना निबंधों में लेखक ने गुप्त जी को आज के संदर्भ में वस्तुनिष्ठ दृष्टि से देखने का प्रयास किया है और उनके विरोध में लिखी गई बहुत सी आलोचनाओं का सटीक उत्तर दिया है। इसी प्रकार "माखन लाल चतुर्वेदी की काव्य में राष्ट्रीय चेतना" तथा सुमिनंदन पंत तथा आधुनिक हिंदी कविताओं में परंपरा और नवीनता लेखों में लेखक ने दोनों कवियों का तटस्थ भाव से पक्षपात रहित दृष्टि से मूल्यांकन करने की चेष्टा की है।

नई कविता के कलापक्ष के विषय में लेखक मानता है कि उसके शिल्प में विविधता एवं नवीनता है। इसकी भाषा में चमत्कार-प्रदर्शन का आग्रह नहीं, अभिव्यक्ति की स्वच्छता एवं पठनीयता की छाप है। साधारण शब्दों में असाधारण अर्थ की प्रतीति, नए शब्दों का प्रयोग, सही और कम शब्दों के प्रयोग का आग्रह, दैनिक जीवन से शब्दों, प्रतीकों, बिम्बों का चयन, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक प्रसंगों में नवीन भाव करने की प्रवृति, नवीन उपमाओं, रूपकों, प्रतीकों तथा बिम्बों के प्रयोग के प्रति गहरी रुचि नई पीढ़ी के कवियों में मिलती है।

कुल मिलाकर यह पुस्तक पठनीय है, मननीय है और कविता को खासकर आधुनिक कविता के मर्म को समझने की दृष्टि से पर्याप्त उपयोगी है। लेखक के सभी निष्कर्षों से पाठक वर्ग सहमत न भी हो, किंतु जो लिखा गया है, उससे विषय को आगे बढ़ाने और सोचने के लिए प्रेरणा अवश्य मिलती है।

मुद्रण सुंदर है किंतु जिल्दबंदी और ऊपर कवर पर प्रकाशक ने कंजूसी न की होती तो पुस्तक और भी आकर्षक होती।

—राम चन्द्र तिवारी **डी॰-14/15, सैक्टर-8, रोहिणी, दिल्ली-85**

पुस्तक का नामः कविता का सृजन और मूल्यांकन, **लेखकः** डा॰ सुधेश, **प्रकाशकः** साहित्य संगम, डी-34, विद्या विहार, प्रीतम पुरा, दिल्ली, **पृष्ठ** : 162 **मूल्य** : 80 रुपए

खाड़ी युद्ध-91

एराक़! अव्वल ज़िक्र इसलिए कि 'खाड़ी युद्ध-91' एराक़ की ज़मीन पर लड़ा गया था। यह युद्ध क्यों लड़ा गया, इसपर काफी कुछ लिखा और प्रकाशित किया जा चुका है। उस युद्ध के वीभत्स दृश्यों को दुनिया के करोड़ों लोगों ने घर बैठे अपने टीवी॰ स्क्रीन पर भी देखा जिसे सी॰एन॰एन॰ ने सीधा प्रसारित किया था। लेकिन इसके बावजूद इस युद्ध से जुड़े बहुत से ऐसे सवाल लोगों के दिमाग़ों में कुलबुला रहे थे, या कुलबुला रहे हैं, जिनका उत्तर अभी भी एराक़ की राजनीति के गर्भ में मौजूद है या कालांतर में अमरीका को देना बाक़ी है।

एराक़ एशिया के दक्षिण-पश्चिम में और अरब देश के उत्तर-पूर्व में अवस्थित है। इसके पूर्व में ईरान और पश्चिम में उर्दुन, शाम और सऊदी अरब हैं, जबकि उत्तर में टर्की और दक्षिण में कुवैत और सऊदिया सहित

अन्य अरब रियासतें हैं। एक हिसाब से एराक़ दुनिया के मानचित्र पर उस पुल की हैसियत रखता है जो तीन उप महाद्वीपों एशिया, अफरीक़ा तथा यूरोप को परस्पर मिलाता है।

'एराक़' का शाब्दिक अर्थ है चट्टान। सातवीं शताब्दी तक इसका नाम 'मेसोपोटामिया' था। यह यूनानी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है 'दो नदियों का क्षेत्र', इसे अरबी भाषा में 'वादि-उर्राफ़िदीन' कहा जाता है। यह दजला और

फ़रात के संगम का इलाक़ा जिसे 'शत्तुल-अरब' कहते हैं—यानी वह स्थान जहां दो नदियां मिलकर फ़ारस की खाड़ी में आकर गिरती हों। लेकिन यह 'एराक़' का 'अंधकारपूर्ण क्षेत्र' है यानी लगभग 6 हज़ार वर्ग कि०मी० का दलदली क्षेत्र। वर्तमान एराक़ तो बग़दाद, कूफ़ा, आलमदाइन, अलमजथ्यब, दीवानिया, हिल्ला, सामरा और मोसिल, किरमोक, बाबुल और बसरा जैसे नगरों में बसा हुआ है और एराक का इतिहास बाबुल, करबला, नजफ और कूफा में बिखरा हुआ है।

'खाड़ी युद्ध-91' को समझने के लिए एराक़ को भी समझने और जानने की ज़रूरत है। हालांकि लेखक ने एराक की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को 6 पत्रों में समेटकर चौराहे पर खड़े ट्रैफ़िक (होम) गार्ड की भूमिका ज़रूर निभाई है। जाहिर है कि उसका मक़सद एराक़ का इतिहास लिखना नहीं था लेकिन इसके बावजूद उसने इतिहास के महत्वपूर्ण हिस्सों को ज़रूरत के अनुसार, अगले पत्रों पर प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। उदाहरणार्थ—'...एराक को कुवैत नहीं दिया गया जबकि वह युद्ध पूर्व बसरा प्रांत का एक हिस्सा था। 1961 में ब्रितानियों के हटने के बाद, एराक ने कुवैत के हिस्से लेने के लिए चार प्रयत्न किये किंतु ब्रितानियों तथा अंतरराष्ट्रीय सद्भावना की मदद से कुवैतियों ने उन्हें चारों बार असफल कर दिया।...(तत्कालीन ईरान के) शाह ने उस समय (1975) के कमज़ोर एराक़ से शतल अरब का पूर्वी हिस्सा ले लिया।' (शाह के पतन के उपरांत एराक के सदर) 'सद्दाम ने शतल अरब के पूर्वी हिस्से वापस लेने के लिए, धमाके के साथ, सितंबर '80 में ईरान पर धावा बोल दिया। वह युद्ध आठ वर्ष चला।... इस युद्ध में राजनैतिक स्वार्थों के कारण बहुत से देशों ने जिनमें अमेरिका, फ्रांस, सउदी, कुवैत मुख्य हैं, एराक़ की मदद की।' (पृष्ठ 4)।

लेकिन बाद की स्थितियों में एराक़ को पता चला कि वह 80 बिलियन डालर का कर्ज़दार बन चुका है। इसमें कुवैत की तरफ लगभग 15 बिलियन डालर था। यहीं से एराक और कुवैत के बीच 'वाकयुद्ध' शुरू होता है। बात बढ़ी जुलाई '90 में ओपेक देशों के मंत्रियों की जेनेवा में हुई बैठक के बीच कुवैत, एराक के 'समुचित सीमा संधि' पर हस्ताक्षर चाहता था और एराक चाहता था कि कुवैत रमल्ला कुएं से तेल निकालने के लिए 2.4 बिलियन डालर का मुआवजा दे और साथ है वह ऋण भी माफ कर दे।

'खाड़ी युद्ध-91' के लेखक ने वे सारे राजनीतिक कारण जो बजाहिर जाने जाते हैं, अपनी सद्य प्रकाशित पुस्तक में प्रस्तुत किये हैं और एक अमरीकी समर्थक के रूप में अपने लहजे को कठोर बनाते हुए निर्णायक वक्तव्य भी देते जाते हैं कि अगर ऐसा न होता तो 'सद्दाम यह दुस्साहस न करता।' (पृ० 5) सद्दाम ने दुस्साहस किया या नहीं, या अंतरराष्ट्रीय राजनीति में कौन सी भावी योजनाएं बुनी गयीं और एराक़ को युद्ध की प्रयोगशाला बनाया गया, यह नितांत राजनीति का विषय है और इसपर बखूबी बहस की जा सकती है, मगर एक प्रबुद्ध और सुसंस्कृत विद्वान कवि-लेखक को किसी भी व्यक्ति के प्रति द्वेष की भावना नहीं रखनी चाहिए, और वो भी ऐसा व्यक्ति जो भारतीय वायु सेना का एक जिम्मेदार अधिकारी रह चुका हो।

प्रस्तुत पुस्तक मूलतः **'वायु शक्ति की विजय'** की वकालत करती नजर आती है। निश्चित रूप से यह क्षेत्र लेखक का जाना-माना क्षेत्र है। आधुनिक संदर्भ में हम देखें तो 'इलेक्ट्रानिकी युद्ध कला उच्च प्रौद्योग (प्रौद्योगिकी) (हाई-टेक) तथा वायु श्रेष्ठता (एयर सुपीरिआरिटी) आधुनिक युद्ध के निर्णायक तत्व हैं।' इसी तत्व के रहते एराक को बहुराष्ट्रीय सेनाओं द्वारा मात खानी पड़ी। हालांकि मध्य एशिया के क्षेत्र में एराक के पास सबसे पुरानी वायु सेना थी। उसके पास इस्राइल तथा ईरान के साथ हवाई युद्ध के विपुल अनुभव भी थे। उसकी वायुसेना अधिकांश रूप में आधुनिक भी थी, फिर भी कम्प्यूटरों का चमत्कार, टोमाहाक आयुद्ध के करतब, उच्च प्रौद्योगिकी प्रक्षेपास्त्र 'स्लैम', मावरिक प्रक्षेपास्त्र, हार्म अलार्म के अतिरिक्त आधुनिकतम लड़ाकू विमानों ने जिस ढंग से अपने कौशल का प्रदर्शन किया, वह भारत के लिए भी एक तरह की सीख है। निश्चित रूप से आधुनिक तकनीकी वायु-युद्ध में दिलचस्पी रखने वालों की जानकारी के लिए यह पुस्तक एक विपुल भंडार है। खासतौर से वायुसेना के विद्यार्थियों के लिए तो और भी।

लेकिन यहां एक प्रश्न यह उभरता है कि क्या वायुसेना के विद्यार्थियों को प्रशिक्षण के समय इस या इस जैसी अनेक महत्वपूर्ण जानकारियां उपलब्ध नहीं करायी जा रही होंगी? शायद यह कहना उचित नहीं होगा। भारतीय वायुसेना के प्रशिक्षणार्थियों को आधुनिकतम तकनीकी युद्ध का प्रशिक्षण दिया जाता होगा। फिर प्रश्न यह उठता है कि आखिर 'खाड़ी युद्ध-91' के लेखक ने यह पुस्तक किसके लिए लिखी? क्या आम हिन्दी भाषी पाठक के लिए? यदि यह सही है तो आम हिन्दी का पाठक अपरोधन, अभिलक्ष्यन, अवरक्त प्रच्छन्नता, अवरक्त भबूका, प्रतिप्रतिप्रतिकार, असंसूचना, प्रतिबेधन और संसाधित्र जैसे शब्दों का अर्थ नहीं जानता। और न ही ऐसा विश्वास किया जाना चाहिए कि वह इस पुस्तक को पढ़ने से पूर्व अपने पास तकनीकी शब्द कोश लेकर बैठेगा। बेहतर होता यदि भाषा का सरलीकरण किया गया होता, क्योंकि हिन्दी में इस प्रकार की लिखी गयी यह एक अलग एवं महत्वपूर्ण पुस्तक है और इसका आम पाठक तक पहुंचना अगर जरूरी नहीं तो गैर जरूरी भी नहीं है। यह बात दीगर है कि प्रस्तुत पुस्तक के अंतिम 6 पृष्ठ तकनीकी शब्द कोश के लिए सुरक्षित किये गये हैं। फिर भी 'भूभाग समोच्च सुमेलन' जैसे कठिन तकनीकी शब्दों के स्थान पर वे ही प्रचलित शब्द ग्राहय कर लिए जाते जो वायुसेना की शब्दावली में बोले जाते हैं तो निश्चित रूप से पाठकों को सुविधा होती।

पुस्तक का नवां अध्याय 'विश्लेषण तथा शिक्षा' शीर्षक से है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और सैन्य तैयारी के बाद यदि आम पाठकों का रुचि वाला कोई अध्याय है तो वह यही नवां अध्याय है। इसमें युद्ध की विभीषिका से हुई एराक की अपार क्षति का लेखा-जोखा किया गया है। 'सद्दाम वियतनाम से सीखकर वियतनाम दुहराना चाहते थे। जबकि जनरल दुहे 1921 में कह चुके थे कि अगला युद्ध पिछले युद्ध की तरह लड़कर नहीं जीता जा सकता, वरन उच्च प्रौद्योगिकी से।' (पृष्ठः 143)।

पुस्तक में लेखक ने सामरिक दृष्टि से एराक की विजय की संभावनाओं

और बहुदेशीय सेनाओं की अनेक त्रुटियों की ओर भी इशारा किया है। निश्चित रूप से यह एक गहरी समझ और विराट अनुभव की ही देन कही जानी चाहिए। इस संदर्भ में महत्वपूर्ण बात यह है कि जहां सामरिक दृष्टि के अवलोकन, आलोचना और दिशानिर्देशन के साथ सुझाव दिये गये हैं, वे प्रत्यक्ष में भारतीय वायुसेना के लिये ही है क्योंकि यह वाक्य 'अगले युद्ध के बीज अक्सर पिछले युद्ध में बो चुके होते हैं (पृष्ठ-1) स्वयं सतर्क करने के लिए काफी है।

यदि तकनीकी शब्दावली की खटकन को भुला दिया जाए तो प्रस्तुत पुस्तक का भाषा सशक्त, मुहावरेदार और जीवंत दृश्यों को दर्शाती प्रतीत होती है। 'मियां की जूती और मियां का सिर', 'न रहेगा बांस और न बजेगी बांसुरी', तथा 'लग गया तो तीर, नहीं तो तुक्का', था 'देखन में छोटे लगें घाव करें गंभीर' के साथ-साथ कहावतों का भी सटीक प्रयोग इस पुस्तक में किया गया है।

कुल मिलाकर निश्चित रूप से यह पुस्तक न केवल पठनीय है बल्कि संग्रहणीय भी है।

—रंजन जैदी

खाड़ी युद्ध-91: वायुशक्ति की विजय, लेखक: विश्व मोहन तिवारी (एयर वाइस मार्शल-सेवा निवृत्त) **प्रकाशक:** भागीरथ सेवा संस्थान, आर 10/144, नया राजनगर, गाजियाबाद (उ०प्र०), **मूल्य:** 99 रु० **पृष्ठ:** 178

कुछ कविताएं अपने लिए, कुछ तुम्हारे लिए

— मस्तराम कपूर

कविता मनुष्य की सृजनशीलता की सबसे निजी और सहज विधा है। इसके लिए किसी स्कूल की, किसी प्रकार के प्रशिक्षण की जरूरत नहीं पड़ती क्योंकि यह स्वतः प्रवाहित होती है। बच्चा जब शब्दों के उच्चारण की अपनी शक्ति से परिचित होता है तो वह शब्दों की ध्वनियों से उनकी लय-ताल के साथ खेलता है। यह मानव का सर्वप्रथम सृजन होता है जो स्वयं को भी आनंद प्रदान करता है और दूसरों को भी।

कविता के लिए स्कूल अथवा प्रशिक्षण की जरूरत तब पड़ती है जब कविता सामाजिक स्वीकृति के लिए लिखी जाती है। नितांत अपने लिए लिखी कविता को स्कूल की जरूरत नहीं होती। बिना उस्ताद के मार्गदर्शन के कोई शायर नहीं बन सकता, या बिना साहित्य की शिक्षा के कोई कवि नहीं हो सकता। यह कथन उस शायरी या कविता के लिए तो सही हो सकता है जो दूसरों के लिए लिखी जाए किंतु अपने लिए लिखी कविता के लिए यह जरूरी नहीं है।

लेकिन प्रश्न उठता है कि क्या अपने लिए लिखी गई कविता की सार्थकता अपने तक ही सीमित रहती है या वह समाज के लिए भी अर्थवत्ता ग्रहण करती है? 'स्वांतः सुखाय' कविता की वह कौन सी विशेषता है जिसके कारण वह समाज को पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रेरणा देती है? इस प्रश्न का उत्तर आसान नहीं है। वास्तव में यह साहित्य-कलाओं का मूल प्रश्न, आदिम जिज्ञासा है। साहित्य-कला का सृजन हमेशा ही नितांत वैयक्तिक प्रयास होता है और सृजन के बाद वह निर्वैयक्तिक और सामाजिक हो जाता है।

इसका तीव्र बोध हमें कविता पढ़ते समय होता है, विशेष रूप से प्रगति-रचना में जो नितांत निजी अनुभव की अभिव्यक्ति होती है। इसका सशक्तरूप प्रेम कविताओं में मिलता है। संभवतः इसलिए कि प्रेम मनुष्य के निजत्व, उसकी अस्मिता और अस्तित्व की सर्वप्रथम घोषणा है। यह ईश्वरीय व्यवस्था से मानव का प्रथम विद्रोह है जिसके दंड स्वरूप आदम और हौवा को स्वर्ग छोड़ना पड़ता है। इस कविता का सहज स्फुरण किशोरावस्था में होने लगता है किंतु अक्सर उचित संस्कारों के अभाव में उसे अभिव्यक्ति नहीं मिलती और वह सहज रहस्यमयी अनुभूति बन कर रह जाती है। किंतु जब कभी उसकी अभिव्यक्ति होती है तो उसमें आश्चर्यजनक सौंदर्य आ जाता है।

श्वेता राव की कुछ चुनी हुई कविताओं के संग्रह **'आराधना''** में यह बात देखी जा सकती है। दसवीं कक्षा की छात्रा श्वेता राव का कविता का अध्ययन (उनके अनुसार) बहुत सीमित है, नीरज आदि की कुछ कविताओं और पाठ्य पुस्तकों की कविताओं तक किंतु परिवार से उन्हें सस्कार अवश्य मिले (वे मां की ओर से रांगेय राघव परिवार से हैं)।

'आराधना' की कविताओं में भाषा, व्याकरण, छंद आदि की त्रुटियां अवश्य मिलती हैं। कहीं-कहीं गीतों की किसी प्रसिद्ध पंक्ति को अपनाने या किसी भाव को ग्रहण करने का झुकाव भी दिखाई देता है किंतु यदि हम इन कैशोर्य-जन्य त्रुटियों को नजरअंदाज करें तों एक अद्भुत ताजगी भी इन कविताओं मे मिलेगी। कुछ उदाहरण लें:

खलता तो नहीं है अकेलापन
ऐसा भी कि जिया जाये ना,
एक साया संग कहीं होता है
समझाए भी, जो, समझाए ना,
धड़कन दिल की जो रुके नहीं,
रुक जाए फिर भी ऐसा है

———

दीवानापन यह कैसा है?
लो आज फिर अपने जहन में
नाम तुम्हारा चढ़ा लिया;
सुनने वालों से कल ही तो कहा था मैंने
तुम कुछ भी नहीं एक साये के सिवा।

———

इन कतिपय रोमानी अहसासों के अलावा पुस्तक में कुछ कविताएं आस-पास की घटनाओं और स्थितियों पर कुतूहल भरी नजर डालती हैं जिनसे बहुत मोहक चित्र बनता है जैसे 'कारवां' कविता में—

रेगिस्तानों में धूल के मकानों में कारवां निकलते हैं
रोज सुबह जो तपती धूप में चलते हैं
रातों में बहकते और मचलते हैं
रातों के घेरे में, वीरान अंधेरे में
रेती की सरहद पर अंगारों से गिरते हैं।
काली रातों में, रेतीली हवाओं में चमकते हैं जुगनुओं की तरह
भटकते हैं, गिरते हैं, क्या नहीं करते हैं
कारवां निकलते हैं।

किशोरावस्था की रचना होने के बावजूद इन कविताओं में संभावनाएं

छिपी हैं। पुस्तक सुंदर ढंग से छपी है किंतु न तो इस पर प्रकाशक का नाम है और न इसका मूल्य है।

'क्षितिज की खोज में' पम्पोश स्वरूप भट्ट की 59 कविताओं का संग्रह है। कविताओं का विभाजन 'हम, मैं, प्यास, जीवन, नारी, घाटी' शीर्षकों के अंतर्गत किया गया है। इस पुस्तक का मूल्य एक सौ रुपये है।

'क्षितिज की खोज' में मुख्यतया प्रगीति काव्य है—अपने को खोजने और पहुंचाने के प्रयास की निजी अनुभूतियां। इनमें से घाटी शीर्षक के अंतर्गत आई कविताओं का अहसास अलग किस्म का है। इनमें वह अनुभूति है जो मातृभूमि से बिछुड़े व्यक्ति के मन को सालती है जैसे आजादी के आंदोलन के दिनों में विदेशों में या जेलों में पड़े भारतीयों को हुई थी और "आता है याद मुझको" जैसी कविताएं लिखी गई थीं। मातृभूमि के बिछोह की इन कविताओं में भी वैसी है तड़पन है। 'नास्टालिजया' मन की कमजोरी ही सही किंतु वह भी धर्म की तरह दुखों को सहने की क्षमता तो देता ही है।

कश्मीर की सुंदर घाटी को छोड़ आए और शरणार्थी शिविर में पड़े व्यक्ति के लिए अपनी पुरानी यादों का निजी महत्व भी है लेकिन यह सार्वजनिक भी हो जाता है क्योंकि आज हर आदमी अपने को उखड़ा हुआ महसूस करता है। उदाहरण के लिए जब कवियित्री कहती है—'हर हँसी और आंसू का हिसाब रखने वाली झेलम क्या तुझे मेरी याद नहीं आती' तो झेलम सिर्फ नदी नहीं रह जाती वह मां, बहन, प्रेमिका, मातृभूमि कई रूप धारण कर लेती है।

कल्पना में ही अपने छूटे हुए अतीत को छूने की प्यास क्या सार्वजनिक प्यास नहीं है? 'विलपन' कविता में लेखिका कहती है:

अक्सर खुली आंखों से
उस आंगन और कमरों के
चक्कर काट आती हूं
अपने खेतों की फसलों की,
पेड़ों की दीवारों की
रखवाली मैं ही करती हूं।
यूं ही पड़े-पड़े बिस्तर पर।

संग्रह की अन्य कविताओं में स्त्री-जीवन के विविध पहलुओं पर दृष्टिपात हुआ है। इन कविताओं की विशेषता है कि इन में स्त्री अपने आपको देखती और व्याख्यायित करती है पुरुषों द्वारा स्त्री जीवन की गई खोज कितनी ही गहन हो वह अधूरी ही लगती है क्योंकि यह प्रत्यक्ष अनुभूति नहीं, "सैकेंड हैंड" अनुभूति होती है। हमारे समाज का दुर्भाग्य यह रहा है कि सदियों तक स्त्रियों को अपनी बात कहने का मौका नहीं दिया गया। वे क्या चाहती हैं, क्या सोचती हैं, उनके जीवन की सार्थकता क्या है— इन सब बातों को पुरुषों ने ही तय किया। यदि किसी बड़े कवि ने कह दिया कि 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो' या तुम्हारे जीवन का सार 'आंचल में दूध और आँखों में पानी' है, या तुम्हारे सौंदर्य का मानक 'कनक-छरी' है अथवा ऐसी कोमल-कामनीय बनने में है कि सांस, लेने और छोड़ने की प्रक्रिया में चार-छः कदम पीछे और फिर आगे चली जाओ, तो उस पर प्रश्न चिह्न लगाने की किसी की हिम्मत नहीं हुई। अनेक महिलाओं ने लेखन के क्षेत्र में प्रवेश करके इन धारणाओं को तोड़ा है और स्त्री की सही पहचान कराने वाला साहित्य सामने आ रहा है।

'क्षितिज की खोज में' संग्रह की अनेक कविताओं में स्त्री की अस्मिता की अभिव्यक्ति सुंदर शब्दों में हुई है। 'एक लहर और उसका किनारा' कविता में स्त्री-जीवन की अस्थिरता (पुरुष इसे चंचलता कहता) का वर्णन किनारा छूने के लिए बार-बार आती और लौट जाती लहरों के रूप में किया गया है:

मेरी अस्थिरता में न तो किनारा ही
कहीं चला जाता है
और न ही मैं किसी गहराई में समा पाती हूं
जहां से किनारा दिखे ही नहीं।

स्त्री इस सृष्टि का सब से अधिक विस्थापित प्राणी है। इस बोध को ये पंक्तियां जगाती हैं। अपने पैंतीसवें वसंत पर स्त्री को यह अहसास कुरेदता है कि—

लगातार पैंतीस वर्षों तक
आत्मसमर्पण की यह प्रक्रिया
मेरे अहं को भोथरा बना रही है...

विवाह तक स्त्री-जीवन की सार्थकता को सीमित करने वाले पुरुष-समाज के मूल्य के प्रति विद्रोह की भावना इन पंक्तियों में मुखर होती है:

चाँदी-सोने के धरातल पर बसी
ये दुनिया कितनी छोटी है!
सात कदमों में ही नाप ली...क्या ये ही दुनिया है?

पुरुषों ने नारी जीवन की बहुत ही सरल व्याख्या करने की कोशिश की और कामयाब नहीं हुए तो उसे 'पहेली' कह कर छोड़ दिया। किंतु नारी ऐसा नहीं कर सकती। वह देखती है—

ये टुकड़ों को जोड़-जोड़कर बनाई
रस्सी की तरह, इठलाती, बलखाती जिंदगी
आखिर, कहां से शुरु होकर
कहां खत्म होती है?

'मुझे दृढ़ विश्वास है'' कविता में लेखिका ने इनकी कोख को सर्पों की बाम्बी के रूप में देखा है जिसे सर्प चाट कर चले जाते हैं और उसे कंकाल बना कर आकाश तथा धरती के बीच त्रिशंकू सा लटका देते हैं। यह कोख सर्प को मनुष्य बनाने का व्रत लिए अनंतकाल से तपस्या-रत है किंतु उसकी योनि नहीं बदली।

संग्रह की अनेक कविताओं की अभिव्यक्ति की मौलिकता और गहराई यह दिखाती है कि लेखिका लंबे समय से कविताएं लिखती रही हैं और उनकी रचनाओं के संबंध में जानने की सहज उत्सुकता होती है।

'पर्वराज' नेमीचंद पटोरिया की ऐसी कुछ चुनी हुई कविताओं का संग्रह है जिनकी रचना कवि ने अपने सुख के लिए की। जब भी उनके जीवन में ऐसे क्षण आए जिन्होंने उन्हें परेशान किया, उन्होंने उन क्षणों को कविता में बांध कर अपने को टूटने से बचाया। छिंदवाड़ा (मध्य प्रदेश) में 3 जून, 1902 को जन्मे श्री पटोरिया का अधिकतर जीवन वकालत-व्यवसाय में बीता किंतु उनके सृजनशील मन ने व्यावसायिकता से कभी समझौता नहीं किया और लेख, कविता-कहानी, बोध कथाएं, संस्मरणों आदि के लेखन में 75 वर्षों तक निरंतर अपने को सृजनकर्म में

जुटाए रखा। प्रस्तुत संग्रह उनके पौत्र राजेन्द्र पटौरिया ने संपादित करके क्वेटिटी पब्लिकेशन्स, श्री क्लीनिक काम्प्लेक्स, वाकर रोड महल-नागपुर-2 से छपवाया है। जब यह पुस्तक छप कर आई तो लेखक मृत्यु-शैय्या पर थे। अपनी कविताओं को पुस्तक रूप में देखकर उन्हें अपूर्व संतोष मिला होगा। संभवतः इसलिए कि जो चीज अभी तक उनकी नितांत अपनी थी वह सब की हो गई।

लंबे समय में लिखी गई इन कविताओं में अलग-अलग स्वाद है। संक्षेप में कहें तो इनमें श्रीधर पाठक और द्विवेदी युग से लेकर नई कविता के युग तक की सारी संवेदनाओं की झलक मिल जाएगी।

सांसारिकता में डूबे रह कर भी उन्होंने अपने को कैसे उसकी स्थूलता एवं शुष्कता से बचाए रखा, इस बात का संकेत उनकी 'पर्वराज' कविता में मिलता है।

"मैं मस्त पड़ा, मैं सोया था
मैं राग-रंग में खोया था
बाहिर, की दुनिया सब कुछ थी
'अंतर' मेरा चुप रोया था।
तब कोलाहल सा कान पड़ा
कोई आता सा जान पड़ा
मैंने देखा भी पर्वराज का
परम सुभव्य जुलूस खड़ा।"

बहिर्मुख से अंतर्मुख की दिशा का ही परिणाम था कि उन्होंने अपने 'अंतर में मस्ती छाई हुई' अनुभव की।

'एक बूढ़े की हवेली' कविता में लेखक इस सत्य को हास्य-विनोद की शैली में कहता है कि पूरा जीवन खट कर आदमी अपने लिए घोंसला बनाता है किंतु बेटे-पोते उन्हें एक कोने में सीमित करके घोंसले पर कब्जा कर लेते हैं। 'रुदन' कविता में आंसुओं की महिमा का गान हुआ है। स्कूल की बिगड़ी घड़ी में श्लेषों का चमत्कारिक प्रयोग हुआ है। 'कप-टी (चाय) में चाय के कप (कप-टी) और कपटी के श्लेष के माध्यम से कवि चुहुल का रस भी लेता है:

जब कपटी सम्मुख आता है, तो पागल सा हो जाता हूं
झट उसे पकड़ अपने हाथों, अधरों से उसे लगाता हूं।
जग हंसता है तो हंसने दे, कपटी-प्रिय भी मुझ को कह लें
जब तक लिपटन की चाह मिले मन कहता तू सब कुछ सह ले।"

कहीं-कहीं तो रुबाइयों का भी प्रयोग हुआ है जैसे 'अनगूंजे स्वर' में—

सोने का होने से क्या हुआ, छुरा छुरा,
प्याला एक है तो क्या हुआ, सुरा सुरा है,
हम स्वभाव की चर्चा करने बैठे हैं—
अपना ही हो तो क्या हुआ, बुरा बुरा है।

इस कविता-संग्रह को पढ़ने के बाद यह भ्रम तो टूट ही जाना चाहिए कि नवीनतम परिधान में लिपटे बिना न कविता रहती है और न आदमी आदमी।

हिंदी का क्षेत्र आधा भारत तो है ही लेकिन हिंदी कविता सिर्फ दिल्ली में सिमट कर रह गई है। कहने का मतलब कि प्रकाशन संस्थाएं दिल्ली में हैं और जो यहां से साहित्य छपता है उसी को साहित्य की श्रेणी में गिना जाता है। क्या यह हिंदी की विडंबना नहीं है?

दिल्ली से बाहर सुदूर इलाकों में रहने वाले सृजनशील व्यक्ति जिनकी पहुंच दिल्ली की प्रसिद्ध प्रकाशन संस्थाओं तक नहीं हैं, अपनी अभिव्यक्ति के लिए साधारण प्रेस से स्वयं पुस्तकें छपवाते हैं लेकिन पुस्तकों की सज्जाहीनता के कारण उनकी रचनाएं उपेक्षित रह जाती हैं। न जाने कितने ही प्रतिभाशाली लेखक इस उपेक्षा का शिकार हैं। किंतु सृजन साधनों का गुलाम नहीं होता। यह बात कुछ पुस्तकों को देख कर सिद्ध हो जाती है।

पड़िया मुंगेर (बिहार) से रामनारायण स्वामी ने **'पत्थर-पत्थर'** शीर्षक से अपनी कविताओं की संग्रह साधारण से प्रेस से, साधारण साज-सज्जा के साथ छपवाया है। भूमिका में लेखक ने पुस्तक व्यवसाय की संकीर्णता के खिलाफ विद्रोह की भावना को भी स्वर दिया है और कविता की जनोन्मुखता को भी खुलकर स्वीकारा है। जन प्रकाशन सुविधा के अभाव में संप्रेषण बाधित होता है तो कविता प्रत्यक्ष सम्प्रेषण का माध्यम अपनाती है। ऐसी कविता गीत, गजल, शेर, रुबाई आदि का बाना पहनती हैं। बाना कुछ भी कविता में जान होती है तो वह अपनी छाप छोड़े बिना नहीं रहती। रामनारायण स्वामी की कविताएं भी इस श्रेणी की हैं।

शरद कुमार मिश्र महडोल (म०प्र०) में अध्यापन करते हैं किंतु राजधानी से भौगोलिक दूरी या तथाकथित बड़ी प्रकाशन संस्थाओं से असम्पर्क उनकी रचनाशीलता को नहीं बांध सकी। उनके पांच कविता संग्रह अब तक छप चुके हैं: (1) सबके लिए (2) तुम्हारे लिए **(3) हम किस तरह के हैं?** (4) आओ अपनी-तुम्हारी बात करें (5) चलो गाएं हम गीत प्यार के। सभी पुस्तकें स्थानीय साधनों से साधारण साज-सज्जा के साथ प्रकाशित हैं किंतु सरोकार, संवेदना में इन्हें श्रेष्ठ कविता-संग्रहों में गिना जा सकता है। निश्चय ही इनमें मौखिक संप्रेषणीयता का गुण स्पष्ट है। शरद कुमार ने मुख्य रूप से ग़ज़ल को अपने माध्यम के रूप में चुना है। हिन्दी के गज़ल-सम्राट दुष्यंत से इन्हें प्रेरणा भी मिली है और उनकी परंपरा को इन्होंने आगे भी बढ़ाया है। उनकी नवीनतम पुस्तक 'किस तरह के हैं' 15 लंबी गज़लों का संग्रह है जिनके शीर्षक एवं मतले हैं: हम किस तरह के हैं, हम किस तरह के थे, हम किस तरह होंगे, रात ने यह कहा सबेरों से, ख्वाब पाला रहा होगा, मुस्कान बच कर रह गए, फिर से कोई नगमाच ले, नहीं होती, बरसात की बातें करें, मेरा नाम लिया, हर व्यक्ति को चिहिनत किया है, सब का चेहरा खिल रहा है, व्यवसाय के लिए, उनकी पनाह से, उजरत नहीं रही।...

अपनी पूर्व प्रकाशित गजलों की तरह ये गज़लें भी कुछ नियम विषयों की नियत शब्दों एवं उपमानों में अदाकारी से काफी भिन्न हैं। उर्दू गज़ल की तरह ये दरबार में प्रस्तुत कथक नृत्य का आनंद नहीं, सागर में उठती और तट से टकराती लहरों की बानगी प्रस्तुत करती हैं जो एक ही तान से उठती और पास आती दिखाई देती हैं किंतु तट से पछाड़ खाने पर हर बार नया स्वर नया दर्द पैदा करती हैं।

'गिरगिट पाश' 'राजेन्द्र 'नटखट' का नया कविता-संग्रह है। उनके इस से पहले 'गिजाई' और 'केंचुए' संग्रह निकल चुके हैं। पुस्तकों के शीर्ष ही बताते हैं कि समाज की विद्रूपताओं को उन्होंने अपनी कविता में निशाना बनाया है। खुद ही पुस्तकें छापते हैं और बेचते कम बांटते अधिक हैं। प्रकाशन-व्यवसाय की तानाशाही के खिलाफ विद्रोह करके वे अपनी सृजनशीलता बनाए रखते हैं।

'गिरगिट' में समाज में भेष बदल, मुखौटे पहन विचरण करने वाले उन तत्वों पर व्यंग्य हैं जिनको देखने से जुगुप्सा पैदा होती है। एक उदाहरण देखें:

उनके घर अंधेरा कहां है?
अहा! देश-घर में अंधेरा है।
अहंकार का, अंधकार का डेरा है।
अंधेरे डेरे में हो रही
गिरगिटों की खूब कमाई
चहुँ ओर जारी है लुटाई
यहां काले अक्षरों में गिरगिटें छाईं।

चर्चित पुस्तकें:

1. **आराधना-श्वेता राव,** सम्पर्क: 134 सहयोग अपार्टमेंट्स, मयूर विहार I, दिल्ली
2. **क्षितिज की ओर-पम्पोश स्वरूप भट्ट,** सम्पर्क: एफ 21, WZ 67 रतन पार्क, शिवाजी मार्ग, नई दिल्ली-15
3. **पर्वराज-नेमीचंद पटोरिया,** सम्पर्क: राजेन्द्र पटौरिया, खान भारती, आजाद चौक, सदर, नागपुर-1
4. **पत्थर-पत्थर-राम नारायण स्वामी,** सम्पर्क: पड़िया, बरियारकर, मुंगेर (बिहार)
5. **हम किस तरह के हैं-शरद कुमार मिश्र,** सम्पर्क: कंचन बुक डियो, सूरज मार्केट, मेन रोड़, शहडोल (म०प्र०)
6. **गिरगिट पाश-राजेन्द्र नटखट,** सम्पर्क: यात्री प्रकाशन, बी-131 सादतपुर, दिल्ली-94

□

पृष्ठ 39 का शेषांश

फौज में जा रहे थे तो तिलक का क्या मतलब था? क्यों तिलक किया जा रहा है? यह बात मुझे समझ में नहीं आ रही थी, न अच्छी लग रही थी। सिर्फ इसमें अज्ञेय के प्रति जैनेन्द्र जी की ममता मुझे दिखाई दे रही थी। नवम्बर सन् 1943 में मेरी नियुक्ति दिल्ली रेडियो पर प्रोग्राम असिस्टेंट के रूप में हुई। पार्लियामेंट स्ट्रीट स्थित ब्राडकास्टिंग हाउस की लाल ईंट वाली इमारत तब बन चुकी थी। वहीं हिन्दुस्तानी टॉक्स सैक्शन मुझे दिया गया। कुछ महीने में ही मेरा ट्रांसफर लखनऊ हो गया और जो थोड़ा-सा संपर्क जैनेन्द्र जी से हुआ था, वह बीच में ही टूट गया।

लखनऊ रेडियो पर में 1950 तक रहा और जब मैं संयुक्त राष्ट्र संघ से वापस लौटा तब 1953 में फिर जैनेन्द्र जी से भेंट हुई। दिल्ली में तब शनिवार समाज की स्थापना हो चुकी थी। यह एक खुला हुआ साहित्यिक मंच था। सन् 1940-42 की तुलना में तब दिल्ली की तुलना में काफी लेखक आ गये थे। साहित्यिक विषयों पर काफी चर्चा होती थी। गर्मा-गर्म बहसें भी होती थीं। जैनेन्द्र जी ज्यादातर मौन रहते थे। वे अंत में बोलते थे। उनकी सहज बातों में भी हमेशा एक दार्शनिक स्तर झलकता था। उनकी बहुत सी बातों का अर्थ मुझे स्पष्ट नहीं होता था। बदले हुए यथार्थ से दूर जिस धरातल पर वे सोचते थे उसमें हमेशा दर्शन, अध्यात्म, चरित्र, नैतिकता, व्यक्तिगत आचरण आदि-आदि तत्वों का समावेश रहता था। उनकी भाषा और शैली में भी मुझे यही दार्शनिक उलझाव नजर आता था। मेरी पीढ़ी तक आते-आते भाषा और मुहावरा बहुत बदल चुका था। भाषागत यथार्थ और सामाजिकता की जिस जमीन पर मैं खड़ा था उसका मेल उनकी भाषा से नहीं हो सकता था। भाषा तो अनुभव, संवेदना, विचार और दृष्टिकोण के साथ बदलती है। इस दृष्टि से जैनेन्द्र जी मुझसे बहुत दूर थे। लेकिन विचारादर्श और साहित्यिक मान्यताओं से ज्यादा मूल्यवान मैं मानवीय संबन्धों को मानता हूं।

दस वर्ष बाद फिर जैनेन्द्र जी से मेरी भेंट दिल्ली से बहुत दूर कटक में 1962 में हुई। मैं उन दिनों आकाशवाणी, कटक पर निदेशक था। उड़ीसा के प्रख्यात विद्वान एवं राजनेता डा० हरेकृष्ण महताब द्वारा स्थापित उड़िया के प्रमुख दैनिक "प्रजातन्त्र" के वार्षिक साहित्य समारोह "विश्व मिलन" में वे मुख्य अतिथि होकर कटक आए थे। यह समारोह 14 अप्रैल को प्रतिवर्ष उन दिनों मनाया जाता था। जैनेन्द्र जी पुरी, भुवनेश्वर आदि ऐतिहासिक स्थानों को देखना चाहते थे। राष्ट्रभाषा प्रचार सभा, कटक के संचालक और पुराने हिन्दी सेवी (अब स्व०) श्री अनुसूया प्रसाद पाठक ने जैनेन्द्र जी को इन स्थानों पर ले जाने का प्रबंध किया था। कटक से मैं, मेरी पत्नी शकुन्त माथुर तथा सबसे छोटा बेटा अमित भी कोणार्क देखने गये। कटक रेडियो के अन्य मित्र भी साथ थे। वहां से लगभग तीन फर्लांग दूर समुद्र था। एक रेत भरी सूखी नदी के बीच से जाकर समुद्र तट तक हम पहुंचे। हमारे साथ के लोगों ने कहा कि वहां समुद्र का रूप बड़ा बीहड़ है लेकिन जैनेन्द्र जी देखने को उत्सुक थे। तेज धूप में लगभग साढ़े ग्यारह बजे हम वहां पहुंचे। समुद्र में तब हल्की-हल्की उर्मियां चल रही थीं। लेकिन वहां के लोगों ने कहा कि आज अमावस्या है और 12 बजे के आसपास समुद्र तट पर खड़े होना खतरे से खाली नहीं है। बहुत बड़ी लहरें तब उठने लगती हैं। मैं पूर्णिमा के दिन चांद में समुद्र के उमड़ने की बात को कवि कल्पना ही मानता था, इसलिए अमावस को समुद्र में बड़ी तरंगें उठेंगी, इस बात पर मुझे बिल्कुल विश्वास नहीं हुआ। हम वहां हल्की लहरों में थोड़ी देर खड़े रहे। पानी टखनों तक था। अचानक 10 मिनट के भीतर बहुत बड़ी-बड़ी लहरें उठने लगीं और एक लहर छाती तक आकर सैकिण्डों में निकल गयी। बड़ी मुश्किल से हम सब पैर जमाए रहे। अचानक मेरी पत्नी ने कहा कि अरे चप्पलें कहां गयीं? हम पीछे मुड़े तो देखा कि हमारी चप्पलें दूर किनारे के ऊपर पड़ी हैं—एकदम निर्मल, ऐसी धुली हुई जैसे किसी ने रेशे-रेशे का मैल निकाल दिया हो। जैनेन्द्र जी हंसकर बोले, मैंने कहा था न कि पीछे देखिये, यही कहीं होंगी। समुद्र कभी कुछ लेता नहीं, वापस दे देता है। और मैंने सोचा कि यह लेखक जो सारी बाहरी सच्चाई को अपने अन्तर में ढूंढता रहा है, जिन्दगी भर आर्थिक अभाव और संघर्षों में जिया है, जिसकी कहीं कोई नौकरी नहीं थी और न आजीविका का कोई नियमित साधन, जिसने दुनिया से कभी कुछ नहीं चाहा—चाहते न हों ऐसी बात भी नहीं थी—किन्तु आज के आदमी की तरह जिसकी क्रूर और दुर्मनीय महत्वाकांक्षा नहीं रही, उसकी साधना और लगन सचमुच वंदनीय है।

प्रस्तुति: **प्रदीप कुमार**
डी/I, 35, भारती नगर,
नई दिल्ली-3

राजभाषा सम्मेलन/संगोष्ठियां

देहरादून में राजभाषा संगोष्ठी

भारत पैट्रोलियम संस्थान की वै॰औ॰अ॰प॰ के इतिहास में पहली बार हिन्दी अधिकारियों की एक द्वि-दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। राजभाषा हिन्दी के केन्द्रीय कार्यालयों में प्रयोग से संबंधित कई पहलुओं यथा-राजभाषा का बजट, हिन्दी प्रशिक्षण, निर्देशों के अनुपालन, हिन्दी दिवस / सप्ताह के आयोजन, राजभाषा नीति के कार्यान्वयन व प्रचार-प्रसार में आने वाली कठिनाइयां एवं उचित मानसिकता का निर्माण आदि विषयों पर चर्चा हेतु 2 व 3 दिसंबर, 1993 को आयोजित इस कार्यशाला में वै॰औ॰अ॰प॰ की 41 प्रयोगशालाओं में से वै॰औ॰अ॰प॰ मुख्यालय समेत 20 प्रयोगशालाओं यथा सी॰एफ॰टी॰आर॰आई॰, मैसूर, सी॰ई॰ई॰आर॰आई॰, पिलानी, सी॰एम॰एम॰सी॰आर॰आई॰, भावनगर, आल र॰आर॰एल॰ भोपाल, एन॰आई॰ओ॰, गोवा, एन॰सी॰एल॰, पुणे, एन॰ई॰ई॰आर॰आई॰ नागपुर, सी॰आर॰आर॰आई॰ दिल्ली, सी॰एस॰आई॰ओ॰ चंडीगढ़, एस॰ई॰आर॰सी॰, गाजियाबाद, आई॰एन॰एस॰डी॰ओ॰सी॰, नई दिल्ली, आर॰आर॰एल॰, जम्मू सी॰बी॰आर॰आई॰, रुड़की, आई॰आल ई॰सी॰बी॰ जादवपुर (कलकत्ता), सी॰बी॰टी॰, नई दिल्ली एन॰आई॰एल स॰टी॰ए॰डी॰एस॰, नई दिल्ली, आई॰टी॰आर॰सी॰, लखनऊ, सी॰एस॰आल ई॰आर॰ मुख्यालय नई दिल्ली एवं सी॰एफ॰आर॰आई॰, धनबाद, (बिहार) एवं मेज़बान प्रयोगशाला, भापेसं, देहरादून----से आए 23 प्रतिनिधि सम्मिलित थे। इस का उद्घाटन 2 दिसम्बर 1993 को हुआ। इसमें मुख्य अतिथि थे---देहरादून के लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकार एवं पत्रकार, डी॰ए॰वी॰ कालेज, देहरादून के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष, डा॰ गिरिजा शंकर त्रिवेदी। डा॰ त्रिवेदी ने अपने उद्बोधन में कहा कि हिन्दी अधिकारियों को हिन्दी सेनानियों की भी भूमिका निभानी है। उन्होंने कहा कि हिन्दी अधिकारियों की स्थिति आज्ञाकारी अधीनस्थ व्यक्ति की होती है और उन्हें अपनी मौलिक सूझ-बूझ और प्रतिभा को प्रदर्शित करने का अवसर ही नहीं मिलता। वै॰औ॰अ॰प॰ के परिप्रेक्ष्य में उन्होंने कहा कि ऐसी संस्थाओं में जहां पारंपरिक रूप में दैनंदिन काम-काज में अंग्रेजी का बोलबाला हो, वहां हिन्दी को प्रतिष्ठित करना कोई साधारण काम नहीं है।

डा॰ त्रिवेदी ने प्रसिद्ध हिन्दी विद्वान् व कोशकार स्वर्गीय फादर (डा॰) कामिल बुल्के द्वारा दिए गए अपने जन्म-देश बेल्जियम के फ्रेंचज्ञाता सुशिक्षित नवयुवक के उदाहरण को याद किया जिसने उस देश पर उस समय राज कर रही फ्रेंच भाषा में आए पत्रों पर लिख दिया था कि उसे "फ्रेंच समझ में नहीं आती"। उन्होंने आह्वान किया कि काश हमारे देश में भी ऐसे कुछ दीवाने पैदा हो जाएं। किंतु डा॰ त्रिवेदी ने साथ ही यह भी चेताया कि विदेशी ज्ञान या शिक्षा मे कोई विरोध होने की बजाय उनका भी अध्ययन सुलभ होना चाहिए लेकिन अंग्रेजी की मानसिक दासता से मुक्ति आवश्यक है और इसके लिए हिन्दी के काम में लगे लोगों को संनानी की भूमिका निभानी पड़ेगी।

उन्होंने इंगित किया कि रूस में अनुवाद बहुत महत्वपूर्ण, सम्मानपूर्ण और अच्छे धनोपार्जन का माध्यम है जबकि हमारे यहां ऐसा नहीं है। अंत में डा॰ त्रिवेदी ने कहा कि पत्रकारों के रूप में लोकतंत्र का चतुर्थ स्तंभ हिन्दी के काम में लगे लोगों का प्रवक्ता बन सकता है। प्रथम सत्र की अध्यक्षता डा॰ रमाशंकर व्यास, हिन्दी अधिकारी, राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला, पुणे ने की। इस सत्र के विषय थे--(1) मुख्यालय द्वारा जारी किए गए आदेशों / निर्देशों के अनुपालन में कठिनाइयां एवं (2) प्रयोगशालाओं में राजभाषा के कार्यान्वयन हेतु बजट का प्रावधान। दोपहर के भोजनोपरांत द्वितीय सत्र की अध्यक्षता डा॰ गिरीश चन्द्र मिश्र, राजभाषा अधिकारी, भा॰पे॰सं॰, देहरादून ने की। इस सत्र के विषय थे--(1) हिन्दी आशुलिपि / टंकण / प्रबोध / प्रवीण / प्राज्ञ प्रशिक्षण की कठिनाइया, (2) कंम्प्यूटर एवं यांत्रिक सुविधाओं में हिन्दी का व्यावहारिक स्वरूप एवं (3) हिन्दी दिवस / सप्ताह / कार्यशालाओं के आयोजन की कठिनाइया॰। अगले दिन, 3 दिसंबर 1993 को प्रातः 9.30 बजे प्रारंभ हुए तृतीय सत्र की अध्यक्षता श्री एस एन साह राजभाषा अधिकारी, केन्द्रीय लवण एवं समुद्री रासायन अनुसंधान संस्थान, भावनगर ने की। इस सत्र के विषय थे, (1) कर्मचारियों को राजभाषा के प्रति सही मानसिकता से अनुप्राणित करना, (2) राजभाषा कार्यान्वयन / प्रचार / प्रसार में आने वाली कठिनाइयां, (3) हिन्दी में वैज्ञानिक कार्य--समस्याएं, समाधान व भविष्य एवं (4) प्रयोगशालाओं के हिन्दी प्रकाशन--पत्र-पत्रिकाएं, बुलेटिन आदि। अंत में मुद्दों पर चर्चा हुई एवं कुछ संस्तुतियां व सुझाव तैयार किए गए जिन्हें प्रधान मंत्री, महानिदेशक, वै॰औ॰अ॰प॰ एवं राजभाषा विभाग सहित विभिन्न प्रयोगशालाओं में भेजा जाएगा। इस कार्यशाला में, एक महत्वपूर्ण निर्णय यह लिया गया कि एक **"अन्तर वै॰औ॰अ॰प॰ हिन्दी सलाहकार समिति"** का गठन किया गया, जो विभिन्न प्रयोगशालाओं / संस्थानों और मुख्यालय के बीच राजभाषा के संबंध में आवश्यक समन्वय बनाए रखेगी।

"औद्योगिक क्षेत्र में अनुशासन" विषय पर राजभाषा संगोष्ठी

अनुशासन का पालन हर व्यक्ति का प्रधान कर्तव्य है। अनुशासनयुक्त व्यक्ति जीवन के हर क्षेत्र में सफल हो सकता है। औद्योगिक क्षेत्र में भी कर्मचारी अनुशासन से काम करें तो उस उद्योग का उत्पादन बढ़ेगा। इसी विषय को दृष्टि में रखते हुए हिन्दी कक्ष, विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र द्वारा दि॰ 10-3-1994 को 'औद्योगिक क्षेत्र में अनुशासन' नामक विषय पर अखिल भारतीय स्तर की एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमे वी॰एस॰पी॰ के प्रतिनिधियों के साथ-साथ देश के अन्य इस्पात संयंत्रों तथा विशाखपट्टणम में स्थित सार्वजनिक क्षेत्र के विविध उपक्रमों के प्रतिनिधियों ने भी भाग लिया।

इस संगोष्ठी का उद्घाटन करते हुए श्री जे मेहरा, अध्यक्ष-सह-प्रबन्ध निदेशक, (वी०एस०पी०) ने कहा कि राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार और प्रसार की दिशा में इस अखिल भारतीय स्तर की संगोष्ठी का आयोजन एक बहुत ही अच्छा प्रयास है और संगोष्ठी का विषय 'अनुशासन' हमारे संयंत्र जैसे उद्योगों में बुहत ही महत्वपूर्ण है। प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए डॉ एस कृष्णाबाबु, सहायक प्रबन्धक ने कहा कि-इसके पहले वी०एस०पी० में ऐसी 5 संगोष्ठियां सुरक्षा, स्वास्थ्य और उत्पादक कार्य संस्कृति जैसे विभिन्न विषयों पर आयोजित की गयीं। तकनीकी क्षेत्रों में कार्यरत कर्मचारियों में अनुशासन लाने का दायित्व प्रबन्धन का ही बनता है और जब तक प्रबन्धन और कर्मचारियों की बीच अच्छे संबंध नहीं बन पाते तब तक अनुशासन का पालन किसी भी उद्योग के लिए असंभव ही माना जाएगा।

मुख्य अतिथि व रीडर हिन्दी आन्ध्र विश्वविद्यालय डॉ वाई लक्ष्मी प्रसाद ने अपने वक्तव्य में कहा कि अनुशासन एक ऐसी शक्ति है, जो उद्योग में स्वस्थ वातावरण बनाये रखने तथा संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु सभी कर्मचारियों को उद्यत करता है। उन्होंने यह भी कहा कि 'जो कर्मचारी अनुशासन का पालन नहीं करता, उसे अवश्य दण्डित करना चाहिए।' इसके अंनतर संगोष्ठी के विशेषांक में प्रकाशनार्थ प्राप्त आलेखों में उत्तम आलेखों के लिए प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय पुरस्कार दिये गये और इन सभी आलेखों से प्रकाशित विशेषांक का श्री जे मेहरा, अध्यक्ष-सह-प्रबन्ध निदेशक द्वारा विमोचन किया गया। तत्पश्चात् प्रतिनिधियों ने संगोष्ठी के विषय पर अपने-अपने विचार सभा के सम्मुख प्रस्तुत किये। मध्याह्न भोज के उपरांत प्रतिनिधियों को तीन समूहों में विभाजित किया गया।

इस तीनों समूहों को संगोष्ठी के मुख्य विषय 'औद्योगिक क्षेत्र में अनुशासन' से संबंधित निम्नलिखित तीन विभिन्न विषय देकर आपस में चर्चा के बाद अपने निष्कर्ष प्रस्तुत करने का अनुरोध किया गया:

1. अनुशासन को कायम रखने के लिए अधीनस्थ कर्मचारियों को क्या करना है?
2. अनुशासन बनाये रखने के लिये प्रबन्धन को क्या करना चाहिए?
3. औद्योगिक क्षेत्र में अनुशासन की स्थापना में सरकार की क्या भूमिका है?

उपर्युकत तीनों विषयों पर समूहों ने अपने-अपने निष्कर्ष प्रस्तुत किये, जो इस प्रकार हैं:

'क' समूह के निष्कर्ष:

1. अनुशासन एक ऐसा माध्यम है, जिसके द्वारा हमें एक निश्चित काम को निश्चित दिशा में निश्चित समय पर पूरा करने में सुविधा होगी।
2. कार्यपालक और गैर-कार्यपालक दोनों के लिए अनुशासन एवं नियमावली एक समान हों।
3. औद्योगिक संस्थान में सभी कर्मचारियों को नीचे लिखे अनुशासन का पालन करना हैं:

   (क) सुरक्षा के क्षेत्र में, (ख) तकनीकी क्षेत्र में, (ग) प्रबन्धन क्षेत्र में, (घ) सामान्य

उपर्युक्त क्षेत्रों में अनुशासन कायम करने के लिए अधीनस्थ कर्मचारियों को निम्नलिखित कार्यों का पालन करना चाहिए—

(क) नियंत्रण अधिकारियों का स्व-अनुशासित होना,
(ख) अधीनस्थ कर्मचारियों को औद्योगिक नियमावली की शिक्षा देना,
(ग) मानक कार्य पद्धति की विकास, प्रशिक्षण एवं पालन
(घ) कार्यस्थल का उचित रख-रखाव
(ड) सुरक्षा नियमों का सख्ती से पालन
(च) कर्मचारियों को स्व-अनुशासित रखने और कारखाने में सभी प्रकार के अनुशासन को कायम रखने के लिए सुव्यवस्थित ढंग से प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन
(छ) पर्यावरण के क्षेत्र में विशेष ध्यान
(ज) नियमों का उल्लंघन करनेवालों के विरुद्ध उचित कार्रवाई।

'ख' समूह के निष्कर्ष:

1. पदोन्नति नीति का अनुपालन किया जाना चाहिए।
2. स्थायी आदेशों की संपूर्ण जानकारी श्रमिकों को दी जानी चाहिए। इसके लिए कार्य-स्थल पर या अन्यत्र कार्यशालाएं आयोजित की जानी चाहिए।
3. पर्याप्त कार्य के आधार पर मानव-शक्ति की पद-स्थापना।
4. प्रशिक्षणार्थियों को उनके प्रशिक्षण के दौरान अनुशासन की महत्ता एवं उसके व्यावहारिक पक्ष को समझाया जाय।
5. अनुशासंनात्मक दण्ड प्रक्रिया पूर्ण रूप से निष्पक्ष होना चाहिए।
6. श्रमिक के अस्तित्व को स्वीकार किया जाना चाहिए। श्रमिक की प्रबन्धन में सभी स्तर पर भागीदारी होनी चाहिए।
7. कार्य की प्रशंसा और उचित प्रोत्साहन।
8. शिकायतों का निवारण निर्धारित समय सीमा में किया जाना चाहिए।
9. कर्मचारियों के विश्वास को ठेस नहीं पहुंचायी जानी चाहिए।
10. प्रत्येक स्तर पर अनुशासन बनाये रखने के लिए शीर्ष-स्तर को गंभीरता से विचार करना चाहिए।
11. प्रशिक्षण विभाग द्वारा प्रशिक्षुओं को संबंधित प्रशिक्षण के अतिरिक्त अनुशासित रहने की महत्ता भी समझायी जाय।
12. लिखित व अलिखित नियमावली की जानकारी सभी कर्मचारियों को सेवा आरंभ के समय प्रदान की जाय। आचार संहिता भी समझायी जाय।
13. कर्मचारियों के पारस्परिक संबंधों को बनाये रखने का प्रयत्न हमेशा करना चाहिए। मानव को सामूहिक आधार पर प्रेरित किया जाय।
14. अनुशासन के पालनार्थ श्रमिक संगठन की सहभागिता को भी मान्यता दी जाए।
15. कर्मचारियों के मन में कार्य करते समय असुरक्षा की भावना न आये।
16. कर्मचारीगण और प्रबन्धन में पारस्परिक सामंजस्य हो।

'ग' समूह के निष्कर्ष:

1. वर्तमान में अटल भूमिका है।
2. इतने अधिक हस्तक्षेप औद्योगिक क्षेत्र में अनावश्यक है।
3. अनुशासन को बनाने, बिगाड़ने में सरकार की रुचि की सर्वोपरि है।
4. उद्योग में/औद्योगिक क्षेत्र में सुधार हेतु अनावश्यक हस्तक्षेप समाप्त करना।
5. दो इकाइयों (श्रमिक तथा प्रबन्धन) के बीच तीसरे की उपस्थिति लाभप्रद के बजाय हानिप्रद ही होती है।
6. श्रमिक व प्रबन्धन के बीच पारस्परिक संवाद की स्थिति कायम रखी जाय।

7. केवल निर्णायक स्थिति में ही सरकार की सहयोगी / सलाहकार तक की भूमिका को सुनिश्चित बनाया जाय।
8. ऊपर से नीचे तक अनुशासन लाने की प्रक्रिया में सरकार की प्रमुख भूमिका हो सकती है।
9. प्रत्येक क्षेत्र में हमें शासन पर निर्भरता को कम नहीं, अपितु समाप्त करना होगा।
10. श्रमिक प्रबन्धन के बीच संवाद / चर्चा के बाद ही निर्णय हों और सरकार का हस्तक्षेप न स्वीकार किया जाय।

उसी दिन शाम को संगोष्ठी का समापन समारोह आयोजित किया गया जिसमें श्री वाइ के चौधरी, मुख्य नगर प्रशासक, वी॰एस॰पी॰ मुख्य अतिथि थे। उन्होंने अपने वक्तव्य में अनुशासन का महत्व और उसकी आवश्यकता का जिक्र करते हुए कहा कि हर क्षेत्र में इसकी आवश्यकता बनी रहती है। खासकर औद्योगिक क्षेत्र में इसके बिना प्रगति संभव नहीं है।

भाषा भेद भावों को छोड़ दें।

— टी गोपाल राव

"विशाखापटनम् में राजभाषा को पूर्णतः कार्यान्वित करने के लिए बहुत सारे कार्यक्रम हो रहे हैं ऐसी योजनाओं से प्रत्याशित सफलता प्राप्त करने हेतु सरकार व जनता को इसे गंभीरता से लेना चाहिए।" ये बात विशाखापटनम पत्तन न्यास के अध्यक्ष श्री टी॰ गोपाल राव ने कही। सोमवार सायंकाल पोर्ट क्षेत्र में स्थित ड्रेडजिंग कार्पोरेशन आफ इंडिया लिमिटेड में उन्होंने राजभाषा दक्षिणी क्षेत्रीय सम्मेलन में मुख्य अतिथि के रूप में भाग लिया। गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, नई दिल्ली के उप सचिव (कार्यान्वयन) श्री के॰सी॰ श्रीवास्तव ने सम्मेलन की अध्यक्षता की। देश में भाषा संबंधी अड़चनों को दूर न करने के प्रति अपनी चिंता प्रकट करते हुए उन्होंने कहा कि राष्ट्र भाषा हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने के प्रति जनता को ध्यान देना चाहिए। उपनिदेशक (कार्यान्वयन-दक्षिणी) ने कहा कि राजभाषा में उत्कृष्ट कार्य करने के लिए हर साल विभिन्न कार्यालयों/उद्यमों/बैंकों को पुरस्कृत किया जा रहा है। पोर्ट ट्रस्ट की हिन्दी अधिकारी श्रीमती हेमलता राव ने जानकारी दी कि ऐसे समारोह इसके पहले कोचिन्न तथा हैदराबाद में आयोजित किए गए थे। डी॰सी॰आई॰ के अध्यक्ष श्री सी ए शास्त्री, बी॰एच॰पी॰वी॰ के श्री गुरूराजा एवं न रा का स के सचिव श्री रामनारायण भी सम्मेलन में उपस्थित थे। उत्कृष्ट कार्य करनेवाली संस्थाओं को मुख्य अतिथि श्री टी॰गोपाल राव ने पुरस्कार प्रदान किए।

सार्वजनिक उपक्रमों ने हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड (गुंटूर) के अधिकारी श्री एन॰एस॰ मेहता, श्री एवी अप्पा रावः सी पी आर आई के अधिकारी डॉ॰ राममूर्ति व डॉ॰ विजया मल्लिक, विशाखापटनम जिंक स्मेल्टर के श्री बी एन मित्तल व श्री बलवीर सिंह भटनागर, विशाखापटनम डाक लेबर बोर्ड के श्री आर॰ सुधाकर व श्री एस॰वी॰ भास्कर राव, बैंकों के अंतर्गत यूनियन बैंक आफ इंडिया (बेंगलूर), इंडियन बैंक (हैदराबाद), यूनियन बैंक आफ इंडिया (बेलगाम) व आंध्रा बैंक, बेंगलूर एवं सरकारी कार्यालयों में दक्षिण मध्य रेल, भारतीय रेल निगम इंजनीरिंग, दूर संचार, भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संस्था, प्रतिभूति मुद्रणालय को प्रशस्ति पत्र दिए गए। न रा का समितियों के अंतर्गत मंगलूर, अंनतपुर व विजयवाड़ा को प्रशस्ति पत्र प्रदान किए गए।

असम परिमंडल राजभाषा सम्मेलन एवं संगोष्ठी

असम डाक परिमंडल द्वारा संघ सरकार की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन-कार्य को गति देने एवं इस काम में आ रही कठिनाइयों के निराकरण पर विचार विमर्श करने के लिए 10 मार्च, 1994 को "परिमंडल राजभाषा सम्मेलन" एवं 11 मार्च, 1994 को "राजभाषा हिन्दी का कार्यान्वयन" विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

"परिमंडल राजभाषा सम्मेलन" की अध्यक्षता श्री ए॰ के॰ चक्रवर्ती, मुख्य महा डाकपाल, असम परिमंडल, गुवाहाटी ने की। इसमें क्षेत्रीय महा डाकपाल श्री इंदिबर देवरी सहित सभी अधिकारी एवं समस्त मंडल/यूनिट प्रमुख उपस्थित हुए। इसमें अधीनस्थ कार्यालयों में हिन्दी अनुवादक/हिन्दी टाइपिस्ट पदों के सृजन, असम राज्य के सभी नगरों में हिन्दी प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित करने, हिन्दी पत्रों का हिन्दी में ही उत्तर देने तथा धारा 3(3) के कागजातों को द्विभाषी रूप में जारी करने संबंधी अनेक निर्णय लिए गए।

दिनांक 11 मार्च,94 को स्थानीय लक्ष्मीराम बरूआ सदन में "राजभाषा हिन्दी का कार्यान्वयन" विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस संगोष्ठी का उद्घाटन प्रख्यात साहित्यकार, ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता एवं साहित्य अकादेमी के पूर्व अध्यक्ष डॉ॰ वीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य ने किया। उन्होंने देश के समस्त विद्यालयों व नगरों में हिन्दी तथा देश की प्रांतीय भाषाओं को सीखने के लिए "भाषा क्लबों" के गठन की आवश्यकता पर बल दिया। उन्होंने कहा कि अपनी भाषाओं का प्रयोग पहले वरिष्ठ नागरिकों, राजनेताओं और अधिकारियों द्वारा किया जाना चाहिए ताकि उनका अनुकरण सामान्य जनता कर सके। इस संगोष्ठी की अध्यक्षता असम परिमंडल के मुख्य महा डाकपाल श्री ए॰के॰ चक्रवर्ती ने की। इसमें विशिष्ट अतिथि के रुप में प्रख्यात स्वतंत्रता सेनानी एवं हिंदी सेवी श्री रजनीकांत चक्रवर्ती और विशिष्ट वक्ता के रूप में श्री प्रभुलाल देवन्द, मुख्य राजभाषा अधिकारी, पूर्वोत्तर सीमा रेलवे, गुवाहाटी, श्री चन्द्रेश्वर, संपादक "सेंटिनल", हिन्दी दैनिक, गुवाहाटी, श्री नवारूण वर्मा, हिन्दी व असमिया लेखक गुवाहाटी, डॉ॰ चतुर्भुज सहाय, केन्द्र प्रभारी, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, गुवाहाटी, डॉ॰ ठाकुर दास, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, शिलॉंग ने भाग लिया। असम परिमंडल के अधिकारियों/कर्मचारियों के साथ-साथ गुवाहाटी स्थित सभी केन्द्रीय कार्यालयों/उपक्रमों/बैंकों के प्रतिनिधियों ने भी इसमें भाग लिया तथा आयोजन की सराहना की।

केरल डाक सर्किल राजभाषा सम्मेलन

डाक विभाग के आदेशानुसार ता॰ 19.1.94 को तिरूवनंतपुरम में परिमंडलस्तरीय राजभाषा सम्मेलन का आयोजन, केरल के मुख्य डाक महाध्यक्ष, श्री वी॰ राधाकृष्णन की अध्यक्षता में हुआ। डाक महाध्यक्ष श्री मनु व्यास ने सभी उपस्थितों का स्वागत किया।

केरल राज्य सरकार के सिंचाई एवं सांस्कृतिक विभाग के माननीय मंत्री श्री टी. एम जेकब ने सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए आशा प्रकट की कि इस प्रयत्न के फलस्वरूप सरकार की राजभाषा नीति अधिकाधिक सफल

निकलेगी। त्रिभाषा सूत्र को अमल करने में केरल राज्य की उपलब्धि का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि देश के दूसरे राज्यों को भी ऐसा करना चाहिए। देश की भावात्मक एकता को मजबूत बनाए रखने में आम भाषा की अनिवार्य आवश्यकता पर ज़ोर देते हुए उन्होंने चाहा कि सभी कर्मचारी, सरकारी नीति को निष्ठा से निभाने में पहल करें।

तदुपरांत श्री वी॰ राधाकृष्ण ने बताया कि इस प्रकार के सम्मेलनों के द्वारा राजभाषा की आवश्यकता संबंधी जागरण पैदा किया जा सकता है। हिंदी के प्रगामी प्रयोग संबंधी समस्याओं पर आमने-सामने चर्चा करके अपेक्षित समाधान ढूंढे जा सकते हैं। एक प्रकार से, यह राजभाषा अनुकूलन कार्यक्रम भी है। सभी उच्च अधिकारियों को राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी उत्तरदायित्व समझाकर, इस ओर आकृष्ट करने और इस संदर्भ में सचेत व सक्रिय बनाने के लिए उचित माध्यम के रूप में उन्होंने इसे मान लिया। सर्वप्रथम इस प्रकार का एक राजभाषा सम्मेलन करने का मौका देकर मान्यता देने के लिए, डाक विभाग के प्रति उन्होंने आभार व्यक्त किया।

डाक विभाग के राजभाषा निदेशक डॉ॰ गिरिवरधारी सिंह ने अपने मुख्य अभिभाषण में राजभाषा हिंदी की ऐतिहासिक भूमिका पेश करते हुए कहा कि स्वतंत्र भारत का प्रशासन, जनता का प्रशासन है और यह जनभाषा हिंदी में ही होना चाहिए। इस वास्ते हिंदी भाषा को पूरी तरह सक्षम बनाने की जिम्मेदारी भारत सरकार के सुपुर्द की गई। इस संवैधानिक उत्तरदायित्व को निभाने के लिए किए जा रहे विविध प्रयासों में से एक है — यह परिमंडल स्तरीय राजभाषा सम्मेलन। इससे उद्भूत जागरण के परिणाम स्वरूप डाक विभाग में हिंदी में पत्राचार लगातार बढ़ेगा — यही आशा-अभिलाषा है। इसमें सबका सहयोग चाहिए। यही सहयोग इस सम्मेलन की सफलता है। उन्होंने कहा कि हिंदी को काननून राजभाषा घोषित किए जाने या लिख रखे जाने मात्र से वास्तविक काम नहीं हो पायेगा। इसको कार्यरूप देने हेतु प्रशिक्षण दिया जा रहा है। प्रशिक्षितों से हिंदी में काम कराने प्रोत्साहन की योजनाएं हैं। इन सबको अमल करके हिंदी भाषा का प्रयोग करना-कराना सरकारी कर्तव्य है। हम सबको निष्ठा से इसे निभाना चाहिए। तभी हिंदी व्यावहारिक रूप से राजभाषा बनेगी। अंग्रेजपरस्त अधिकारियों को अपनी मनोवृत्ति में ज़बर्दस्त परिवर्तन कर लेना चाहिए।

डॉ॰ सिंह ने कहा कि केरल डाक सर्किल को दूसरे डाक सर्किल और अन्य कार्यालय, सरकारी कामकाज़ में राजभाषा प्रयोग के संबंध में अपने लिए उदाहरण के रूप में स्वीकार करेंगे।

सभी प्रतिभागियों ने राजभाषा कार्यान्वयन के मामले में अपनी-अपनी समस्याओं से अवगत कराया और चाहा कि:

1. सभी राजपत्रित एककों में एक-एक हिन्दी प्रभारी सहायक को तैनात करके, उसे हिन्दी कार्य करने पूर्ववत् पचास रूपये हिन्दी विशेष भत्ता दिया जाए।

2. ग क्षेत्र में स्थित हर राजपत्रित एकक में एक-एक हिन्दी टंकक और हिन्दी सहायक/अनुवादक का पद सृजन करके उसमें तत्काल भर्ती करने का अधिकार परिमंडल को प्रदान किया जाए।

3. हिन्दी में कार्यालयीन साहित्य के अनुवाद करने के लिए कर्मचारियों को देय मानदेय बढ़ा दिया जाए।

4. केंद्रीय हिन्दी अनुवाद ब्यूरो के अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रम को जरूरत के मुताबिक संशोधित कर दिया जाए। अनुपयोगी पाठ्यक्रम के अंशों को निकालकर, और अधिक उपयोग अंशों को जोड़कर उसे अद्यतन किया जाए।

5. केंद्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान द्वारा संचालित पत्राचार पाठ्यक्रम को प्रभावी बना दिया जाए। पाठ्य सामग्री नियमित अंतराल में भेजने की व्यवस्था सुनिश्चित की जाए। डाकियों को प्रबोध कोर्स में दाखिला लेने के लिए उन्हें सख्त निर्देश दिये जाए। किसी भी बहाने, आवेदन पत्र वापस करने की उनकी अवांछित प्रवृत्ति पर रोक लगा दी जाए।

6. पत्राचार द्वारा हिन्दी टंकण पाठ्यक्रम की अनुदेश सामग्री जो अब तक सिर्फ हिन्दी में भेजी जा रही है, सरल अंग्रेजी में भी भेजने की व्यवस्था तत्काल सुनिश्चत की जाए।

7. आशुलिपि प्रशिक्षण के बाद हिन्दी शिक्षण योजना द्वारा ली जा रही परीक्षा में न्यूनतम पास अंक के लिए नियत स्तर कम कर दिया जाए।

8. धारा 3(3) के अंतर्गत आनेवाले 14 प्रकार के विनिर्दिष्ट कागजातों का एक-एक या दो-दो नमूना द्विभाषी रूप में शामिल करते हुए एक संदर्शिका, डाक विभाग के कार्यालयों में प्रयुक्त होने वाली सामग्री के आधार पर तैयार कराकर महानिदेशालय के राजभाषा प्रभाग द्वारा सभी अधीनस्थ एककों को संदर्शन और अनुपालन के लिए सहायक साहित्य के रूप में उपलब्ध करा दिया जाए।

9. पुस्तक पढ़ने की आदत नहीं के बराबर होते जा रहे प्रसंग में (दृष्य-श्रव्य) आडियो-वीडियो कैसटों व वी॰सी॰पी॰यो॰ को उपलब्ध कराकर, कर्मचारियों का हिन्दी ज्ञान एवं कार्यालयी हिन्दी अभ्यास बढ़ाया जाए।

10.अधिकाधिक कार्य हिन्दी में करने-कराने वाले अधिकारियों को भी पुरस्कृत करने की योजना अमल की जाए।

राजभाषा विभाग के प्रतिनिधि एवं दक्षिणी क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय के उप निदेशक श्री डी॰ के॰ पणिक्कर ने समस्याओं का समाधान देते हुए चर्चा का समापन किया।

डाक महाध्यक्ष डॉ॰ के॰ बी॰ एच नायर द्वारा कृतज्ञता-ज्ञापन के साथ पहले दिन का सम्मेलन सानंद समाप्त हुआ।

दूसरे दिन दिनांक 20.1.94 को परिमंडल स्तरीय राजभाषा संगोष्ठी का उद्घाटन, विक्रम सारा भाई अंतरिक्ष केंद्र के निदेशक डा॰ एम॰सी॰ गुप्ता ने किया। डाक विभाग के निदेशक गिरिवरधारी सिंह ने संगोष्ठी की अध्यक्षता करते हुए उसका संचालन किया।

डा॰ गुप्ता ने राय दी कि राजभाषा हिन्दी का प्रयोग यानी एक्सपिरिमेंट किये बिना; उसका उपयोग यानी इस्तेमाल करना ही, राजभाषा कार्यान्वयन का सही रास्ता है। संगोष्ठी की सफलता की कामना करते हुए उन्होंने कहा कि इसके फलस्वरूप डाक कार्यालयों में हिन्दी का इस्तेमाल दिन व दिन बढ़ जाना चाहिए। सारा अंदरूनी पत्राचार, टिप्पण आदि नियमित व नेमी कार्य हिन्दी में करके सरकार की नीति को अमल करना हर एक कार्यालध्यक्ष राजभाषा नियम 12 का पूरा-पूरा पालन करने के लिए बाध्य हैं। इस दिशा में, उनकी राय में, यह सम्मेलन एक सफल प्रयास साबित होगा।

उसके बाद निम्नलिखित प्रतिभागियों ने अपने-अपने नाम के आगे दिये निबंध हिन्दी में प्रस्तुत किए।

1. राजभाषा नीति के कार्यान्वयन की समस्याओं का समाधान-मनु-व्यास, पी०एम०जी० कोच्ची।

2. प्रशासनिक कार्य में अनुवाद — ई०जे०पैली, प्रवर अधीक्षक, आर०एम०एस० कोच्ची।

3. राजभाषा नियम और अधिनियम — पी०वी० अच्चप्पन, प्रवर अधीक्षक, डाकघर, तृशर।

4. राजभाषा कार्यान्वयन में मेरा अनुभव — पी०एन०आर० कुरूप, अधीक्षक, डाकघर, तिरूवनंतपुरम।

5. राष्ट्रीय एकता बढ़ाने में राजभाषा की भूमिका — एन०एस० कुरूप, प्रवर अधीक्षक, आर०एम०एस० तिरूवनंतपुरम।

6. भारत सरकार की राजभाषा नीति — एम० विशालाक्षी, हिन्दी अधिकारी, केरल डाक परिमंडल।

इस अवसर का विशेष आमंत्रित अतिथिवक्ता डॉ० एन० ई० विश्वनाथ अय्यर भूतपूर्व हिन्दी विभागध्यक्ष कोच्चिन विश्वविद्यालय और दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की केरल शाखा की मंत्री श्रीमती के० विमला बाई ने केरल डाक परिमंडल में हो रहे हिन्दी कार्यान्वयन कार्य की सराहना करते हुए, सम्मेलन की सदुपयोगिता पर प्रकाश डाला। हिन्दी भाषा के प्रचार प्रसार व प्रयोग के क्षेत्र में स्वयं सेवी हिन्दी संस्थाओं के योगदान पर प्रकाश डालते हुए श्रीमती विमला बाई ने केरल डाक सर्किल को दूसरों के लिए इस वास्ते अनुमोदनीय ही नहीं, अपितु अनुकरणीय भी घोषित किया।

राजभाषा विभाग के प्रतिनिधि श्री डी० कृष्ण पणिक्कर, उप-निदेशक, क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय (दक्षिण) बेंगलूर ने संगोष्ठी में उठाये गये मुद्दों का उचित स्पष्टीकरण व समाधान देते हुए संगोष्ठी का समापन किया।

केरल डाक सर्किल के डाक सेवा निदेशक एवं मुख्य राजभाषा अधिकारी श्री उदय बालकृष्णन द्वारा कृतज्ञता के साथ यह सम्मेलन समाप्त हुआ।

परा उच्च निर्वात-विज्ञान आदि विषय पर वैज्ञानिक संगोष्ठी

देश में विकसित की जा रही प्रौद्योगिकी के सामयिक और समुचित स्तर पर निर्बाध रुप में हस्तांतरण हेतु प्रौद्योगिकी प्रलेखन एक ऐसा महत्वपूर्ण क्षेत्र है, जिस दिशा में अभी पर्याप्त प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। इस प्रयास के अभाव में, प्रयोगशालाओं में विकसित उन्नत प्रौद्योगिकी काफी समय तक उपयोगकर्ताओं और उद्योगों तक नहीं पहुंच पाती है फलस्वरुप कभी-कभी हमें यह अहसास होने लगता है कि देश प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अन्य देशों की अपेक्षा काफी पीछे है, जबकि वास्तविकता इसके विपरीत है।

प्रौद्योगिकी प्रलेखन के साथ ही साथ इसे उन्नत से समुन्नत व व्यावसायिक रुप से साध्य बनाने के लिए यह आवश्यक है कि विकसित प्रौद्योगिकी के आदान-प्रदान में अनुसंधानकर्ताओं और उपयोगकर्ताओं के बीच अच्छा समन्वय हो जिससे कि उसे अधिक सार्थक बनाया जा सके। उपरोक्त विचार "परा-उच्च निर्वात-विज्ञान, तकनीकी और अनुप्रयोग विषय पर आयोजित वैज्ञानिक संगोष्ठी के उद्घाटन के अवसर पर डॉ० दि० दे० भवालकर, निदेशक, केट ने व्यक्त किए।

श्री आई०एस०गजरा, प्रबंध निदेशक, गजरा बेविल गियर्स लि०, समारोह के मुख्त अतिथि थे।

डॉ० भवालकर ने केट में किए जाने वाले अनुसंधान और प्रौद्योगिकी विकास कार्यों का संक्षिप्त उल्लेख करते हुए बताया कि इस केन्द्र में ही विकसित प्रौद्योगिक के आधार पर गत वर्ष में ही एक उत्पादन इकाई स्थापित की गई है जिसमें तैयार उपस्करों के निर्माण से लगभग। करोड़ रुपए से अधिक मूल्य के उपस्कर यूरोपीय नाभिकीय अनुसंधान संस्था "सर्न" को प्रयोगिक प्रयोजनों के लिए भेजे जा रहे हैं। डॉ० भवालकर ने कहा कि इस देश में प्रौद्योगिकी का विकास हम भारतीय आवश्यकताओं के अनुरुप कर रहे हैं किन्तु निर्धारित दिशाओं में, हमारे प्रयत्न किसी से भी पीछे नहीं है, लेकिन इस बात की आवश्यकता है कि विकसित प्रौद्योगिकी को ग्रहण करने के लिए सक्षम संस्थाएं और उद्योग आगे आएं।

डॉ० भवालकर ने बताया कि बहुत ही न्यूनतम आवश्यकताओं के लिए मशीनों और उपस्करों का आयात कर, यहां सिंक्रोट्रॉन विकिरण स्त्रोत-इण्डस-1 निर्मित किया गया है जो उन्नत प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हमारी सफलता का प्रत्यक्ष उदाहरण है।

प्रमुख उद्योगपति श्री इंदर शान्ति स्वरुप गजरा ने प्रौद्योगिकी विषयक ज्ञान के व्यापक आदान-प्रदान की आवश्यकता पर बल दिया है और केट में परा-उच्च निर्वात के के क्षेत्र में भी उपलब्ध सेवाओं पर संतोष व्यक्त किया।

अतिथियों का स्वागत करते हुए केन्द्र के सहायक निदेशक (राजभाषा), श्री सुनील सरवाही ने कहा कि प्रौद्योगिकी और भाषा दोनों ही विज्ञान के विषय हैं। जिस प्रकार कठिन और अटपटे शब्द नहीं चलते और अपने आप चलन से बाहर हो जाते हैं उसी प्रकार नई प्रौद्योगिकी पुरानी प्रौद्योगिकी को चलन से बाहर होने के लिए मजबूर कर देती है।

श्री सत्यनारायण व्यास, वैज्ञानिक अधिकारी ने संगोष्ठी की भूमिका पर प्रकाश डाला और विषय के महत्व की चर्चा की।

गोष्ठी के तीन तकनीकी सत्रों में वरिष्ठ वैज्ञानिक सर्वश्री ए०एस० राजाराव, आ० जे० पटेल, एस०टी० भावसार, मोहन पंडियार (केट), श्री पी० बी० देसाई और डॉ० डी० आर० बोंगीरवार, (भावा परमाणु अनुसंधान केन्द्र) तथा श्री टी० एस० श्रीपति ने निर्वात संबंधी अलग-अलग विषयों पर व्याख्यान दिए। तकनीकी सत्र की अध्यक्षता लघु उद्योग संस्थान, इन्दौर के निदेशक श्री जे० एस० कूलार ने की।

गोष्ठी में, बड़ी संख्या में अधिकारियों तथा विज्ञान में रुचि रखने वाले लोगों ने भाग लिया। केन्द्र के द्वारा हिन्दी में वैज्ञानिक विषयों पर यह 4थी संगोष्ठी है। गत वर्ष लेसर के विविध उपयोग विषय पर एक संगोष्ठी आयोजित की गई थी।

बम्बई रिफाइनरी में हिन्दी उत्सव

बम्बई रिफाइनरी ने 9 मार्च, 1994 को हिन्दी उत्सव मनाया। इस अवसर पर हिन्दी हास्य-व्यंग्य कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता रिफाइनरी के मुख्य महाप्रबंधक (बी आर) श्री एस०के० मुखर्जी ने की। दीप प्रज्वलन करने के बाद उन्होंने कहा कि रिफाइनरी प्रचालन की जगह है यहां उत्पादन का लक्ष्य पूरा करने के लिए हमारे सभी कर्मचारी मेहनत करते हैं, साथ ही वे अन्य कला गुणों में भी कुशल हैं। समय-समय पर कार्यक्रम भी प्रस्तुत करते हैं और बाहर की प्रतियोगिताओं में भी पुरस्कार पाते हैं। रिफाइनरी में बातचीत तो हम हिन्दी में करते हैं, साथ ही पत्राचार, सुरक्षा संबंधी कामकाज आदि भी हिन्दी में करते हैं। सवाल माहौल पैदा करने का है जिस के लिए हिन्दी उत्सव असर पैदा करता है।

कवि सम्मेलन का संचालन श्री सुभाष काबरा ने किया। जिन कवियों को टीवी के पर्दे पर देखते हैं। उन्हें प्रत्यक्ष रूप से देखने के लिए हॉल पूरा भरा था। प्रकाश पपलु, खत्री, श्याम ज्वालामुखी, कुसुम जोशी तथा सुभाष काबरा की हास्य-व्यंग्य रचनाओं ने श्रोताओं का ध्यान समय के पाबंदी से हटाया। सबको बेसब्री से श्री शैल चतुर्वेदी जी की रचनाएं सुनने का इंतजार था। श्री शैल चतुर्वेदी ने समाज की विसंगतियों को मार्मिक रूप से छूकर सोचने के लिए बाध्य किया।

हिन्दी प्रयोग के लिए मानसिकता बदलना जरूरी

कलकत्ता में सम्पन्न दो दिवसीय अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन का उद्घाटन प० बंगाल के महामहिम राज्यपाल श्री के०वी० रघुनाथ रेड्डी ने किया और भारतीय भाषा परिषद के अध्यक्ष परमानंद चूड़ीवाल, निदेशक डॉ० बालशोरी रेड्डी, सांसद शंकरदयाल सिंह, **राजभाषा विभाग के संयुक्त सचिव** वेदस्वरूप व निदेशक (तकनीकी) बृजमोहन सिंह नेगी, हिंदुस्तान कागज निगम के अध्यक्ष बी०टी० श्रीधरन आदि अनेक विद्वानों और वरिष्ठ अधिकारियों ने संबोधित किया।

सम्मेलन में चार अलग-अलग चर्चा-सत्र आयोजित किए गए-(1) राजभाषा नीति के कार्यान्वयन में आने वाली व्यावहारिक समस्याएं (2) सामान्य समस्याओं के बारे में देश के नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के सचिवों की बैठक (3) राजभाषा हिंदी की प्रगति के मार्ग का रोड़ा; इलेक्ट्रानिक उपकरण और (4) हिंदी में उपलब्ध तकनीकी साहित्य। पहला चर्चा-सत्र इन्दौर नगर राजभाषा समिति के सचिव व कस्टम्स/सेन्ट्रल एक्साइज के सहायक निदेशक (राजभाषा) श्री राज केसरवानी की अध्यक्षता व संयोजन में सम्पन्न हुआ। अन्य सत्रों की अध्यक्षता क्रमशः गोवर्धन ठाकुर सचिव हैदराबाद, जगदीशनारायण राय संयोजक वाराणसी ने की। समापन सत्र के अतिथि सांसद श्री शंकरदयाल सिंह थे।

इस सम्मेलन में देशभर के लगभग 400 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सभी को राजभाषा हिंदी के प्रगामी प्रयोग को सुनिश्चित करने संबंधी पर्याप्त उपयोगी जानकारी दी गई।

सम्मेलन स्थल पर आयोजित राजभाषा प्रदर्शनी काफी रोचक, ज्ञानवर्द्धक और प्रभावी रही।

अंत में डॉ० बुद्धिनाथ मिश्र (कलकत्ता) के संयोजन और डॉ० मधुसूदन साहा (राउरकेला) के संचालन में कारगर अखिल भारतीय कवि सम्मेलन हुआ जिसमें सर्वश्री-छविनाथ मिश्र (कलकत्ता), राजेन्द्र राजन (सहारनपुर), राधा पाण्डेय (अयोध्या), सूंड फैजाबादी (आज़मगढ़), रेहाना नवाब (कलकत्ता), शिवकुमार अर्चन (रीवा), डॉ० शांति सुमन आदि ने सामयिक विषयों की मर्मस्पर्शी रचनाएं सुनाई।

कंप्यूटर के द्विलिपीय संचालन पर संगोष्ठी

दिनांक 22.2.94 को पटना में "कंप्यूटर के द्विलिपीय संचालन" विषय पर एक-दिवसीय संगोष्ठी एवं प्रदर्शनी का आयोजन राजभाषा विभाग के तकनीकी कक्ष द्वारा किया गया। इस संगोष्ठी एवं प्रदर्शनी के आयोजन का उद्देश्य पटना तथा उसके आस-पास के नगरों में स्थित प्रमुख केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों, सरकारी उपक्रमों, बैंकों आदि के अधिकारियों को कंप्यूटर पर अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी में भी कार्य करने के लिए उपलब्ध सुविधाओं के बारे में जानकारी देना तथा उन्हें हिन्दी में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करना था। इस संगोष्ठी में लगभग 100 प्रतिभागियों ने भाग लिया। प्रदर्शनी में मैसर्स लिपि डाटा सिस्टम, मैसर्स साफ्टवेयर रिसर्च ग्रुप तथा मैसर्स क्वार्क कंप्यूटर ने भाग लिया।

श्री दे० पार्थसारथी, मुख्य डाक महा-अध्यक्ष एवं अध्यक्ष न०रा०का०स० (कार्यालय), बिहार डाक परिमण्डल, पटना ने इस कार्यक्रम का मुख्य अतिथि के रूप में उद्घाटन किया तथा श्री ए०एन० गांधी, उप महाप्रबन्धक एवं अध्यक्ष, न०रा०का०स० (बैंक), बै० आफ इंडिया, जोनल आफिस, पटना द्वारा इस कार्यक्रम की अध्यक्षता की गई।

"दक्षिण-मध्य रेलवे के सिकंदराबाद स्थित मुख्यालय में दिनांक 21.12.93 को राजभाषा विभाग द्वारा "कंप्यूटरों के द्विलिपीय (हिंदी-अंग्रेजी) संचालन" विषय पर एक दिवसीय संगोष्ठी एवं प्रदर्शनी का आयोजन सम्पन्न हुआ।

श्री चन्द्रधर त्रिपाठी, सचिव, राजभाषा विभाग ने मुख्य अतिथि के रूप में इस आयोजन में भाग लिया तथा **श्री देवेन्द्र चरण मिश्र,** महाप्रबंधक दक्षिण-मध्य रेलवे ने संगोष्ठी की अध्यक्षता की। संगोष्ठी में कंप्यूटर के लिए द्विभाषी सुविधाओं की विशेषताओं और उनकी उपलब्धताओं के बारे में विस्तृत जानकारी के साथ-साथ इन सुविधाओं के प्रयोग को बढ़ावा देने के संदर्भ में विचार-विमर्श किया गया। इस कार्यक्रम में दक्षिण-मध्य क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के प्रमुख कार्यालयों से लगभग 120 कार्यालयों का प्रतिनिधित्व उच्च अधिकारियों ने किया।

इस अवसर पर कंप्यूटरों पर द्विलिपीय रूप में कार्य करने के लिए उपलब्ध सुविधाओं का प्रदर्शन भी आयोजित किया गया जिसमें आठ द्विभाषी साफ्टवेयर/हार्डवेयर विनिर्माताओं ने भाग लिया और अपने उत्पादों की विशेषताओं का प्रदर्शन किया।

मद्रास में भारतीय भाषाओं का मधुर मिलन

भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री आर० वेंकटरामन के रक्षाधिकार में, श्री ता०शी० कण्णन के द्वारा आयोजित भारतीय भाषाओं का मधुर मिलन को सफल बनाने हेतु सभी संभव सहयोग प्रदान किया गया। उल्लेखनीय है कि राजभाषा विभाग के सचिव महोदय-श्री चंद्रधर त्रिपाठी भी इस सम्मेलन में विशेष आमंत्रित की हैसियत से उपस्थित थे। राष्ट्रीय एकता की दिशा में यह एक उल्लेखनीय उपलब्धि है।

भिन्न-भिन्न भाषाओं के मूर्धन्य विद्वानों ने दोनों दिन की चर्चा-परिचर्चाओं में और संगोष्ठियों में भाग लिया।

उद्घाटन समारोहः संयुक्त बैठक

डा० जे०जी० कन्नप्पन
डा० ललिता कामेश्वरन
श्री त०शि०क० कण्णन
मान्य श्री आर वैंकटरामण जी पूर्व राष्ट्रपति
डा० एम०ए०एम० रामस्वामी
सम कुलपति अन्नामलै विश्वविद्यालय
डा० एम० अनन्तकृष्णन
उप कुलपति अन्ना विश्वविद्यालय
न्यायमूर्ति एम०एम० इस्माइल
श्री एम०एम०भट्ट
श्री गोविन्दराजन

हिंदी प्रचार की वर्तमान स्थितिः, समस्याएं-साहित्यिक गोष्ठी

डा० किशोर वासवानी
डा० द्वारकादास वेद
डा० महेशचन्द्र गुप्त
श्री विष्णुप्रभाकर
डा० देवराज
श्री गुरुचरणसिंह

हिंदी और भारतीय भाषाएं

डा० ऋषभदेव शर्मा
डा० गंगाप्रसाद विमल
डा० विश्वनाथ अय्यर
डा० मधुधवन
डा० एस० सुब्रमण्यम्
डा० बालशौरि रेड्डी
डा० प्रभाशंकर
डा० विजया

भारतीय भाषाओं के साहित्य का हिंदी अनुवाद

डा० पी०के० बालसुब्रमण्यम
डा० रामजीवन माल्या
डा० एम० शेषन
श्रीमती राधा रामकृष्णन
डा० एन० सुन्दरम्
डा० ए०वी० साई प्रसाद
डा० ऋषभ देव शर्मा

साहित्य का आदान-प्रदान

श्री गोविन्दराजन
डा० विद्यानिवास मिश्र
डा० मिथिलेश कुमारी
डा० रवीन्द्र कुमार सेठ
डा० रहमतुल्ला
डा० देवराज
सुश्री वसन्ता

राष्ट्रीय एकता

डा० मधुधवन
डा० महेशचन्द्र गुप्त
डा० शारदा रमणी
डा० इन्दरराज वैद
डा० रामाराव

इस अवसर पर तमिल के माने-जाने लेखक श्री के०ए०पी० विश्वनाथन् की वर्षगांठ भी धूमधाम से मनायी गयी। साथ ही तमिल भाषियों द्वारा हिन्दी में लिखी पुस्तकों का विमोचन भी किया गया।

भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री आर० वेंकटरामन जी की अध्यक्षता में संपन्न हुए, इस सम्मेलन में भारत सरकार के माननीय गृह मंत्री श्री एस०बी० चव्हाण ने देश की एकता और अखंडता की रक्षा के लिए सभी भारतीय भाषाओं को साधन बनाने का आह्वान किया।

श्री वेंकटरामन ने कहा कि किसी को भी मात्र अपनी भाषा पर घमंड नहीं करना चाहिए। सभी भाषाएं समान हैं। राजभाषा देश की एकता का सूत्र है। इसे संपन्न करने की आवश्यकता पर बल दिया।

राजभाषा विभाग के सचिव श्री चन्द्रधर त्रिपाठी ने अपने विशिष्ट भाषा में यह स्पष्ट किया कि हिन्दी भाषा का, किसी भी क्षेत्रीय भाषा से कोई विरोध नहीं। प्रत्येक भाषा का अपना-अपना अलग क्षेत्र है। अतः भाषाई भेद-भाव भूलकर, सभी भारतीयों को राजभाषा के प्रसार प्रचार के लिए कोशिश करनी चाहिए क्योंकि यह एक राष्ट्रीय कर्तव्य है।

समापन समारोह में श्री के०ए०पी० विश्वनाथन् ने उपस्थित महानुभावों से यह निवेदन किया कि आम-तौर पर तमिल भाषी हिन्दी विरोधी नहीं। उन्होंने इस गलत धारणा को बदलने के लिए प्रभावी कदम उठाने का सभी संबंधितों से अनुरोध किया। संक्षेप में सम्मेलन देश की भावात्मक एकता की दिशा में एक पहल है, एक सही कदम है।

बम्बई में कवि सम्मेलन

कविता केवल शब्द का पुलिंदा भर नहीं होती वह समय और मनुष्य के जीवन की हर सांस का जिन्दा दस्तावेज होती है। समाज के किसी भी कोने में, किसी भी हलके में आए तूफान या बंवडर में खुद को तन्मयता से जोड़कर देखना कविता की सबसे बड़ी पहचान होती है।

कविता और मनुष्य के बीच के कुछ ऐसे ही रिश्तों की खोज करने, उन्हें पहचानने और उन्हें जीने के लिए इंडियन आयल कार्पोरेशन लिमिटेड ने दिनांक 27 जनवरी 1994 को बांद्रा (पूर्व) स्थित कार्यालय में एक कवि सम्मेलन का आयोजन किया, जिसमें उसके अपने कर्मचारियों के अलावा भारी संख्या में आमंत्रित और अन्य सुधि श्रोता शामिल हुए। महाप्रबंधक (मानव संसाधन विकास) श्री सुबीर राहा कवि सम्मेलन के मुख्य अतिथि थे। उपस्थित कविगण और श्रोता समुदाय को संबोधित करते हुए श्री राहा ने कहा कि असरदार कविता संजीवनी की तरह होती है जो मरते हुए में भी नवजीवन का संचार कर देती है।

कवि सम्मेलन में राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कवियों सर्वश्री निदा फाजली, सच्चिदानंद सिंह समीर, राजेश रेड्डी, श्याम ज्वालामुखी, संजय मासूम, गीतेश गीत, पूरन पंकज, आलोक भट्टाचार्य ने भाग लिया। कवि सम्मेलन का संचालन श्रीमती सुदर्शना द्विवेदी ने किया। ये उन चंद कवियों में से हैं जिन्हें समाज के हर दर्द से सरोकार होता है और जो श्री निदा फाजली के शब्दों में "मैं रोया परदेस में भीगा माँ का प्यार, दुख ने दुख से बात की बिन चिट्ठी बिन तार" के रूप में प्रकट होता है। श्याम ज्वालामुखी अपने हास्य व्यंग्य से लोगों को गुदगुदाने में सफल रहे तो आलोक भट्टाचार्य की कविता ने लोगों को धर्म के नाम पर राजनेताओं व मुल्ला-पंडितों के पाखंड पर गहराई से सोचने पर मजबूर कर दिया।

हाल में गूँजती तालियों की गड़गड़ाहट कवि सम्मेलन की संप्रेषणीयता का जीवित बयान थी। कवि सम्मेलन का आरंभ श्री अनिल कासखेडीकर, प्रबंधक (हिंदी) के स्वागत उद्बोधन से हुआ और श्रीमती विभा रानी, सहायक प्रबंधक (हिंदी) के आभार प्रदर्शन के साथ कवि सम्मेलन का समापन इस उम्मीद के साथ हुआ कि इन्सानियत की नई भोर की लाली फैल रही हैं।

ठहाका सम्मेलन

दिनांक 16 मार्च 1994 को दिल्ली हिंदी साहित्य सम्मेलन 'स्नेही मण्डल' नोएडा द्वारा नोएडा क्लब 'ठहाका सम्मेलन' परम्परा गत लीक से हटकर सुसंस्कृत तरीके से मनाया गया। सर्वप्रथम अर्न्तराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त चित्रकार श्री सुमानव के रेखाचित्रों तथा नेहरू युवा केन्द्र के कलानिर्देशक श्री एस०एस० कुक्कल के तैलचित्रों की प्रदर्शनी का आम जनता के अवलोकनार्थ सुविख्यात मूर्तिकार राम सुतार द्वारा उद्घाटन किया गया। तदुपरान्त कार्यपालक अधिकारी श्री देवदत्त ने 'दीप-प्रज्जवलन' तथा सरस्वती के चित्र पर माल्यार्पण करके 'ठहाका-सम्मेलन' का शुभारम्भ किया। 'स्नेही मण्डल' की ओर से इस बार सर्वश्री रामसुतार (मूर्तिकार), सुमानव (चित्रकार) तथा एस०एस० कुक्कल (रंगकर्मी) को शाल, प्रशस्ति पत्र, स्मृति चिन्ह देकर 'नोएडा रत्न' से सम्मानित किया गया। स्नेही मण्डल द्वारा प्रकाशित वार्षिकी 'रचना रंगोली' तथा युवाकवि 'सूरजपाल' चौहान की काव्यकृति 'प्रयास' का लोकार्पण मुख्य अतिथि द्वारा किया गया।

मुख्य अतिथि देवदत्त ने कहा कि नोएडा महानगर सम्पूर्ण भारतवर्ष का एक लघु मानचित्र है। सम्मेलन का शुभारम्भ कानपुर से पधारी कवियित्री कुमारी अर्चना द्विवेदी की वाणी वन्दना से हुआ। उज्जैन से पधारे कवि कैलाश 'तरल' ने उग्रवाद को सख्ती से कुचलने की ओर संकेत करते हुए कहा—"मनचन्दा के घरवालों को दस लाख दे दिये भी तो क्या? पटियाला से पानीपत ताक का क्या घाव भर पाओगे।" दिल्ली से पधारे प्रतीम शर्मा ने चुटकियां ली— "इस जनतन्त्र में हक कौन देता है? हक मांगे नहीं छीने जाते हैं। हर कोने में हो रहे आन्दोलन तो यही बताते हैं।" मदनलाल वर्मा 'क्रान्त' ने देश की खोखली होती जा रही बुनियाद पर अपनी पीड़ा कुछ इस प्रकार व्यक्त की— "बड़े चिकने घड़े हैं, कुछ कहो अन्तर नहीं पड़ता। जो बेपेंदी के लोटे हैं उन्हें सागर नहीं बनना। सभी कोशिश में हैं कैसे बने मन्दिर का कंगूरा। कोई भी चाहता अब नीव का पत्थर नहीं बनना।"

युवा कवि सूरजपाल चौहान ने अंग्रेजी भाषा के चमत्कार पर करारा व्यंग्य किया— "मेरे भारत में अब परियों ने आना छोड़ दिया। और माताओं ने भी लोरी गाना छोड़ दिया। पिता को 'डैड' करके मार दिया जीते जी। और माता को बनाकर के 'ममी' छोड़ दिया।"

अन्त में कवि सम्मेलन के अध्यक्ष वयोवृद्ध साहित्यकार प्रतापगढ़ से पधारे कवि आद्या प्रसाद 'उन्मत' ने अपने नाम के अनुरूप उन्मत होकर अवधी में रेलगाड़ी चलायी तो ब्रज में 'रामराज्य' की महिमा समझायी।

नोएडा में कवि-सम्मेलन

दिनांक 10 अप्रैल 1994 को उत्तर प्रदेश समाज (दिल्ली) द्वारा नवसंवत्सर की पूर्व संध्या पर एक विराट कवि-सम्मेलन का आयोजन नोएडा क्लब के प्रांगण में किया गया। सर्वप्रथम हिंदी लेखिका श्रीमती आशारानी व्योरा ने सरस्वती के चित्र पर माल्यार्पण किया। उत्तर प्रदेश समाज के अध्यक्ष श्री राजमणि तिवारी ने समाज की नोएडा में स्थापना से लेकर उसका आवश्यकता, उद्देश्य, क्रिया-कलापों आदि पर विस्तार से प्रकाश डाला। श्रीमती नीरा यादव, नोएडा अध्यक्ष ने मुख्य अतिथि के रूप में भाग लिया। नोएडा प्रशासन के उप मुख्य कार्यपालिका अधिकारी श्री देवदत्त शर्मा ने समाज द्वारा प्रकाशित स्मारिका 'प्रगतिका' का विमोचन किया। इस कवि सम्मेलन में जहां श्रोताओं ने जी भरकर कवियों को सुना वहां एक बात उन्हें बहुत अखरी भी कि खुले आसमान के नीचे रात्रि ढाई बजे तक बैठे रहकर ठिठुरना भी पड़ा।

हजारों की संख्या में उपस्थित श्रोताओं के बीच श्री यशोदानंदन महेश्वरी, प्रोलल्लन प्रसाद, दिविक रमेश, राजेन्द्र सिंघल, टी०एन० गोविल, श्रीमती विमला बाथम, विश्व मोहन तिवारी, पी०पी० श्रीवास्तव रिंद, अशोक शर्मा, 'मधुप', कुंवर शिव प्रताप सिंह, बाबा कानपुरी आदि की उपस्थिति सराहनीय थी।

अहमदाबाद में अभिमुखीकरण कार्यक्रम

क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय, बम्बई द्वारा दिनांक 5-7 जनवरी, 1994 को अहमदाबाद में क्षेत्र के हिंदी अधिकारियों के अभिमुखीकरण कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस का संचालन क्षेत्रीय उपनिदेशक श्री कृष्ण नारायण मेहता द्वारा किया गया।

समापन सत्र में राजभाषा नीति के कार्यान्वयन में आने वाली कठिनाइयों/समस्याओं पर विचार विमर्श हुआ। गृह मंत्रालय के प्रतिनिधि **श्री कृष्ण चंद्र श्रीवास्तव उप सचिव (का०)** ने मदवार प्रत्येक मुद्दे को राजभाषा अधिनियम, राजभाषा नियम 1976 का सन्दर्भ देकर साफ किया। उन्होंने स्पष्ट किया कि संघ की राजभाषा नीति बहुत स्पष्ट है और सरकार हिंदी को सरकारी कामकाज की भाषा बनाने के लिए प्रेरणा, प्रोत्साहन और सदभावनापूर्वक प्रयासरत है।

हिन्दी अधिकारियों ने उनका काडर में स्टैगनेशन और प्रोन्नति न होने का सवाल उठाया। उनको यह स्पष्ट किया गया कि राजभाषा विभाग द्वारा संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों के परिप्रेक्ष्य में पहले ही निदेश जारी किए जा चुके हैं कि विभिन्न मंत्रालय/विभाग अपमे अधीनस्थ कार्यालयों का काडर रिव्यु करें और यदि सेवा का गठन संभव न हो तो प्रोन्नति के लिए पदों के सृजन सहित अन्य उपाय करें। यह भी बताया गया कि राजभाषा विभाग द्वारा विभिन्न कार्यालयों में न्यूनतम पदों के सृजन हेतु मानक परिचालित किए गए हैं। उनके आधार पर विभिन्न कार्यालय संबंधित विभागीय सचिव के अनुमोदन से पदों का सृजन कर सकते हैं। इस तारतम्य में प्रतिभागियों द्वारा सुझाव दिया गया कि राजभाषा विभाग द्वारा परिचालित न्यूनतम पदों के मानक संबंधी निदेश में केवल हिन्दी अधिकारियों/सहायक निदेशकों के लिए मानक निर्धारित किए गए हैं, उप निदेशक (राजभाषा) के लिए पद के सृजन हेतु कोई मानक निर्धारित नहीं किया गया है, अच्छा होगा कि राजभाषा विभाग इस संबंध में भी आदेश जारी करे। यह भी सुझाव दिया गया कि राजभाषा नीति के कार्यान्वयन को गति प्रदान करने के लिए कर्मचारियों और अधिकारियों की वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट में राजभाषा नीति के अनुपालन की उपलब्धि के बारे में एक प्रविष्टि जोड़ी जाए। इसके उत्तर में यह बताया गया कि यह मामला कार्मिक विभाग से परामर्श के लिए भेजा गया था और उस विभाग ने इस सुझाव को स्वीकार करना संभव नहीं पाया। एक अन्य सुझाव यह भी दिया गया कि राजभाषा विभाग जिस प्रकार से हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कराने के लिए प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ परीक्षाओं की व्यवस्था हिन्दी शिक्षण योजना के अंतर्गत करता है उसी प्रकार कर्मचारियों को हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त कराने के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था करे।

तीन दिवसीय कार्यक्रम के समापन सत्र में राजभाषा विभाग द्वारा पश्चिम क्षेत्र के कार्यालयों, बैंकों और उपक्रमों को राजभाषा नीति के कार्यान्वयन में उत्कृष्ट उपलब्धि के लिए पुरस्कृत किया गया। गुजरात राज्य स्तरीय बैंकर्स समिति के पुरस्कारों का वितरण भी सम्पन्न हुआ और अभिमुखीकरण कार्यक्रम के प्रतिभागियों को भी इस कार्यक्रम की अवधि में उत्कृष्ट कार्यनिष्पादन के लिए पुरस्कृत किया गया।

पत्र-पत्रिकाएं पुरस्कृत

शहरी विकास मंत्रालय में हिन्दी के प्रग्रामों प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए मंत्रालय, इसके सम्बद्ध/अधीनस्थ कार्यालयों तथा केन्द्र सरकार के उपक्रमों द्वारा हिन्दी में पत्रिका प्रकाशन का कार्य बड़ी अच्छी तरह से चल रहा है। अतः इन सभी पत्रिकाओं में उत्कृष्ट हिन्दी पत्रिका को पुरस्कार देने की एक नई योजना शहरी विकास मंत्रालय द्वारा चलाई गई, जिसमें माननीय शहरी विकास मंत्री ने सर्वश्रेष्ठ हिन्दी पत्रिका "राजभाषा प्रोत्साहन पत्रिका" को उत्कृष्ट प्रकाशन के लिए प्रथम पुरस्कार चल वैजयन्ती, भारत सरकार मुद्रणालय, नासिक को तथा इसी प्रकार हुडको द्वारा प्रकाशित उनकी हिन्दी पत्रिका 'आवास भारती' को ताम्र पत्र के रूप में द्वितीय पुरस्कार प्रदान किया गया।

महासागर विकास विभाग का निरीक्षण

संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उपसमिति ने 31 जनवरी, 1994 को महासागर विकास विभाग में हो रही हिन्दी की प्रगति का निरीक्षण किया। इस अवसर पर विभाग के सचिव डॉ० पी० रामा राव ने समिति की अगवानी की। सचिव महोदय ने विभाग में हो रही हिन्दी की प्रगति संबंधी कार्यों का विवरण समिति के सम्मुख रखा। समिति के सदस्यों ने विभाग में हो रही हिन्दी की उत्तरोत्तर प्रगति की सराहना की तथा इसे और बढ़ाने के लिए सुझाव दिये। इस अवसर पर विभाग द्वारा हिन्दी में अंटार्कटिक पर बनी एक लघु फिल्म भी समिति को दिखाई गयी। विभाग के सभी वरिष्ठ अधिकारी इस अवसर पर उपस्थित थे।

सवारी डिब्बा कारखाना, मद्रास

सांस्कृतिक कार्यक्रम

सवारी डिब्बा कारखाना के राजभाषा द्वारा सरकारी कामकाज में राजभाषा के प्रयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता रहा है। ऐसा ही एक "हास परिहास" एवं "प्रहसन" कार्यक्रम विगत 2 दिसंबर, 1993 को आयोजित किया गया। सर्व प्रथम पंजाबी भाषा-भाषी श्री करतार सिंह "सोखी" ने हिंदी में प्रार्थना प्रस्तुत की, वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी के स्वागत भाषण और मुख्य राजभाषा अधिकारी एवं मुख्य कर्मशाला इंजीनियर/शेल के अध्यक्षीय भाषण के बाद कार्यक्रम शुरू हुआ। इसमें लगभग 13 कर्मचारियों ने भाग लिया और छोटे-छोटे प्रहसन एवं चुटकलों से उपस्थित लोगों का मनोरंजन किया।

कार्यक्रम की समाप्ति पर महाप्रबंधक महोदय ने कार्यक्रम की सराहना करते हुए कहा कि हास्य की भाषा ही ऐसी भाषा है, जिसे विश्व के सभी लोग आसानी से समझते हैं। महाप्रबंधक महोदय ने हिंदी परीक्षाएं पास करने वाले कर्मचारियों को पुरस्कार भी प्रदान किए।

अंत में राजभाषा अधीक्षक श्रीमती इंदिरा श्रीनिवासन ने धन्यवाद समर्पण कर कार्यक्रम का समापन किया।

समिति समाचार

(क) केन्द्रीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति

केन्द्रीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 23वीं बैठक दिनांक 31 मार्च, 1994 को **श्री चंद्रधर त्रिपाठी, सचिव (राजभाषा)** की अध्यक्षता में विज्ञान भवन, नई दिल्ली में हुई। **मंत्रिमंडल सचिव श्री जफर सैफुल्लाह** ने मुख्य अतिथि के रूप में बैठक में उपस्थित रहें।

सचिव (राजभाषा) ने मंत्रिमंडल सचिव के प्रति आभार व्यक्त करते हुए उनका तथा अन्य सदस्यों का स्वागत किया। सचिव (राजभाषा) ने अपने सम्बोधन में कहा कि यह सम्भवतः पहला अवसर है जब कि राजभाषा कार्यान्वयन के संबंध में स्वयं मंत्रिमंडल सचिव महोदय ने शासन के उच्च अधिकारियों को सम्बोधित करने की आवश्यकता महसूस की।

सचिव राजभाषा ने उच्च अधिकारियों से व्यक्तिगत अनुरोध किया कि वे फाइलों पर हिन्दी में काम करने की स्वयं पहल करें। 50 के दशक में शायद सरकारी नीति यह थी कि प्रांजल, संस्कृतनिष्ठ हिन्दी का प्रयोग किया जाए, अब ऐसी कोई नीति नहीं है। अब नीति यह है कि सरल हिन्दी का प्रयोग किया जाए और किसी भी शब्द के लिए अटका न जाए। जहां हिन्दी का कोई शब्द नहीं सूझता वहां अंग्रेजी अथवा अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग करने में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए।

मंत्रिमडल सचिव ने अपने अभिभाषण में विश्वास व्यक्त किया कि बैठक के दौरान होने वाली बातचीत और फैसले नीति के प्रति निष्ठा और गम्भीरता से प्रेरित होंगे। उन्होंने आशा व्यक्त की कि आने वाले समय में सभी मंत्रालयों में राजभाषा संबंधी काम में सही मायने में बढ़ोत्तरी होगी। हमारा संविधान हिन्दी के भावी रूप को पूरी तरह से सकल भारतीय बनाने की बात करता है, इसके अनुसार अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों को हिन्दी भाषा का हिस्सा बनाना और हिन्दी को भारत की समूची संस्कृति का असली आइना बनाने का लक्ष्य है। हिन्दी केन्द्र सरकार की राजभाषा है इसलिए भारत सरकार का सारा कामकाज हिन्दी में ही किया जाना है। राजभाषा अधिनियम 1963 अंग्रेजी के इस्तेमाल को जारी रखने की सहूलियत देता है, लेकिन ऐसा इसलिए किया गया है ताकि हम हिन्दी में काम करने की काबलियत और सामर्थ्य हासिल कर सकें। सरकारी आदेश पालन करना हमारी नैतिक जिम्मेदारी है। हिन्दी के बारे में आदेश सरकारी नहीं, बल्कि वे राष्ट्रीय आदेश है। इस आदेश से हटकर कोई दूसरा आदेश नहीं हो सकता, इसका पालन करना हमारा कर्त्तव्य है। जल्द से जल्द हिन्दी में काम करना हमारा कर्त्तव्य है। हमारे देश में कई भाषाएं हैं, संस्कृतियां हैं, हमें उन सबकी इतनी ही इज्जत करनी है, जितनी राजभाषा की करते हैं।

राजभाषा हिन्दी में काम करने/न करने वाले कर्मचारियों/अधिकारियों की सेवा पंजिका में अनुकूल/प्रतिकूल प्रविष्टि किए जाने के संबंध में सदस्यों को वस्तुस्थिति से अवगत कराया गया, जिसके अनुसार कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग में इस तरह की प्रविष्टि किए जाने पर असहमति व्यक्त की है। कुछ सदस्यों ने विचार व्यक्त किया कि यदि प्रतिकूल प्रविष्टि देना संभव नहीं है तो अनुकूल प्रविष्टि देने पर विचार किया जाए। अध्यक्ष महोदय ने प्रत्युत्तर में कहा कि इसके लिए किसी विशेष कानूनी प्रावधान की आवश्यकता नहीं है। किसी भी क्षेत्र में अच्छे काम करने का उल्लेख ए०सी०आर० में प्रमाणपत्र इत्यादि के द्वारा किया जा सकता है तथापि सचिव (राजभाषा) ने कहा इस मामले को पुनः कार्मिक विभाग के साथ उठाया जायेगा।

उप सचिव (कार्यान्वयन) ने वर्ष 1992-93 के दौरान विभिन्न मंत्रालयों/विभागों में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग की समीक्षा करते हुए बताया कि राजभाषा अधिनियम, 1963 क धारा-3(3) जिसके अंतर्गत कुछ प्रपत्र हिन्दी और अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं में जारी किए जाने अपेक्षित हैं, का शतप्रतिशत अनुपालन अधिकतर मंत्रालयों/विभागों में किया गया है किन्तु 7 मंत्रालयों में इन प्रावधानों का आंशिक उल्लंघन भी हुआ है। राजभाषा नियम, 1976 के नियम-5 के अंतर्गत हिन्दी में प्राप्त पत्रों का उत्तर हिन्दी में दिया जाना अपेक्षित है किन्तु 13 मंत्रालयों में कुछ हिन्दी पत्रों के उत्तर अंग्रेजी में भी दिए गए। 'क' 'ख' क्षेत्रों में स्थित मंत्रालयों/विभागों से 'क' और 'ख' क्षेत्र की राज्य सरकारों इत्यादि को शतप्रतिशत हिन्दी में पत्राचार अपेक्षित है। केवल 6 मंत्रालयों/विभागों में 80 प्रतिशत लक्ष्य प्राप्त किया गया। 11 मंत्रालयों/विभागों में 25 प्रतिशत से कम पत्राचार हिन्दी में हुआ। लगभग सभी मंत्रालयों/ विभागों को राजभाषा नियम 10(4) के अंतर्गत अधिसूचित किया गया है। अतएव उनमें कुछ अनुभाग हिन्दी में शतप्रतिशत काम के लिए नियम 8(4) के अन्तर्गत विर्निदिष्ट किए जाने चाहिए। नियमानुसार कोड, मैनुअल, कार्यालय उपकरण द्विभाषी होने चाहिए। इस दिशा में भी बहुत से मंत्रालयों में अभी लक्ष्य प्राप्त नहीं किए गए। सभी मंत्रालयों आदि से तिमाही रिपोर्टें समय पर भेजने का और राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों को प्रत्येक तिमाही में आयोजित करने का भी अनुरोध किया गया। राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) और राजभाषा नियम 1976 के नियम-5 के पूर्ण पालन की ओर भी मंत्रालयों का ध्यान आकृष्ट किया गया।

उप सचिव (कार्यान्वयन) ने सूचित किया कि यह सुझाव भी आया था कि प्रत्येक मंत्रालय/विभाग में राजभाषा से संबंधित अधिकारी-निदेशक /उप निदेशक की सचिव (राजभाषा) के साथ वर्ष में कम से कम एक बैठक बुलाई जाये ताकि राजभाषा नीति के कार्याव्यन संबंध में विचार-विमर्श हो सके। राजभाषा विभाग द्वारा यह सुझाव मान लिया गया है। इन बैठकों की कार्यविधि आदि के विषय में राजभाषा विभाग में विचार किया जाएगा और संबंधित मंत्रालयों/विभागों को सूचित किया जाएगा।

चर्चा के दौरान यह सुझाव आया कि धारा 3(3) के अंतर्गत कुछ

कागजात जिनको किसी अनुभाग/एकक विशेष में ही परिचालित किया जाता है, उन्हें केवल हिन्दी में जारी किया जाए। सचिव (राजभाषा) ने आश्वासन दिया कि वे इसका परीक्षण करवायेंगे।

यह सुझाव दिया गया कि जिन सरकारी कर्मचारियों को हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान है, उन्हें हिन्दी में काम करने के लिए बाध्य किया जाए। अध्यक्ष महोदय ने कहा कि वे केन्द्रीय हिन्दी समिति की बैठक में इस मामले को निर्णय के लिए ले जाएंगे।

एक सुझाव यह भी था कि राजभाषा विभाग से विभिन्न मंत्रालयों/विभागों के सचिवों को पत्र भेजा जाए कि वरिष्ठ अधिकारी अपनी टिप्पणी हिन्दी में लिखें। सचिव (राजभाषा) ने इस सुझाव पर विचार करने का आश्वासन दिया।

मंत्रिमंडल सचिव द्वारा राजभाषा हिन्दी के सरकारी कामकाज में प्रगामी प्रयोग के विषय में सचिवों की बैठक करने का सुझाव आया। इस पर कोई निर्णय नहीं लिया गया।

यह भी सुझाव दिया गया कि मंत्रिमंडल सचिवालय द्वारा अपनी बैठकों के एजेण्डा/कार्यवृत्त हिन्दी में भी जारी किए जाएं। इस पर सहमति हुई।

यह प्रस्ताव भी किया गया कि उन अधिकारियों को जिनकी मातृभाषा हिन्दी है उनको केवल हिन्दी का आशुलिपिक दिया जाए।

कर्मचारी चयन आयोग द्वारा वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित अनुपात के अनुसार हिन्दी और अंग्रेजी के आशुलिपिकों और टंकक उपलब्ध कराने के विषय में भी लिखने का भी सुझाव दिया गया।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग के प्रतिनिधि द्वारा उस विभाग के अंतर्गत स्वायत्त संस्थानों में राजभाषा प्रावधानों को लागू करने के विषय में भी बात उठाई गई। सचिव (राजभाषा) ने कहा कि राजभाषा प्रावधान उन सभी संस्थाओं पर लागू होते है जो सरकारी सहायता/अनुदान प्राप्त करती हैं। इस संबंध में उन्होंने यह भी कहा कि वे विज्ञान और प्रौद्योगिक विभाग को स्पष्टीकरण भिजवा देंगे।

निर्वाचन आयोग में हिन्दी पदों को भरने के बारे में भी मामला उठाया गया। अध्यक्ष महोदय ने कहा कि इस पर अलग से विचार करना उचित होगा।

राजभाषा विभाग द्वारा राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के संबंध में जारी किए जाने वाले 1994-95 के वार्षिक कार्यक्रम को समय पर जारी करने पर भी जोर दिया गया।

हिन्दी, हिन्दी टंकण और हिन्दी आशुलिपि प्रशिक्षण

निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान ने इस विषय को प्रस्तुत करते हुए इस संबंध में अद्यतन स्थिति पर प्रकाश डाला। उत्तर पूर्वी राज्यों में हिन्दी प्रशिक्षण व्यवस्था में आने वाली कठिनाइयों पर विचार किया गया। यह सुझाव दिया गया कि राजभाषा विभाग की व्यवस्था के साथ ही साथ प्राईवेट संस्थानों को हिन्दी, हिन्दी टंकण व हिन्दी आशुलिपि के प्रशिक्षण के लिए कान्ट्रेक्ट दे दिया जाए। इस व्यवस्था से व्यय कम होगा। इस पर सदस्यों की सहमति नहीं थी।

चर्चा के दौरान यह भी बात उठाई गई कि टंकण व आशुलिपि के प्रशिक्षण के पश्चात् अभ्यास न होने के कारण बहुत से हिन्दी टंकक व आशुलिपिक हिन्दी टंकण व आशुलिपि भूल जाते हैं अतएव उनके लिए पुनश्चर्या कार्यक्रम आरम्भ किया जाए। सचिव (राजभाषा) ने आश्वासन दिया कि इस पर विचार किया जाएगा।

यह भी निर्णय लिया गया कि शिलांग में टंकण व आशुलिपि के प्रशिक्षण केन्द्र खोले जाएं।

यह भी निर्णय लिया गया कि हिन्दी में प्रशिक्षण की क्षमता बढ़ाने के लिए नौवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत एक प्लान स्कीम बनाई जाए।

हिन्दी में उपलब्ध आधुनिक तकनीकी सुविधाएं

निदेशक (तकनीकी) ने इस विषय में अद्यतन स्थिति की जानकारी दी। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि कम्प्यूटर, टाइपराइटर आदि द्विभाषी खरीद लिए जाएं। उन्होंने सूचित किया कि राजभाषा विभाग का तकनीकी कक्ष हिन्दी कम्प्यूटर प्रशिक्षण कार्यक्रम अपने व्यय से चलाता है। इस संबंध में कई स्थानों पर कम्प्यूटर गोष्ठियां आयोजित की गई थीं। टेलेक्स पर प्रशिक्षण की व्यवस्था दूरसंचार विभाग भी करता है। उन्होंने बताया कि कम्प्यूटर या टेलेक्स पर जो कर्मचारी हिन्दी में काम करते हैं उनको आशुलिपिकों, टंककों की भांति विशेष भत्ता देने का मामला वित्त मंत्रालय के पास विचाराधीन है। एक ऐसा कम्प्यूटर तैयार किया जाने का प्रयास किया जा रहा है जिस पर पूरी तरह से हिन्दी में काम किया जा सके। कम्प्यूटर द्वारा हिन्दी में प्रशिक्षण के लिए भी प्रयास हो रहा है। उन्होंने सभी मंत्रालयों/विभागों से कहा कि हिन्दी कम्प्यूटर में यदि कुछ कमी हो तो वह राजभाषा विभाग के तकनीकी कक्ष को बतायें जिससे कि वे निर्माता (मैन्युफैक्चर्स) को लिख सकें। एक प्रतिभागी ने यह भी सुझाव दिया कि एन आई सी को ऐसा आदेश जारी किया जाए कि वे द्विभाषा उपकरण ही उपलब्ध करायें। सचिव (राजभाषा) ने इस पर विचार करने का आश्वासन दिया।

कोडों, मैनुअलों आदि के हिन्दी अनुवाद और अनुवाद प्रशिक्षण

अध्यक्ष महोदय ने कहा कि यदि कोडों, मैनुअलों आदि के हिन्दी अनुवाद के विषय में कोई कठिनाई आ रही है तो राजभाषा विभाग को बताया जाए। सभी मंत्रालयों/विभागों में जिनमें रक्षा मंत्रालय भी शामिल है, में कोड, मैनुअलों का अनुवाद एक निश्चित समय सीमा के अंतर्गत होना है। उन्हें उस समय सीमा का ध्यान रखना चाहिए। इस संबंध में छूट देना संभव नहीं होगा। उसी समय सीमा में अपने कोड, मैनुअलों को हिन्दी में अनुवादित करवा लेना चाहिए। क्योंकि हम इस काम को जितनी बाद में करेंगें उतना ही व्यय अधिक होगा। अध्यक्ष महोदय ने यह भी बताया कि केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो की अनुवाद क्षमता अब बढ़ गई है। पहले केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो में अनुवाद कार्य में जितना समय लगता था अब उतना समय नहीं लगेगा। एक सदस्य ने प्राईवेट सेक्टर से भी अनुवाद कराने का सुझाव दिया।

हिन्दी सलाहकार समितियों का गठन एवं कार्यपद्धति

संयुक्त सचिव, कृषि एवं सहकारिता विभाग ने चर्चा के दौरान सूचित किया कि बैठक की कार्यसूची के अनुलग्नक में ग्रामीण विकास मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति के पुनर्गठन के विषय में परिलक्षित स्थिति सही नहीं दर्शाई गई है। उन्होंने सूचित किया कि कृषि एवं सहकारिता विभाग की हिन्दी सलाहकार समिति का पुनर्गठन भी किया जा चुका है तथा उसकी बैठक भी हो चुकी है। शायद इस मद को उचित रूप से उन्होंने ग्रहण नहीं किया क्योंकि प्रश्न ग्रामीण विकास मंत्रालय की हिन्दी

सलाहकार समिति के पुनर्गठन का था न कि कृषि एवं सहकारिता विभाग की हिन्दी सलाहकार समिति का। इस संबंध में स्पष्टीकरण जारी किया जाएगा।

यह निर्णय लिया गया कि उन सभी मंत्रालयों में जिनमें कैबिनेट स्तर के मंत्री अथवा स्वतंत्र प्रभार के राज्य मंत्री हैं, हिन्दी सलाहकार समितियों का गठन किया जाए। एक सदस्य द्वारा सुझाव दिया गया कि हिन्दी सलाहकार समितियों की वर्ष के दौरान होने वाली बैठकों की संख्या वर्ष में चार के स्थान पर दो कर दी जाए। इस सुझाव पर सहमति नहीं हुई। सचिव (राजभाषा) ने विभिन्न मंत्रालयों/ विभागों की हिन्दी सलाहकार समितियों की सिफारिशों पर अनुवर्ती कार्रवाई करने पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि इस संबंध में उनके द्वारा लिखे गए अर्धशासकीय पत्र के परिप्रेक्ष्य में केवल कुछ ही मंत्रालयों ने स्थिति बताई है, कुछ मंत्रालयों ने केवल यह लिखा है कि उनकी हिन्दी सलाहकार समितियों का पुनर्गठन किया गया है और अभी बैठक नहीं हुई है। उन्होंने यह नहीं बताया कि पिछली हिंदी सलाहकार समितियों की सिफारिशों पर अनुवर्ती कार्रवाई की क्या स्थिति है।

हिन्दी में नोटिंग व ड्राफ्टिंग करने पर दी जाने वाली नकद पुरस्कार की रुपए 500 की राशि को रुपए 1,000/-करने का प्रस्ताव भी आया। अध्यक्ष महोदय ने कहा कि इस पर राजभाषा विभाग में विचार किया जाएगा। उन्होंने यह भी कहा कि अन्य मंत्रालयों/विभागों द्वारा इस प्रकार की अन्य पुरस्कार योजनाएं स्वतंत्र रूप से चलाने पर कोई रोक नहीं है।

आशुलिपिकों और टंककों को हिन्दी आशुलिपि व हिन्दी टंकण का काम करने पर दिए जाने वाले क्रमशः रु० 60/- व रु० 40/-के प्रोत्साहन भत्ते की राशि को दुगुना करने के बारे में सुझाव दिया गया। इस पर सहमति हुई और फलस्वरूप विचार करने का निर्णय लिया गया।

एक सुझाव यह भी दिया गया कि हिन्दी पुरस्कारों की राशि को आयकर से मुक्त किया जाए। इस पर भी विचार किए जाने का निर्णय लिया गया।

राजभाषा विभाग द्वारा परिचालित हिन्दी पदों के सृजन के लिए मानकों में संशोधन विशेष रूप से सम्बद्ध/अधीनस्थ कार्यालयों में उप निदेशक के लिए भी मानक निर्धारित करने का सुझाव दिया गया। अध्यक्ष महोदय ने आश्वासन दिया कि इस पर विचार किया जाएगा।

पुरस्कार राशि बढ़ाये जाने आदि सभी वित्तीय मामलों पर गृह मंत्रालय के वित्तीय सलाहकार ने समुचित विचार का आश्वासन दिया। उन्होंने कहा कि सिद्धान्त रूप में उन मामलों में जिनमें राशियाँ कई वर्ष पूर्व निर्धारित की गयी थीं इस प्रकार की बढ़ोतरी वित्त विभाग को मान्य होंगी।

अध्यक्ष महोदय के धन्यवाद प्रस्ताव के साथ बैठक की कार्रवाई समाप्त हुई।

(ख) हिन्दी सलाहकार समिति की बैठक

संस्कृति विभाग

संस्कृति विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति की पहली बैठक कुमारी शैलजा, शिक्षा एवं संस्कृति उपमंत्री की अध्यक्षता में दिनांक 31 मार्च, 1994 को राष्ट्रीय विज्ञान केन्द्र, नई दिल्ली में हुई। बैठक में गैर-सरकारी सदस्य के रूप में श्रीमती वीणा वर्मा, संसद-सदस्य, श्री रामपूजन पटेल, संसद-सदस्य डा० वेदज्ञ आर्य, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सेन्ट स्टीफन्स कालेज, वेमूरि राधाकृष्ण मूर्ति अध्यक्ष, आंध्र प्रदेश हिन्दी अकादमी, श्री रामशरण जोशी, पत्रकार, श्री जफ़र नईम और श्रीमती स्नेहलता पाटिल उपस्थित थे। इसके अलावा संस्कृति विभाग तथा इसके संबंद्ध/अधीनस्थ कार्यालयों और स्वायत्त संगठनों के 33 अधिकारी भी शामिल थे।

अध्यक्ष महोदया ने सदस्यों का स्वागत करते हुए कहा कि संस्कृति विभाग का मूल उद्देश्य भारतीय संस्कृति का संरक्षण और प्रसार करना है तथा देश की विविध कलाओं, संगीत नाटक, नृत्य प्रदर्शन कलाओं, साहित्य और भारतीय भाषाओं के प्रचार प्रसार का काम भी विभाग देखता है। उन्होंने आगे कहा कि राजभाषा हिन्दी हमारे देश की अस्मिता की परिचायक है। हिन्दी भाषा में वस्तुतः भारतीय संस्कृति और उसकी आत्मा अभिव्यक्त होती है। सभी का आह्वान करते हुए उन्होंने कहा कि अपने दैनिक जीवन में और राजकाज में हमें हिन्दी का प्रयोग स्वेच्छा से करना चाहिए। उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया कि राजभाषा हिन्दी का इस्तेमाल करने की दिशा में उचित मानसिकता का वातावरण तैयार करने केलिए हमें उच्च स्तर पर स्वयं पहल करनी होगी।

बैठक में यह निर्णय लिया गया कि 'संस्कृति' पत्रिका को पुनः आरम्भ किया जाए तथा भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, भारतीय मानव विज्ञान सर्वेक्षण, राष्ट्रीय संग्रहालय और राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय के प्रकाशनों को अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी में भी प्रकाशित किया जाय। अन्य बातों के अलावा यह भी निर्णय लिया गया कि केन्द्रीय सचिवालय ग्रंथागार और संस्कृत विभाग के अधीन अन्य पुस्तकालयों में हिन्दी पुस्तकों की खरीद का प्रतिशत बढ़ाने के लिए ठोस उपाय किए जाएं।

(ग) नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की बैठकें

1. गुण्टूर

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 8वीं बैठक दिनांक 16-12-93 को आयकर आयुक्त कार्यालय, गुण्टूर के सभाभवन में डा० एम०वी०आर० प्रसाद, आयकर आयुक्त, गुण्टूर की अध्यक्षता में हुई।

समिति के अध्यक्ष डा० प्रसाद ने प्रतिभागियों का स्वागत करते हुए हिन्दी को सिर्फ सिद्धान्त में ही नहीं अपितु व्यवहार में भी राजभाषा के रूप में अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया।

श्री राजकुमार सैनी, निदेशक, राजभाषा विभाग तथा मुख्य अतिथि ने देश की सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी के इतिहास को बताया तथा निष्कर्ष निकाला कि हिन्दी प्रेम और अनुराग की भाषा है। हिन्दी का कार्यान्वयन केवल प्रेम और अनुराग से किया जा सकता है। इसके लिए धैर्य और दृढ़ता की आवश्यकता है। वे चाहते थे कि सदस्य अधिकारी अपनी इकाई में हिन्दी को राजभाषा के रूप में कार्यान्वित करने में आई समस्याओं को व्यक्त करें ताकि उनके लिए हल और सुझाव ढूंढे जा सकें।

चर्चा में भाग लेते हुए आन्ध्रा बैंक क्षेत्रीय कार्यालय के मुख्य प्रबंधक श्री एस० श्रीकृष्णा ने अपने कार्यालय में राजभाषा के कार्यान्वयन में हुई प्रगति की संक्षिप्त रिपोर्ट प्रस्तुत की तथा औरों को भी इसका अनुसरण करने के लिए प्रेरित किया।

लीड बैंक के प्रबंधक श्री राम मोहन राव ने श्रोताओं को इस तौर तरीके से अवगत कराया।

श्री ए०पी० जायसवाल, श्री पी० गंगाधर प्रसाद, सचिव, तम्बाकू बोर्ड; श्री सी०पी० रेड्डी, प्राचार्य, केन्द्रीय विद्यालय; श्री बानोजी राव, प्रबंधक, भारतीय कपास निगम, श्री भा० आर० राव, प्रबन्धक, बैंक आफ महाराष्ट्र; श्री भास्कर राव, अधीक्षक, सा०टी०ओ०; श्री जी०टी० श्री तिवासुलु, सहायक मंडल प्रबंधक, न्यू इन्डिया एस्युरेंस कम्पनी तथा श्री महबूब, युनाइटेड इन्डिया एस्युरेंस कम्पनी ने भी हिन्दी के प्रगामी प्रयोग से संबंधित वार्षिक कार्यक्रम की तुलना में अपने-अपने कार्यालय में हिन्दी के प्रयोग में हुई प्रगति के संबंध में विचार प्रकट किए।

श्री डी० के० पणिकर, उप निदेशक, राजभाषा विभाग (क्षेत्रीय कार्यालय (दक्षिण) ने चर्चा का समापन करते हुए कहा कि सभी केन्द्रीय सरकार के प्रतिष्ठानों के अध्यक्षों को इस बैठक में भाग लेना चाहिए क्योंकि यह एक उच्च स्तरीय समिति है। उन्होंने सुझाव दिया कि अध्यक्ष, न०रा० का० सं० को अपने प्रत्यक्ष नियंत्रण के अधीन सदस्य सचिव, न०रा०का०सं०, हिन्दी प्राध्यापक, हिन्दी शिक्षण योजना और अन्य संगठनों में से उनके द्वारा नामित एक हिन्दी अधिकारी को सम्मिलित कर एक कार्यबल (टास्क फोर्स) गठित करना चाहिए।

2. तिरूवनन्तपुरम (बैंक)

राजभाषा विभाग के सचिव के साथ समिति की विशेष बैठक

"हिन्दी के सन्दर्भ में मैं दो शब्दों का विशेष उल्लेख करुंगा और वे हैं, आस्था और दृष्टिकोण। हिन्दी तभी हमारे देश में अपना स्थान ग्रहण करेगी, जब हमारी उस भाषा के प्रति, राष्ट्रीय अस्मिता के प्रति आस्था हो। जहां तक दृष्टिकोण का प्रश्न है, हम हिन्दी का कार्यान्वयन इसलिए न करें कि सरकारी आदेशों का पालन करना है, बल्कि इसलिए कि यह हमारा राष्ट्रीय कर्तव्य है।"

ये उदगार थे, राजभाषा विभाग, के सचिव **श्री चन्द्रधर त्रिपाठी** के। वे तिरुवनंतपुरम के अपने दौरे के दौरान दिनांक 7 फरवरी 94 को केनरा बैंक, अंचल कार्यालय, तिरुवनंतपुरम में बैंकों की नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्यों को संबोधित कर रहे थे। हिन्दी के विकास में केरल के योगदान का विशेष उल्लेख करते हुए श्री त्रिपाठी ने केरल के महान संगीतकार महाराजा स्वाति तिरुनाल की रचनाओं पर प्रकाश डाला।

उन्होंने बताया कि हिन्दी हमारे लिए ऐसी कोई नई भाषा नहीं है, जो सिर्फ स्वाधीनता संग्राम के दौरान या फिर स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद प्रचलित होने लगी। यह भाषा तो सैकड़ों सालों से हमारी मिट्टी, हमारी विरासत और हमारी इतिहास से जुड़ी हुई है। हिन्दी का कार्यान्वयन करके हम अपनी पहचान मजबूत करने की कोशिश कर रहे हैं। श्री त्रिपाठी ने नगर स्थित बैंकों द्वारा राजभाषा के प्रयोग की दिशा में किए जा रहे प्रयासों पर संतोष व्यक्त किया और आशा प्रकट की कि यह समिति अपने लक्ष्य तक पहुंचने की ओर उन्मुख रहेगी।

इससे पूर्व श्री त्रिपाठी का स्वागत करते हुए नराकास (बैंक) के अध्यक्ष एवं केनरा बैंक के उप महाप्रबंधक श्री बी० आर० प्रभु ने बताया कि यह अवसर समिति के इतिहास में एक सुनहरा क्षण है उन्होंने आशा व्यक्त की कि श्री त्रिपाठीजी के मार्गदर्शन से समिति के प्रयासों में तेजी आएगी।

नराकास की उप समिति के अध्यक्ष एवं केनरा बैंक के मंडल प्रबंधक श्री डी वी राव ने श्री चन्द्रधर त्रिपाठी एवं उपस्थित अधिकारीगण के प्रति आभार प्रकट किया। श्री एम श्रीधरन, उप-निदेशक, (का) राजभाषा विभाग, भारत सरकार, श्री एल डिसोजा, उप मुख्य अधिकारी, भारतीय रिज़र्व बैंक, श्री वी राधाकृष्णन, मुख्य पोस्ट मास्टर जनरल एवं सरकारी कार्यालयों की टोलिक के अध्यक्ष उपस्थित थे।

लगभग सभी सदस्य बैंकों के वरिष्ठ कार्यपालक, प्रबंधकगण एवं राजभाषा अधिकारी इस बैठक में मौजूद थे।

3. कलकत्ता (उपक्रम)

नराकास (उपक्रम) कलकत्ता की पांचवीं बैठक राष्ट्रीय पुस्तकालय के सभागार में 17 दिसम्बर 93 को सम्पन्न हुई। **इसकी अध्यक्षता श्री बी०टी० श्रीधरन** ने की और मुख्य अतिथि भारत सरकार के **राजभाषा सचिव तथा हिन्दी सलाहकार श्री चन्द्रधर त्रिपाठी थे।** बैठक का संचालन हिन्दुस्तान का पर लि० में सहायक प्रबन्धक राजभाषा डा० बुद्धिनाथ मिश्र ने किया।

समिति के सदस्य सचिव डा० ओम प्रकाश शर्मा ने विगत बैठक में लिये गए निर्णयों पर की गई कार्रवाई के सम्बन्ध में समिति के समक्ष निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये:—

1. हिन्दी पदों के लिए शैक्षणिक योग्यता: देखने में आया है कि कनिष्ठ अनुवादक, वरिष्ठ अनुवादक और हिन्दी अधिकारी, तीनों के लिए सरकार ने शैक्षणिक योग्यता हिन्दी में स्नातकोत्तर तथा स्नातक स्तर पर अंग्रेजी सुनिश्चित की हुई है जबकि इनके वेतनमान तथा कार्य में काफी अन्तर है। इन तीनों के लिए कुछ-न-कुछ अन्तर रख कर उसका सख्ती से अनुपालन किया जाना अत्यन्त आवश्यक है।

2. हिन्दी पदों के लिए परीक्षा: अनेक संस्थानों में हिन्दी पदों की भर्ती के समय परीक्षा में अंग्रेजी और गणित के भी प्रश्न पत्र रखे जाते हैं जबकि अन्य सामान्य पदों के लिए ऐसा नहीं होता कि अंग्रेजी टाईपिस्ट के लिए हिन्दी या गणित में भी परीक्षा ली जाये। ऐसे भी उदाहरण सामने आये हैं जबकि सामान्य विज्ञापनों के द्वारा सामान्य रूप में ही पद न भरे जाने पर उन्हें पूर्व सैनिकों, अ०जा०/अ०ज०जा० आदि के लिए आरक्षित कर दिया जाता है। यह सभी हिन्दी पदों पर नियुक्तियां न करने के बहाने ढूंढने के लिए किया जाता है। आर्थिक कठिनाई भी एक कारण बताया जाता है। कुछ ऐसे निर्देश जारी किये जाने चाहिए कि इससे बचने की प्रवृत्ति से बचा जा सके।

इलैक्ट्रानिक उपकरण द्विभाषी खरीदने के सम्बन्ध में सरकार की सुस्पष्ट नीति है किन्तु इसका पालन प्रायः नहीं किया जाता और जहां इन्हें खरीदा जाता है वहां भी इनका उपयोग नहीं किया जाता केवल अंग्रेजी में इस्तेमाल होता रहता है जो इस आर्थिक तंगी में घोर अपराध है। इस सम्बन्ध में कार्यकारी दल से सुझाव आये हैं कि द्विभाषी उपकरणों की खरीद और इनके द्विभाषी प्रयोग को अंकेक्षण (आडिटेबिल) के अधीन लाया जाना चाहिए।

डाक तथा तार विभाग द्वारा द्विभाषी टेलैक्स तथा टेलीप्रिण्टर मशीनें उपलब्ध न कराने की अनेक शिकायतें आई हैं जबकि आदेश प्रस्तुत किये हुए चार वर्ष हो चुके हैं। डाक तथा तार विभाग को स्पष्ट निर्देश दिये जाने चाहिए कि वे आपूर्ति करें और उपलब्ध न हों तो निर्माताओं से अधिकाअधिक निर्माण हेतु कहा जाना चाहिए।

कई साहित्यिक मंचों, राजभाषा परिषद और केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद की ओर से सुझाव आया है कि संस्थानों से कलकत्ता स्थित लेखकों और प्रकाशनों की पुस्तकें खरीदने का अनुरोध किया जाना चाहिए।

श्री पौहारी शरण सिन्हा—इस्को ने कहा कि राजभाषा अधिनियम के उपबन्ध निजी कम्पनियों पर भी लागू किया जाने चाहिए। कम से कम उन कम्पनियों पर तो निश्चय ही जो सरकारी उपक्रमों से निजी उपक्रमों में बदल रही हैं क्योंकि जिस रफ्तार से प्राईवेटाइजेशन की चर्चा चल रही है सरकारी उपक्रम समाप्त कर दिये जायेंगे तो हिन्दी का जितना काम चल रहा है वह भी बन्द हो जायेगा।

इन सबका अत्यन्त सटीक उत्तर देते हुए **श्री चंन्द्रधर त्रिपाठी)** सचिव महोदय ने निम्नलिखित विचार प्रकट किए हैं:

1. समिति के सचिव ने जो सुझाव दिये हैं इनके सम्बन्ध में मैं आश्वासन तो नहीं दे सकता किन्तु इतना निश्चित है कि राजभाषा विभाग इन सब पर गम्भीरता से विचार करेगा और जो निर्णय लिया जायेगा उससे सभी को अवगत करा दिया जायेगा।

2. आप लोगों ने स्थानीय लेखकों प्रकाशकों की पुस्तकों की बिक्री में सहायता का मुद्दा बहुत ही अच्छा उठाया है। आप यहां की सूची हमारे पास भेजिये। राजभाषा विभाग सिद्धान्ततः इन्हें खरीद के लिए पूरे देश में परिचालित कर देगा।

3. निजीकरण के मामले में सम्पूर्ण सरकारी क्षेत्र को भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। हां, कुछ का प्राईवेटाईजेशन होना निश्चित है। हमारे देश की तो परिस्थितियां ही भिन्न हैं। पूर्ण रूप से तो सरकारी क्षेत्र इंग्लैण्ड में भी बन्द नहीं हुआ है। इसलिए आप लोगों को अनावश्यक रूप से डरने की आवश्यकता नहीं है।

4. निजीकरण होने पर भी इन्हीं नियमों के जारी रहने का सुझाव तो अच्छा है। मैं उचित मंच पर इसकी चर्चा करूंगा किन्तु किसी भी प्रकार की बाध्यता निजीकरण की नीति के विरुद्ध है। इसलिए मना पाना सरल नहीं होगा।

5. जिन लोगों ने हिन्दी की अनिवार्यता की बात की है। वे भूल जाते हैं कि यह हमारे कार्य क्षेत्र में नहीं आता। हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं की प्रगति से ही देश की प्रगति जुड़ी है। किन्तु उनकी प्रगति आस्था और मिशनरी भाव से ही सम्भव हैं।

एक बात मैं विशेष रूप से स्पष्ट करना चाहूंगा कि आप यदि हिन्दी लाना चाहते हैं तो क्लिष्ट भाषा से बगावत करनी होगी। सरल भाषा का इस्तेमाल करें। मुझे यह देख कर प्रसन्नता हुई कि आप इस समिति के स्तर पर जिस भाषा का इस्तेमाल कर रहे हैं वह अत्यन्त सरल और कामकाज की हिन्दी है। दरसल जो भाषा कठिन होगी वह तो हिन्दी हो ही नहीं सकती।

हिन्दी के साथ दो अति जुड़ी हुई हैं। इससे बोलने वाला या तो अपने आपको बहुत बड़ा मानता है अथवा अत्यन्त हीन। ये दोनों ही गलत हैं। स्थिति तो बीच की ही बेहतर है।

श्री बी०टी० श्रीधरन ने अपने अध्यक्षीय भाषण में स्वयम् तमिल भाषी होने के बावजूद हिन्दी सीखने पढ़ने के बारे में अपना ही उदाहरण प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि आरम्भ में मैं हिन्दी का कट्टर विरोधी था। किन्तु जब तमिलनाडु से बाहर आया तो हिन्दी की विशेषताओं, इसके फायदों का परिचय मिला। अध्ययन किया तो इसका लाभ मिलने लगा। फिर हिन्दी प्रेमी पत्नी मिली तो जैसे मुस्कराहट ही छा गयी।

आपको जान लेना चाहिए कि हिन्दी केवल एक भाषा ही नहीं वरन हमारी भावना है। सम्पूर्ण देश की भावनाओं का प्रश्न है यह। जब तमिलनाडु में हिन्दी पुस्तकें जलाई गई तो अधिक से अधिक 3% लोगों को खुशी हुई होगी, लेकिन 97% को बेहद दुःख हुआ। कुछ नेताओं ने हिन्दी की राजनीति करनी चाही तो भाषा पर राजनीति छा गई। परिणामतः हल कुछ नहीं निकला समस्याएं अधिक पैदा हो गई। फिर भी धीरे धीरे माहौल बदला है। अधिकांश समस्याएं अपने आप दूर हो गई।

आज कारण चाहे जो भी हो। लोगों के चाहे अनचाहे वो समय आ गया है जब सभी हिन्दी जानते हैं। जब जानते हैं तो प्रयोग भी करते हैं, आपसी बातचीत में, घर में, बाजार में। अब आवश्यकता है इसे सरकारी फाईलों में लाने की। अलमारियों में सजाने से हिन्दी नहीं आयेगी। इसे अब नोट शीटों पर उतारना होगा।

यदि मैं पचास वर्ष पहले सीखी हुई हिन्दी संस्कृत का लाभ आज उठा रहा हूं, जो सीखा था अब काम आ रहा है तो दूसरों के काम क्यों नहीं आयेगा।

मुझे विश्वास है कि राजभाषा विभाग के सहयोग से यह टालिक निरन्तर आगे बढ़ती रहेगी किन्तु आप सबके सहयोग की आवश्यकता है जो फिलहाल तो मिलता हुआ दिखाई नहीं दे रहा। एक डेढ़ माह पूर्व ही आज की बैठक की जानकारी थी फिर भी मुख्य अधिशासीगण नहीं आये। खैर, जो आये मैं आप सब का आभार मानता हूं, धन्यवाद देता हूं और भविष्य में बेहतर सहयोग की अपेक्षा भी करता हूं।

4. इंदौर

परस्पर सहयोग से हिंदी का व्यापक प्रसार: तंपी

"सरकार की हिंदी प्रयोग संबंधी सभी प्रोत्साहन योजनाओं को लागू करने, स्टाफ को प्रशिक्षित-प्रेरित करने से सरकारी कार्यालयों में हिंदी का प्रयोग बढ़ाने में मदद मिलेगी। सरकार की राजभाषा नीति को गंभीरता से लिया जाए, इसे लागू किया जाए। परस्पर सहयोग और प्रोत्साहन से हिंदी का व्यापक प्रसार होगा।"

ये उद्गार श्री गोविंदन शे. तंपी, समाहर्ता, केन्द्रीय उत्पाद शुल्क/सीमाशुल्क ने 13 दिसंबर 1994 को माणिकबाग पैलेस के सभाकक्ष में सम्पन्न नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति इन्दौर की 19वीं बैठक में अध्यक्ष पद से व्यक्त किए।

श्री तंपी ने कहा कि इन्दौर के केन्द्रीय कार्यालयों, निगमों, कंपनियों में इस समय लगभग अस्सी प्रतिशत कामकाज हिंदी में किया जा रहा है, कुछ संगठन तो अपना लगभग समस्त पत्राचार हिंदी में ही कर रहे हैं।

उन्होंने बतलाया कि इन्दौर के केन्द्रीय कार्यालयों में हिंदी प्रगति का मूल्यांकन बाहर के लोगों से करवाया जाएगा तथा इसके आधार पर उत्कृष्ट कार्य करने वाले कार्यालयों को अगली बैठक में राजभाषा पुरस्कार प्रदान किए जाएंगे।

इस समीक्षा बैठक में विशेष रूप से पधारे गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग नई दिल्ली के श्री आर.के.सेन उपनिदेशक (कार्यान्वयन) ने इन्दौर के केन्द्रीय कार्यालयों में उल्लेखनीय हिंदी कार्य के लिए सराहना की तथा विभिन्न संगठनों में हिंदी का प्रगामी प्रयोग सुनिश्चित करने के लिए अनेक उपाय सुझाए। श्री सेन ने अधिकारियों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर भी दिए।

बैठक में नगर राजभाषा समिति के सचिव श्री राज केसरवानी सहायक निदेशक (राजभाषा) ने समिति की गतिविधियों की जानकारी देते हुए, सभी केन्द्रीय कार्यालयों द्वारा किए गए हिंदी संबंधी कार्यों की मदवार विस्तृत समीक्षा की।

बैठक में सर्वश्री अनिल पंडित, कार्यपालक इंजीनियर, केंद्रीय लोक निर्माण विभाग एस.सी.गुप्ता, परिसमापक अधिकारी, घनश्यामसिंह परमार, अधीक्षक राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन, आदि ने अपने विचार व्यक्त किए।

5. जालन्धर

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति जालन्धर की बैठक, 20 जनवरी, 94 को आयकर कार्यालय के पुस्तकालय-हाल में आयकर आयुक्त, श्री एस.सी.ग्रोवर की अध्यक्षता में हुई। राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार की ओर से, श्री जसवंत सिंह, अनुसंधान अधिकारी उपस्थित हुए। जालन्धर नगर के केन्द्रीय सरकार के 55 कार्यालयों/बैंकों/निगमों/उपक्रमों आदि के अधिकारियों/कर्मचारियों ने इस बैठक में भाग लिया।

बैठक में मुख्य रूप से केन्द्रीय सरकार की राजभाषा नीति व उसके कार्यान्वयन पर चर्चा की गयी। "राजभाषा परामर्श" समिति द्वारा अपने कार्यकलापों का ब्यौरा दिया गया और सदस्य कार्यालयों से प्राप्त तिमाही प्रगति रिपोटों की समीक्षा की गयी। राजभाषा विभाग के प्रतिनिधि श्री सिंह ने सदस्यों की राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी समस्याओं को सुना और व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत किए।

अध्यक्ष महोदय ने सभी सदस्यों का बैठक में आने पर आभार प्रकट किया और राजभाषा नीति के कार्यान्वयन संबंधी लक्ष्यों को यथासम्भव पूरा करने का अनुरोध किया। बैठक में हिन्दी प्रशिक्षण/टाइपिंग/आशुलिपि कक्षाओं के आयोजन की सूचना दी गई।

6. अहमदाबाद

दिनांक 24.2.1994 को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक मुख्य आयकर आयुक्त श्री गोविन्द मिश्र की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। जिसमें अहमदाबाद स्थित केन्द्रीय कार्यालयों एवं उपक्रमों के विभागाध्यक्षों ने भाग लिया।

इस बैठक में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के सन्दर्भ में केन्द्रीय कार्यालयों एवं उपक्रमों द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट की समीक्षा की गई। बैठक में इस बात की सराहना की गई कि दूरदर्शन, आकाशवाणी, क्षेत्रीय पासपोर्ट कार्यालय, रेलवे भरती बोर्ड आदि कार्यालयों में हिन्दी पत्राचार बहुत अधिक मात्रा में किया जा रहा है। अन्य कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाने के दृष्टि से विविध योजनाएं स्वीकृत की गई और यह निर्णय लिया गया कि शीघ्र ही अहमदाबाद में वरिष्ठ अधिकारियों के लिए एक हिन्दी संगोष्ठी का आयोजन किया जाये। जिसमें हिन्दी के प्रयोग हेतु, और अधिक उपयोग एवं सहायक वातावरण का निर्माण हो सके।

बैठक को आकाशवाणी के केन्द्र निदेशक, श्री मदनमोहन मनुज, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के पुलिस अधीक्षक, श्री पी.पी.पांडे एवं एस.टी.सी. (गुज) लिमिटेड के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री आर. एन. माथुर ने भी सम्बोधित किया। अध्यक्ष पद से बोलते हुए, मुख्य आयकर आयुक्त श्री गोविंद मिश्र ने केन्द्रीय कार्यालयों एवं उपक्रमों में हिन्दी के समुचित वातावरण के निर्माण हेतु सभी अधिकारियों से अपेक्षा की। बैठक में राजभाषा की ओर से क्षेत्रीय कार्यालय के उप-निदेशक, श्री के.एन.मेहता ने भी भाग लिया। बैठक का संचालन श्री सोनेलाल कोल, उप-निदेशक, राजभाषा विभाग ने किया और श्री आर. एस. राजपूत, सचिव ने धन्यवाद दिया।

7. जयपुर (बैंक)

बैंक नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति जयपुर की 17वीं बैठक सोमवार 28 फरवरी, 94 के दिन संयोजक बैंक, बैंक आॅफ़ बड़ौदा के अंचल कार्यालय के सभाकक्ष में आयोजित की गई। इस अवसर पर भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय भोपाल के उप-निदेशक (कार्यान्वयन) श्री जी. आर. वधवा मुख्य अतिथि थे. भारतीय रिज़र्व बैंक के संयुक्त मुख्य अधिकारी श्री डी.पी. सारड़ा, राजस्थान सरकार के भाषा निदेशक श्री कलानाथ शास्त्री अतिथि के रूप में उपस्थित थे। बैठक की अध्यक्षता बैंक आॅफ बड़ौदा के महाप्रबंधक श्री रतन कपूर ने की।

सी.ए.आई.आई.बी. परीक्षा के लिए विशेष कक्षाएं चलाना:

समिति को यह सूचित किया गया कि भारतीय रिजर्व बैंक के संयुक्त मुख्य अधिकारी श्री डी.पी. सारड़ा द्वारा दिये गये सुझाव के अनुरूप नगर समिति के तत्वावधान में 1 अक्टूबर, 1993 से 15 नवम्बर, 1993 तक हिन्दी माध्यम से सी.ए.आई.आई. परीक्षा देने वाले बैंक कर्मियों के लिए विशेष कक्षाएं चलायी गयी। इस कार्यक्रम में पार्ट-1 एवं 11 के कुल 5 विषयों को शामिल किया गया था।

बैंक आॅफ़ बड़ौदा के प्रशिक्षण केन्द्र में आयोजित इन कक्षाओं में कुल 145 बैंक कर्मियों ने भाग लिया। इस पाठ्यक्रम को चलाने में मिली सफलता को देखते हुए जून, 1994 के दौरान होने वाली सी.ए.आई.आई बी. परीक्षा हेतु विशेष कक्षाएं लगाना प्रस्तावित हैं। इन कक्षाओं पर होने वाले खर्चों को ध्यान में रखते हुए प्रति विषय शुल्क की राशि 40 रू० से बढ़ाकर 50 रू० करने का प्रस्ताव हैं। इंडियन इंस्टीट्यूट आॅफ़ बैंकर्स की ओर से संचालित प्रशिक्षण कार्यक्रम में भी इतना ही शुल्क लिया जाता है जबकि उन्हें इंस्टीट्यूट के बम्बई कार्यालय से भी सहायता प्राप्त होती है।

दिसम्बर, 1993 को समाप्त तिमाही के लिए प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर विभिन्न बैंकों में हिन्दी प्रयोग की समीक्षा:

विभिन्न सदस्य बैंकों से प्राप्त तिमाही प्रगति रिपोर्ट के आधार पर अलग-अलग मदों के आंकड़े समिति के सम्मुख प्रस्तुत किये गये। समिति ने इस संबंध में निम्नलिखित बातों को नोट किया।

1. **धारा 3 (3) का अनुपालन** लक्ष्य-शतप्रतिशत

सभी बैंकों में इसका शतप्रतिशत अनुपालन हो रहा है।

2. **हिन्दी पत्राचार:** लक्ष्य; शतप्रतिशत

विभिन्न बैंकों में हिन्दी पत्राचार की स्थिति निम्नानुरूप है:

1. 90% एवं उससे अधिक पत्राचार करने वाले बैंक:

1.	भा.ल. विकास बैंक	99.67
2.	भा.औ. विकास बैंक	98
3.	पंजाब नेशनल बैंक	97
4.	यूनियन बैंक आॅफ़ इंडिया	96
5.	भारतीय स्टेट बैंक	95
6.	बैंक आॅफ इंडिया	94
7.	एस.बी.बी.जे	93
8.	इलाहाबाद बैंक	92
9.	स्टेट बैंक आॅफ हैदराबाद	93
10.	सेन्ट्रल बैंक आॅफ इंडिया	91
11.	बैंक आॅफ बड़ौदा	90
12.	ओरियण्टल बैंक आॅफ कामर्स	90

2. 81 से 89 प्रतिशत तक पत्राचार करने वाले बैंक:

1.	बैंकिंग सेवा भर्ती मण्डल	84

3. 61 से 80 प्रतिशत तक पत्राचार करने वाले बैंक:

1.	इंडियन ओवरसीज बैंक	80
2.	नाबार्ड	78
3.	देना बैंक	70
4.	केनरा बैंक	73

4. 40 प्रतिशत से 60 प्रतिशत तक पत्राचार करने वाले बैंक

1.	विजया बैंक	(58)
2.	स्टेट बैंक आॅफ इन्दौर	(5)
3.	आन्ध्रा बैंक	(58)
4.	सिंडीकेट बैंक	(42)
5.	कार्पोरेशन बैंक	(42)
6.	इंडियन बैंक	(40)

5. 40 प्रतिशत से कम पत्राचार करने वाले बैंक:

1.	यूको बैंक	34
2.	पंजाब एण्ड सिंध बैंक	31
3.	स्टेट बैंक आॅफ सौराष्ट्र	25

3. **हिन्दी में तार:** **लक्ष्य-65 प्रतिशत**

स्टेट बैंक आॅफ बीकानेर एवं जयपुर, आन्ध्रा बैंक, इंडियन ओवरसीज बैंक, केनरा बैंक, सेन्ट्रल बैंक आॅफ इंडिया, यूनियन बैंक आॅफ इंडिया, यूको बैंक, नाबार्ड, भारतीय औद्योगिक विकास बैंक, इंडियन बैंक, पंजाब नेशनल बैंक, स्टेट बैंक आॅफ इंडिया, इलाहाबाद बैंक, बैंकिंग सेवा भर्ती मण्डल, बैंक आॅफ बड़ौदा आदि ने निर्धारित लक्ष्य से अधिक तार हिन्दी में भेजे हैं। जबकि देना बैंक (10%) पंजाब एण्ड सिंध बैंक (44%) भारतीय लघु विकास बैंक (50%) तार हिन्दी में भेजे हैं। भारतीय औद्योगिक विकास बैंक ने 176 में से 121 टैलेक्स संदेश हिन्दी में भेजे हैं। आगामी बैठक से टैलेक्स से संबंधित आंकड़े भी सभी बैंकों से अलग से प्राप्त किये जायेंगे। स्टेट बैंक आॅफ हैदराबाद ने सभी 9 तार अंग्रेजी में भेजे हैं। सभी बैंकों से अनुरोध है कि निर्धारित लक्ष्य के अनुरूप तार आदि हिन्दी में ही भेजें।

राजभाषा विभाग के उपनिदेशक (कार्यान्वयन) श्री जी.आर.वधवा ने समिति को सम्बोधित करते हुए बताया कि अपनी सक्रिय गतिविधियों के कारण यह समिति कार्य निष्पादन की दृष्टि से एक सर्वोत्तम समिति बन गयी है।

श्री कलानाथ शास्त्री, भाषा निदेशक, राजस्थान सरकार ने कहा कि जयपुर में कार्यरत प्रत्येक बैंक का इसे सहयोग मिल रहा है। बैंकों में हो रहे हिन्दी प्रयोग का प्रभाव कई बार राज्य सरकार के कार्यालयों में भी देखने को मिलता है। इससे राज्य सरकार के कार्यालयों में भी हिन्दी प्रयोग के प्रति जागरूकता निर्माण करने में सहयोग मिल रहा है। बैंक आॅफ बड़ौदा, केन्द्रीय कार्यालय बम्बई के सहायक महा प्रबंधक डा० सोहन शर्मा ने बताया कि समिति ने पिछले निर्णयों के पालन में सक्रियता से कार्य

किया है एवं सभी सदस्य बैंकों के सहयोग से संगोष्ठियों के आयोजन, डेस्क प्रशिक्षण के आयोजन एवं स्मारिका प्रकाशन में एक आदर्श स्थान प्राप्त किया है। बैठक को सम्बोधित करते हुए श्री डी.पी. सारड़ा ने बताया कि यह समिति विभिन्न बैठकों में लिये गये ठोस निर्णयों को निर्धारित समय पर कार्यान्वित करने तथा सदस्य बैंकों के आपसी सहयोग से विभिन्न कार्यक्रमों को अच्छी प्रकार से करने के कारण सर्वोत्तम समिति बनी है।

8. इन्दौर (बैंक)

बैंक नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, इन्दौर की ग्यारहवीं बैठक बैंक आॅफ इंडिया, क्षेत्रीय कार्यालय, इन्दौर के सभाकक्ष में 20 जनवरी, 1994 को आयोजित की गई। बैंक आॅफ इंडिया, क्षेत्रीय प्रबंधक एवं समिति के कार्यवाहक अध्यक्ष, डा॰ जे॰बी॰ कुलकर्णी ने बैठक की अध्यक्षता की। बैठक में भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय (मध्य) के उप निदेशक, श्री जी॰आर॰ वधवा, भारत सरकार के प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित हुए।

विगत छःमाही के आंकड़ों की समीक्षा करते हुए श्री वधवा ने सर्वप्रथम बैंक नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति. इन्दौर के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष एवं सदस्य सचिव द्वारा किये जा रहे प्रयासों की प्रशंसा की।

टेलेक्स/टेलीप्रिंटर/कंप्यूटर

श्री वधवा ने इस बात पर हर्ष व्यक्त किया कि संयोजक बैंक, बैंक आॅफ इंडिया ने टेलेक्स आपरेटरों के लिए हिन्दी में टेलेक्स संदेश प्रेषण के लिए प्रशिक्षण कक्षाएं इससे आयोजित की गई। उन्होंने कहा कि सदस्य बैंकों में हिन्दी में टेलेक्स भेजने के कार्य में वृद्धि होगी।

सदस्य सचिव, श्री गुप्ता ने समिति को सूचित किया कि उन्होने दूरसंचार विभाग के टेलेक्स कार्य के प्रभारी अधिकारियों से व्यक्तिगत रूप से संपर्क किया है तथा उन्होंने इन्दौर के बैंकों में द्विभाषिक टेलेक्स लगवाने व इसके कुशलतापूर्वक कार्य करने की देख-रेख में प्राथमिकता देने का आवश्वासन दिया है। इस संबंध में स्टेट बैंक आॅफ सौराष्ट्र के प्रतिनिधि ने कहा कि उनके बैंक में टेलेक्स मशीन सिर्फ अंग्रेजी में है जिसे वे द्विभाषिक कराना चाहते हैं। श्री गुप्ता ने उनसे कहा कि वे दूरसंचार विभाग को आवेदन देकर उसकी प्रतिलिपि समिति को भेजें ताकि अनुवर्ती कार्रवाई की जा सके।

हिन्दी पत्राचार

यह देखा गया कि सिर्फ एक बैंक, स्टेट बैंक आ फ बीकानेर एंड जयपुर ने 100 प्रतिशत के लक्ष्य को प्राप्त किया है। शेष बैंकों में 5 बैंक लक्ष्य के करीब हैं जहां 90 से 98 प्रतिशत मूल पत्र हिन्दी में जारी किये गये हैं। अन्य बैंकों में लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बहुत अधिक प्रयास करना जरूरी है।

इस संबंध में श्री वधवा ने स्पष्ट किया कि "क" क्षेत्र के लिए हिन्दी पत्राचार का लक्ष्य 100 प्रतिशत है तथा जिन बैंकों में उपलब्धि लक्ष्य से कम है, वे इसके लिए अपने प्रयासों में तेजी लाएँ तथा मार्च, 1994 तक लक्ष्य को प्राप्त करें। जिस बैंक ने लक्ष्य को प्राप्त कर लिया है, वह इसे बनाए रखें।

इस संबंध में श्री रामरतन ने कहा कि आंध्रा बैंक (43%) तथा कारपोरेशन बैंक (42%) में स्थिति अत्यंत असंतोषजनक है तथा ये दोनों बैंक इस दिशा में विशेष तौर पर प्रयास करें।

हिन्दी में तार

तार के संबंध में श्री वधवा ने कहा कि बैंकों के लिए 65 प्रतिशत तार हिन्दी में जारी करने का लक्ष्य है। कुछ बैंकों की स्थिति इस सबंध में काफी अच्छी है, जबकि कुछ बैंकों में काफी सुधार अपेक्षित है। ऐसे बैंकों से जहां हिंदी तार का प्रतिशत 65 प्रतिशत से कम है, उन्होंने लक्ष्य प्राप्त करने का प्रयास करने का कहा।

आंतरिक कामकाज में हिन्दी

5 सदस्य बैंकों में 50 प्रतिशत से भी कम आंतरिक कामकाज हिन्दी में किया जा रहा है। इन बैंकों में शीघ्र सुधार जरूरी है।

अध्यक्ष, डा॰ जे॰बी॰ कुलकर्णी ने सदस्य बैंकों से आह्वान किया कि वे राजभाषा हिन्दी के प्रयोग के संबंध में सरकारी अपेक्षाओं को पूरा करें। उन्होंने 1988 में समिति के गठन से लेकर अब तक की प्रगति की प्रशंसा की तथा यह आशा व्यक्त की कि इन्दौर नगर के सभी बैंक एकजुट होकर राजभाषा प्रयोग के संबंध में जो थोड़ी बहुत कमियां रह गई हैं, उन्हें दूर कर लेंगे और इस प्रकार अन्य समितियों के समक्ष एक मिसाल कायम करेंगे।

बैठक के अंत 1992-93 के लिए चल वैजयंती प्रतियोगिता के पुरस्कार का वितरण उप निदेशक (का), श्री जी.आर. वधवा ने किया। राजभाषा हिन्दी में सर्वोत्कृष्ट कार्य के लिए सेण्ट्रल बैंक आॅफ इंडिया को चल-वैजयंती प्रदान की गई। साथ ही, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ स्थान प्राप्त करने पर क्रमशः यूनियन बैंक आॅफ इंडिया, बैंक आॅफ इंडिया एवं पंजाब नेशनल बैंक को प्रशंसा पत्र प्रदान किये गये।

9. बम्बई (के॰ का॰)

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (के॰का॰) बम्बई द्वारा नगर में स्थित सरकार के कार्यालयों में कार्यरत अधिकारियों के लिए क्षेत्रीय प्रत्यक्ष कर प्रशिक्षण संस्थान के प्रशिक्षण कक्ष में दिनांक 17 जनवरी, 1994 से 19 जनवरी, 1994 तक तीन दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला में मुख्यतः प्रशासन से जुड़े हुए अधिकारियों के साथ-साथ अन्य क्षेत्रों में कार्यरत अधिकारियों ने भाग लिया। कार्यशाला के उद्घाटन के अवसर पर न॰रा॰का॰स॰ के अध्यक्ष एवं मुख्य आयकर आयुक्त श्री एन॰ के॰ नायक और गृह मंत्रालय राजभाषा विभाग के क्षे॰ का॰ कार्यालय के उपनिदेशक श्री के॰ एन॰ मेहता ने माँ सरस्वती के चित्र को माला पहनाकर और दीप प्रज्वलित किया। उद्घाटन दिनांक 17 जनवरी, 94 को प्रातः 10.00 बजे हुआ। इस कार्यशाला में प्रशिक्षार्थी के रूप में 40 अधिकारियों ने भाग लिया। कार्यशाला का कुशल संचालन आयकर विभाग के सहायक निदेशक (राजभाषा) श्री रामचंद्र मिश्र ने किया।

चूँकि कार्यशाला मूलतः इस प्रयोजन से आयोजित की गई थी कि प्रशासन, लेखा स्थापना के कार्यों में हिन्दी का प्रयोग बढ़े, हिन्दी के प्रति सद्भावना बने, अधिकारियों को अपने कर्तव्य निर्वाह के साथ-साथ सरकार की राजभाषा नीति, नियम निर्देश आदि की विस्तृत जानकारी हो, उनमें अपनी भाषा के प्रति स्वाभिमान जाग्रत हो और अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी का अधिकतम प्रयोग हो सके, अतः मूलतः राजभाषा नीति, अधिनियम, नियम, निर्देश, वार्षिक कार्यक्रम प्रोत्साहन योजनाओं की विस्तृत

जानकारी देने का उद्देश्य रखा गया और प्रशासन स्थापना से जुड़े हुए विषयों में नोटिंग, ड्राफ्टिंग का व्यावहारिक अभ्यास, शब्दावली, वाक्यावली टिप्पणियों का अधिक अभ्यास कराया गया। संकाय सदस्य सर्वश्री के० एन० मेहता, उ०नि० (का०) (पश्चिम), रमेशचन्द्र मिश्र, व० रा० भा० अ० (पश्चिम रेलवे), का० प्र० मिश्र, व०रा०भा०अ० (मध्य रेलवे), प्रबोध कुमार गोविल, रा० भा० अ० (न० रा० का० स०) (बैंक) के सचिव, बैंक आ फ महाराष्ट्र, रा० च० लाल श्री वास्तव, उ० नि० (रा० भा०) आयकर, रा० च० मिश्र, मोहन जोशी, विनोद कुमार सक्सेना, स० नि० आयकर विभाग, श्रीमती निर्मला द्विवेदी, नौवहन (म०) (पश्चिम कमान) और श्रीमती शशि लाल प्रशिक्षण अधिकारी थे जिन्होंने कुशलतापूर्वक विभिन्न विषयों की जानकारी देकर सउदाहरण अभ्यास कराया। कार्यशाला तीन पूर्ण दिवसीय रही।

कार्यशाला का समापन 19 जनवरी, 1994 को समाहर्ता, के० उ० श्रीमती निशा चतुर्वेदी द्वारा उनके सम्बोधन से तथा प्रमाण पत्र प्रदान करते हुए। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि यदि राजभाषा हिन्दी अधिकारियों व कर्मचारियों के स्वाभिमान से जुड़ जाए तो सरकारी कामकाज में हिन्दी स्वतः ही प्रयुक्त होने लगेगी।

10. रतलाम

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, रतलाम की बैठक 19/10/93 को मण्डल रेल प्रबंधक कार्यालय रतलाम में संपन्न हुई। बैठक की अध्यक्षता श्री आर० एस० अत्रोले, अपर मंडल रेल प्रबंधक ने की। श्री अत्रोले ने सभी सदस्य कार्यालयों से अपना अधिक से अधिक कार्य हिंदी में करने की अपील की। उन्होंने कहा कि हिंदी भाषी क्षेत्र होने के कारण राजभाषा के प्रयोग की हमारी जिम्मेदारी और भी बढ़ जाती है। सभी कार्यालयों में हिंदी की प्रगति की जानकारी भी उन्होंने ली।

रतलाम मण्डल पर (डीजल शेड) प० रे० रतलाम एवं नीमच स्टेशन 14 सितंबर को हिंदी दिवस मनाया गया जिसमें निबंध प्रतियोगिता व काव्य गोष्ठी का आयोजन तथा विजेताओं को पुरस्कार वितरण भी किया गया। इसके अतिरिक्त अन्य सदस्य कार्यालयों यथा केंद्रीय उत्पाद शुल्क, भारतीय खाद्य निगम, केन्द्रीय विद्यालय, यूनाइटेड इंडिया इंश्यूरेंस, ओरिएंटल इंश्यूरेंस कं० लि०, नेशनल इंश्यूरेंस कं० लि०, यूनियन बैंक आ फ इंडिया भारतीय स्टेट बैंक, में हिंदी दिवस/हिंदी सप्ताह का आयोजन किया गया। जिसके अंतर्गत विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया तथा विजेता कर्मचारियों को पुरस्कार प्रदान किए गए। इन प्रतियोगिताओं में कर्मचारियों ने उत्साह से भाग लिया।

बैठक में गृह मंत्रालय के क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय, भोपाल के अनुसंधान अधिकारी श्री आर० जे० यादव भी उपस्थित थे। उन्होंने सदस्यों की शंकाओं का वहीं समाधान किया।

वर्ष 1992 के दौरान हिंदी में अधिकतम कार्य करने के लिए प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान पर आए कार्यालयों के अध्यक्षों को श्री आर० एस० अत्रौले ने शील्डें प्रदान कीं। प्रथम पुरस्कार यूनियन बैंक आफ इंडिया ने प्राप्त किया। दूसरा पुरस्कार केन्द्रीय विद्यालय को मिला तथा तीसरा पुरस्कार भारतीय स्टेट बैंक ने प्राप्त किया।

11. बोकारो

बोकारो नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 20वीं बैठक (वर्ष 1993-94 की दूसरी बैठक श्री बृजलाल क्षत्रिय, प्रबंध निदेशक, बोकारो स्टील प्लांट की अध्यक्षता में इस्पात भवन स्थित सम्मेलन कक्ष में दिनांक 12 जनवरी, 94 को हुई। बैठक के प्रारम्भ में श्री जीवन लाल नामदेव, सहायक महाप्रबंधक (संपर्क एवं प्रशासन) बोकारो स्टील प्लांट इस समिति के सदस्य सचिव ने अध्यक्ष सहित सदस्य संगठनों के समुपस्थित अधिकारियों/प्रतिनिधियों तथा भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, पूर्वी क्षेत्र कलकत्ता के सहायक निदेशक श्री इन्द्र नारायण झा का अभिनन्दन करते हुए स्वागत किया। अध्यक्ष महोदय ने इस बात पर संतोष व्यक्त करते हुए कहा कि विगत कुछ महीनों में हिन्दी कार्यान्वयन के रफ्तार में तेजी आई है। हमें तकनीकी क्षेत्र में हिन्दी प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए प्रयास करना चाहिए।

श्री इन्द्र नारायण झा, सहायक निदेशक (कार्यान्वयन), गृह मंत्रालय राजभाषा विभाग ने सभी उपस्थित प्रतिनिधियों/सदस्यों को अपने कार्यालय की ओर से नव वर्ष की मंगलकामनाएं देते हुए समिति के रचनात्मक उद्देश्यों पर प्रकाश डाला।

उन्होंने प्रबंध निदेशक बोकारो इस्पात संयंत्र की अध्यक्षता में बोकारो नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा किये जा रहे प्रयासों पर संतोष व्यक्त किया। उन्होंने कहा कि इस दिशा में काफी प्रयास किया जा रहा है। जल्द ही यह समिति देश के पूर्वी क्षेत्र में आदर्श और अग्रणी भूमिका निभायेगी। तदुपरान्त श्री दिनेश चन्द्र झा, सहायक प्रबंधक (हिन्दी) बोकारो स्टील प्लांट ने धन्यवाद ज्ञापन किया।

(घ) अन्य राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की बैठकें

भारी पानी संयंत्र-तूतीकोरिन (तमिलनाडु)

भारी पानी संयंत्र-तूतीकोरिन द्वारा राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन में की गई प्रगति की जानकारी देने के लिए तथा कार्यान्वयन संबंधी विचारों के आदान-प्रदान के लिए दिनांक 22.11.93 को श्री आर० बी० बुद्धिराजा, भा० प्र० से०, संयुक्त सचिव, भारत सरकार, परमाणु ऊर्जा विभाग, की अध्यक्षता में बैठक हुई। इस अवसर पर भारी पानी बोर्ड-बम्बई से श्री एस० पी० श्रीवास्तव, मुख्य अभियंता एवं अध्यक्ष और श्री एस राघवन, मुख्य प्रशासन अधिकारी व राजभाषा अधिकारी, राभाकास भी उपस्थित थे।

भारी पानी संयंत्र-तूतीकोरिन में हिन्दी शिक्षण योजना द्वारा हिन्दी कक्षाओं का आयोजनः समिति को यह सूचित किया गया कि भारी पानी संयंत्र औद्योगिक स्थापना के अन्तर्गत आता है। अतः हिन्दी शिक्षण योजना द्वारा भापासंतू में हिन्दी कक्षाएं आयोजित नहीं की जाती हैं। समिति ने यह मत प्रकट किया कि शिफ्ट में उपस्थित कर्मचारियों की संख्या को ध्यान में रखते हुए किसी योग्य अध्यापक या किसी योग्य कर्मचारी द्वारा हिन्दी कक्षाएं मानदेय के आधार पर चलाई जा सकती हैं। हिन्दी कक्षाएं चलाने के लिए होने वाले खर्च का ब्यौरेवार एक प्रस्ताव भापाबो, बम्बई को भेजा जाए।

हिन्दी पत्राचार पाठ्यक्रम के अन्तर्गत हिन्दी पढ़ने वाले कर्मचारियों को प्रोत्साहनः सदस्य-सचिव ने समिति को यह सूचित किया कि 26 अधिकारियों/कर्मचारियों को केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली द्वारा आयोजित हिन्दी पत्राचार पाठ्यक्रम हेतु नामित किया गया है।

मासिक एवं तिमाही प्रगति रिपोर्ट की समीक्षा एवं राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का अनुपलानः यह देखा गया है कि जुलाई-सितंबर, 93 तिमाही में तीन परिपत्र अंग्रेज़ी में परिचालित किये गये थे। सदस्य-सचिव ने यह स्पष्टीकरण दिया कि उल्लिखित परिपत्र अनुवाद हेतु हिन्दी अनुभाग में प्राप्त नहीं हुए थे। संयुक्त सचिव महोदय ने सूचित किया कि यदि किसी विशेष परिस्थिति में कोई दस्तावेज केवल अंग्रेज़ी में जारी करना हो तो संबंधित उच्च अधिकारियों की अनुमति प्राप्त किया जाना है। फिर भी, ऐसे दस्तावेजों का हिन्दी अनुवाद तीन दिन के अन्दर जारी किया जाना चाहिए।

हिन्दी कार्यशाला का आयोजनः सदस्य सचिव ने सूचित किया कि चार हिन्दी कार्यशालाओं के माध्यम से भारी पानी संयंत्र-तूतीकोरिन के 79 अधिकारियों/कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जा चुका है।

भापासं (तूतीकोरिन) हेतु हिन्दी पुस्तकों/शब्दावली/पत्रिकाओं की खरीदः सदस्य-सचिव ने सूचित किया कि फिलहाल 186 हिन्दी पुस्तकें/शब्दावली/हिन्दी शिक्षण संबंधी पुस्तकें भापासं-तू पुस्तकालय में उपलब्ध हैं। तीन हिन्दी पत्रिकाओं-"इंडिया टुडे", "धर्मयुग" और "गृहशोभा"- की प्रतियां पुस्तकालय में मंगाई जाती हैं।

रबड़ की मोहरों का द्विभाषीकरणः समिति को सूचित किया गया कि भापासंतू में 125 रबड़ की मोहरें द्विभाषिक रूप में तैयार की गई हैं और 12 रबड़ की मोहरे केवल हिन्दी में हैं।

नाम पट्ट के एक ही भाग में हिन्दी-अंग्रेजी में नाम लिखवानाः यह देखा गया है कि भापासंतू में प्रदर्शित नामपट्टों के एक भाग में हिन्दी और दूसरे भाग में अंग्रेजी नाम लिखा गया है। यह निर्णय लिया गया कि नामपट्ट के एक ही तरफ हिन्दी और अंग्रेजी भाषाओं में नाम लिखवाया जाए। भापासं-तू द्वारा राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के लिए किये गए कार्यों पर संयुक्त सचिव ने संतोष व्यक्त किया।

---

2. पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो नई दिल्ली।

केन्द्रीय न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, हैदराबाद की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक 17 फरवरी, 1994 को उक्त प्रयोगशाला के निदेशक डा० टी० आर० बग्गी की अध्यक्षता में हुई। इस बैठक में एक महत्वपूर्ण फैसला यह लिया गया कि **हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले अधिकारियों के लिए "हिट एंड रन" नामक कार्यशाला का आयोजन किया जाए, जिसमें वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों पर हिन्दी में व्याख्यान दिए जाएं।** इसके अतिरिक्त प्रयोगशाला के पुस्तकालय में रू० 3000/- की हिन्दी की पुस्तकों को भी खरीदने का निर्णय लिया गया।

सरकारी परीक्षक प्रश्नास्पद प्रलेख, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, शिमला की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक उप सरकारी परीक्षक श्री आर०के० जैन की अध्यक्षता में 21 जनवरी, 1994 को हुई। समिति ने इस बात पर जोर दिया कि राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा 3(3) के अंतर्गत शामिल सभी दस्तावेजों को अनिवार्य रूप से हिन्दी और अंग्रेजी में जारी किया जाए।

समिति ने यह भी पाया कि "क" और "ख" क्षेत्र को भेजे जाने वाले पत्रों की संख्या लक्ष्य से बहुत कम है। इसे बढ़ाने के लिए सभी स्तरों पर प्रयास किए जाएं।

बैठक में यह भी फैसला किया गया कि कार्यालय द्वारा भेजे जाने वाले सभी सप्लाई आर्डर केवल हिन्दी में भेजे जाएं।

3. भारत-तिब्बत सीमा पुलिस महानिदेशालय

महानिरीक्षक (मुख्यालय) की अध्यक्षता में निदेशालय, भारत-तिब्बत सीमा पुलिस की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठक 25 मार्च, 1994 को कान्फ्रेंस हॉल में आयोजित की गई थी। इस बैठक में गृह मंत्रालय के प्रतिनिधि श्री के० सी० कपूर, उपनिदेशक (राजभाषा) उपस्थित थे। श्री ओ० पी० एस० राठौर उपमहानिरीक्षक (प्रशासन) ने बैठक का आरंभ करने से पूर्व इस तिमाही के दौरान हिन्दी के क्षेत्र में प्राप्त उपलब्धियों का संक्षिप्त परिचय दिया। उपमहानिरीक्षक (प्रशासन) ने समिति को सूचित किया कि इस अवधि के दौरान 6 मैनुअल अंग्रेजी टाइपराइटरों के की-बोर्ड हिन्दी में बदल दिए जाने से न केवल हिन्दी टाइपराइटरों के मामले में मुख्यालय की स्थिति संतोषजनक हुई वरन् जिन अनुभागों में यह टाइपराइटर दिए गए हैं उनके कार्य में भी आशातीत प्रगति की संभावना बढ़ गई है। उपमहानिरीक्षक (प्रशासन) ने उन दो आशुलिपिकों (श्री आर० रामदास, ग्रेड-II/स्टेनों एवं श्री पी० आर० राणा० एस० आई०/स्टेनों) के हिन्दी आशुलिपि परीक्षा अच्छे अंकों में उत्तीर्ण करने पर प्रसन्नता व्यक्त की जिन्होंने हिन्दी आशुलिपि का एक वर्ष का प्रशिक्षण लिया है।

बैठक के दौरान विभिन्न मुद्दों पर हुई चर्चा पर अपने निर्णय देते हुए अध्यक्ष महोदय ने राजभाषा के क्षेत्र में भारत-तिब्बत सीमा पुलिस मुख्यालय की प्रगति के प्रति संतोष व्यक्त किया। अध्यक्ष महोदय ने सभी उपस्थित अधिकारियों से अनुरोध किया कि यद्यपि हिन्दी में कार्य करने की दिशा में आशातीत प्रगति हुई है तथापि अभी और अच्छे परिणामों के लिए अधिक परिश्रम की आवश्यकता है। जहां आंकड़ों की दिशा में वांछित सुधार हुआ है वहीं आंतरिक टिप्पणियों में अभी काफी कमी है। इस दिशा में ध्यान दिए बिना कोई अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं हो सकता है।

अध्यक्ष महोदय द्वारा 31.12.93 को समाप्त तिमाही की राजभाषा चल शील्ड हिन्दी में सर्वाधिक कार्य करने वाले अनुभाग दूरसंचार (कमाण्डेंट स्टाफ) श्री बी० बसाक, सहायक कमाण्डेंट (दूरसंचार) को प्रदान की गई। इसके अतिरिक्त एम०टी०, पशुचिकित्सक तथा चिकित्सा अनुभाग को इससे पूर्ववर्ती तिमाही में अच्छे कार्य करने के लिए महानिरीक्षक के द्वारा प्रशंसा पत्र वितरित किए गए। अहिन्दी भाषी होने के बावजूद भी श्री बसाक की हिन्दी में अधिक से अधिक कार्य की रूचि एवं लगन ने उनके स्टाफ को भी अपना संपूर्ण कार्य हिन्दी में ही करने को प्रेरित किया जिसके परिणामस्वरूप यह अनुभाग दूसरी बार 'विभागीय राजभाषा चलशील्ड' प्राप्त करने में सफल हुआ।

लीबिया में संस्कृत

इस्लामी देश लीबिया में राजधानी टिपोली के बाद समद्री तटीय बड़ा नगर टीबक्र है। आधी शती से 1 नवम्बर को यहां प्रतिवर्ष दूसरे विश्व-युद्ध के भारतीय सैनिकों के शहीदों की समूह-समाधि स्तूप पर श्रद्धांजली समारोह होता है। कुल 120 बलिदानियों में अब्दुल हादी, आर० बाबूराम, नवाब खान, अबुल रज़ाक, समेह सिंह, एन० चेल्लई, लाख सिंह, केप्टन डा० कौल आदि की संयुक्त वसीयत के अनुसार स्मारक पर संस्कृत में "ओउम भगवतै नमः" खुदा है, साथ में सभी शहीदों के नाम वसीयत में केवल संस्कृत में लिखने की इच्छा थी। किसी भी इतर भाषा के प्रयोग का निषेध, जिससे कि उनकी मातृभूमि की महानता तथा अस्तित्व का विश्व को परिचय हो। शहीदों के सम्बन्धी तथा इतर श्रद्धालु प्रतिवर्ष अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हुए, उन देश-भक्तों का स्मरण करते हैं। वसीयत में यह भी कहा गया कि स्मारक के निर्माण और सुरक्षा में भारतीय मर्यादाओं का पूर्ण सम्मान रखा जाए। लीबिया सरकार प्रतिवर्ष श्रद्धा-पर्व पर समुचित प्रबन्ध करती है। शहीद सैनिकों का सामूहिक दाह-संस्कार कर यह स्मारक बनाया गया।

अंग्रेजी मात्र 0.54 प्रतिशत की मातृभाषा

10 मार्च, 1994 के दैनिक जागरण में छपे समाचार के अनुसार राज्यसभा में एक प्रश्न के उत्तर में गृह राज्यमंत्री श्री पी० एम० सईद ने सूचित किया कि 1981 की जनगणना के अनुसार भारत में मात्र 0.54 प्रतिशत लोगों की मातृभाषा अंग्रेजी है। 1991 की जनगणना के आंकड़े अभी तैयार किए जा रहे हैं।

उपरोक्त से पाठक स्वयं विचार करें कि अंग्रेजी का शिक्षा और प्रशासन में प्रयोग का कहां तक औचित्य है।

समस्त फाइलें हिन्दी में ही प्रस्तुत की जाएं

संयोजक, राजभाषा कार्य, केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद ने राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री भैरोसिंह शेखावत को हिन्दी के प्रयोग के लिए कुछ सुझाव लिख कर भेजे थे। उत्तर में राजस्थान सरकार के भाषा विभाग के निदेशक ने अपने 5 मार्च, 1994 के पत्र सं०-3(14) II--भा०वि०पर्व०-1(93/615 द्वारा सूचित किया कि परिषद के सुझाव हिन्दी के पूर्ण प्रयोग की दिशा में अत्यन्त उपयोगी हैं। राजस्थान स्थित स्वायत्तशासी संस्थाओं में भी हिन्दी का प्रयोग हो, उसके प्रयत्न किए जा रहे हैं। माननीय मुख्यमंत्री जी ने समस्त शासन सचिवों को भी निदेश दिए हैं कि उनके पास प्रस्तुत होने वाली समस्त फाइलें हिन्दी में ही प्रस्तुत की जाएं।

'कन्ट्रेक्ट ब्रिज' खेल पर हिंदी पुस्तक

राष्ट्रभाषा हिन्दी में कन्टरेक्ट ब्रिज के खेल पर श्री चतुर्वेदी नारायण बाजपेई, सी-371, इंदिरा नगर, लखनऊ द्वारा एक पुस्तक 'एक आदर्श खेल-कन्ट्रेक्ट ब्रिज' लिखी गई है। यह पुस्तक 10-12 भागों में प्रकाशित होगी। प्रत्येक भाग का मूल्य 30 रुपये होगा।

इस खेल को वैज्ञानिक ढंग से सीखने के इच्छुक इस पुस्तक से लाभान्वित होंगे।

समाचार दर्शन

सैण्ट्रल इस्टिट्यूट ऑफ फिशरीज़ नाटिकल एण्ड इंजीनियरिंग ट्रेनिंग कोची की प्रवेश परीक्षा में हिन्दी का विकल्प हुआ

दैनिक जागरण के 11 मार्च, 1994 के अंक में छपे एक समाचार के अनुसार उक्त संस्थान के:—

(1) मेट फिशिंग वेसल कोर्स (एम० एफ० बी० सी०), तथा

(2) इंजिन ड्राइवर फिशिंग वेसल कोर्स (ई० डी० एफ० वी० सी०)

में प्रवेश परीक्षा के लिए ली जाने वाली परीक्षा में हिन्दी का विकल्प दे दिया गया है।

अनुरोध है कि इसी प्रकार की अन्य तकनीकी संस्थानों की प्रवेश परीक्षाओं में भी हिन्दी के विकल्प के लिए प्रयत्न किए जाएं।

हिन्दी माध्यम से एम० डी०

डॉ० मनोहर भण्डारी ने अपने स्नातकोत्तर अध्ययन के तहत (एम० डी०-शरीर क्रिया विज्ञान) प्रस्तुत किए जाने वाले "लघु शोध प्रबन्ध" को हिन्दी में लिखा था और एम० डी० की उपाधि प्राप्त की थी। प्रसन्नता की बात यह भी है कि इनकी शोध निर्देशक डॉ (श्रीमती) एस० बोस हिन्दीतर भाषी थीं। डॉ० भण्डारी ने खिलाडियों में होने वाली रक्ताल्पता पर शोध किया है और शोध-पत्र हिन्दी में ही प्रस्तुत किया है। डॉ० भण्डारी पिछले 6-7 सालों से चिकित्सा विज्ञान पर देश की हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं में लिखते रहते हैं।

विश्वास है कि अन्य सभी तकनीकी विषयों के शोधकर्ता उनसे प्रेरणा लेंगे।

हिन्दी के लिए पैसा ठुकराया

राहुल सांकृत्यायन जी राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी को प्रतिष्ठापूर्ण स्थान दिलाने के लिए सदैव सक्रिय रहे। कई बार व्यक्तिगत हानि उठाकर भी उन्होंने व्यवस्था का कारगर विरोध किया। कम्युनिस्ट पार्टी के वे नेता थे। पर हिन्दी के सम्बन्धों में उससे मतभेद के कारण उन्होंने पार्टी की कड़ी आलोचना की। उन दिनों ऑल इंडिया रेडियो के कान्ट्रेक्ट फार्म केवल अंग्रेजी में ही बनते थे। राहुल जी ने प्रतिज्ञा की कि जब तक कान्ट्रेक्ट फार्म हिन्दी में नहीं बनेंगे तब तक रेडियो कार्यक्रमों में भाग नहीं लेंगे। ऑल इंडिया रेडियो से बुलावे आते रहे और राहुल जी अपना विरोध दर्ज कराते रहे। वहां गए ही नहीं। यही वजह है आज आकाशवाणी के पास उनकी ध्वनि का कोई रिकार्ड नहीं है, हालांकि लेनिनग्राड विश्वविद्यालय के इंडो-तिब्बती विभाग में कई भारतीय भाषाओं के शुद्ध पाठों में उनकी ध्वनि रिकार्ड आज भी मौजूद हैं।

(गुणाकर मुले रचित स्वंभू महापंडित से साभार)

हिन्दी कार्यान्वयन निर्देशिका का विमोचन

राष्ट्रीय विमानपत्तन प्राधिकरण, क्षेत्रीय कार्यालय मद्रास के हिन्दी अनुभाग द्वारा राजभाषा हिन्दी कार्यान्वयन निर्देशिका तैयार की गई है। इस निर्देशिका का विमोचन, राष्ट्रीय विमानपत्तन प्राधिकरण के माननीय सदस्य (कार्मिक एवं प्रशासन) श्री बी० के० मिश्र महोदय द्वारा दि० 17.11.93 को तिरुवनन्तपुरम हवाईअड्डा कार्यालय में किया गया।

पुस्तक का विमोचन राष्ट्रीय विमानपत्तन प्राधिकरण मुख्यालय के उप निदेशक (राजभाषा) श्री एम० आर० धस्माना के सक्षम मार्गदर्शन में संपन्न हुआ। इस अवसर पर भारत अन्तर्राष्ट्रीय विमानपत्तन प्राधिकरण तिरुवनन्तपुरम हवाई अड्डा के एयरपोर्ट निदेशक तथा राष्ट्रीय विमानपत्तन प्राधिकरण तिरुवनन्तपुरम हवाईअड्डा के निदेशक विमानपत्तन और अन्य वरिष्ठ अधिकारी एवं कर्मचारी उपस्थित थे। नागर विमानन एवं पर्यटन मंत्रालय के उपनिदेशक (राजभाषा) श्री रघुनाथ सहाय की उपस्थिति निर्देशिका विमोचन समारोह की विशेष उपलब्धि थी।

दि ओरिएण्टल इंश्योरेंस कम्पनी लि० द्वारा हिन्दी माह का आयोजन

दि ओरिएण्टल इंश्योरेंस कम्पनी लि० द्वारा हिन्दी कार्यान्वयन के कार्य को गति प्रदान करने के लिए हिन्दी माह का आयोजन किया गया। इस दौरान सभी कार्मिकों को अपना अधिकाधिक कार्य हिन्दी में करने के लिए अपील की गई। सभी क्षेत्रीय कार्यालयों द्वारा हिन्दी माह के दौरान विभिन्न हिन्दी प्रतियोगिताएं तथा विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। इस माह के दौरान नई दिल्ली स्थित क्षेत्रीय कार्यालय सहित प्रधान कार्यालय द्वारा भी विभिन्न हिन्दी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया।

मावलंकर हाल में हिन्दी माह समापन एवं पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। इस समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में केन्द्रीय गृह उपमंत्री माननीय श्री रामलाल राही जी उपस्थित थे। श्री रामलाल राही जी द्वारा प्रधान कार्यालय के राजभाषा कक्ष द्वारा प्रकाशित "संघ की राजभाषा नीति और हमारा उत्तरदायित्व" नामक पुस्तिका का विमोचन किया गया। उन्होंने उपस्थित अधिकारियों एवं कर्मचारियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि हमें अपनी राष्ट्रभाषा अर्थात राजभाषा का सम्मान करना चाहिए। उन्होंने उन देशों का उदाहरण दिया जो अपनी राष्ट्रभाषा में ही अपने देश का पूरा काम काज करते हैं। उन्होंने कहा कि हमें हिन्दी को राष्ट्रीय स्तर पर प्रयोग में लाना चाहिए। इसके साथ ही उत्तर भारत के लोगों को दक्षिण भारत की भाषाओं को भी अपनाना चाहिए। राही जी ने हिन्दी माह के दौरान आयोजित प्रतियोगिताओं के पुरस्कार विजेताओं को पुरस्कार एवं प्रमाणपत्र वितरित किये।

भारतीय खाद्य निगम विशाखापट्टणम में अब चैक हिंदी में

क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय (दक्षिण) बेंगलूर के उप निदेशक (का०) श्री कृष्णपणिकर द्वारा भारतीय खाद्य निगम के कार्यालय के निरीक्षण दौरान हिंदी में काम करने के लिए प्रेरित किया गया। उनसे प्रेरित होकर अब दक्षिण भारत स्थित उक्त कार्यालय में सभी सरकारी चैक हिंदी में लिखे जाने लगे हैं। नमूने दृष्टव्य हैं:—

निरीक्षण से पहले निरीक्षण के बाद

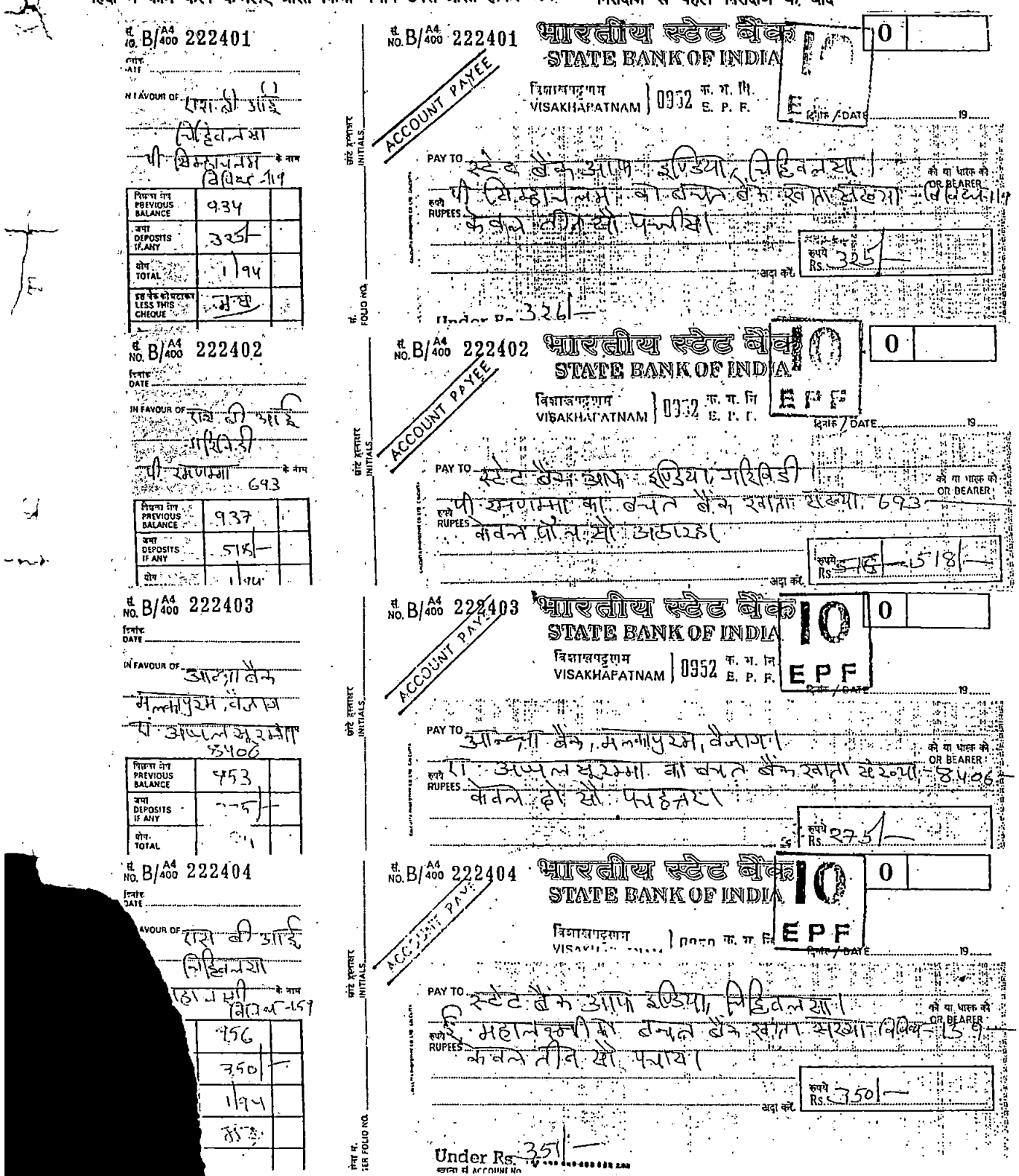

दिल्ली पब्लिक लाईब्रेरी द्वारा उड़िया कवि डा॰ महापात्र का अभिनन्दन

पिछले दिनों दिल्ली पब्लिक लाईब्रेरी की ओर से सरोजनी नगर परिसर में उड़िया के प्रख्यात कवि डा॰ सीताकान्त महापात्र को ज्ञानपीठ पुरस्कार से पुरस्कृत होने के उपलक्ष्य में उनका अभिनन्दन किया गया। समारोह की अध्यक्षता डा॰ शंकर दयाल सिंह, संसद-सदस्य तथा अध्यक्ष, दिल्ली लाईब्रेरी बोर्ड ने की। उन्होंने अपने भाषण में बल दिया कि जिन परिस्थितियों में डा॰ महापात्र ने साहित्य सृजन किया है, यह अनुकरणीय है। उन्होंने प्रशासनिक सेवा में रहते हुए अपनी साहित्यिक चेतना से साबित कर दिया है कि प्रतिभा का विकास किसी भी क्षेत्र में रहकर किया जा सकता है।

जामिया मिलिया विश्वविद्यालय की हिंदी विभागाध्यक्ष डा॰ माजदा असद ने भी डा॰ महापात्र को अपनी शुभकामनाएं दीं। डा॰ सीताकान्त महापात्र, भारतीय प्रशासनिक सेवा के एक वरिष्ठ अधिकारी है और आजकल संस्कृति विभाग के सचिव हैं।

डा॰ महापात्र ने अपने सारगर्भित भाषण में साहित्यकार एवं कवि के अन्दर जो एक मौलिक सृजनकारी व्यक्तित्व छिपा होता है, उसकी चर्चा करते हुए अपनी रचना प्रक्रिया पर भी प्रकाश डाला।

इस अवसर पर दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड के निदेशक श्री शिकदर, सुप्रसिद्ध पत्रकार श्री जितेन्द्र सिंह, डा॰ आर॰सी॰ शर्मा, महानिदेशक, राष्ट्रीय संग्रहालय, श्री एच॰सी॰ कौल, इंडिया इंटरनेशनल आदि गण मान्य बुद्धिजीवी उपस्थित थे।

अनुवाद प्रशिक्षण केन्द्र, बम्बई के 37वें सत्र का समापन

केन्द्रीय अनुवाद प्रशिक्षण केन्द्र, बम्बई के 37वें सत्र का समापन समारोह दिनांक 31 मार्च, 1994 को सम्पन्न हुआ। इस समारोह के मुख्य अतिथि के रूप में खालसा कालेज, बम्बई के हिन्दी विभागाध्यक्ष, डा॰ त्रिभुवन राय उपस्थित थे। समारोह की अध्यक्षता, अनुवाद प्रशिक्षण केन्द्र के संयुक्त निदेशक, श्री कृष्ण ना॰ मेहता ने की। मुख्य अतिथि डा॰ राय ने प्रशिक्षणार्थियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि प्रायः सरकारी कार्यालयों में अनुवाद की भाषा कुछ दुरूह-सी होती है। अनुवाद के माध्यम से उसे सरल और सुबोध बनाकर हिन्दी के प्रचार- प्रसार में सहयोग प्रदान करेंगे, जिससे सम्प्रेषण में किसी प्रकार की बाधा न आए।

इस अवसर पर दि न्यू इंडिया इश्योरेन्स कंपनी लिमिटेड, प्रधान कार्यालय, न्यू इंडिया इश्योरेन्स बम्बई के हिन्दी अनुभाग की कु॰ विभा के॰ त्रिवेदी को स्वर्ण पदक तथा भारत सरकार, टकसाल, बम्बई के श्री अनवर ए॰ शेख, हिन्दी अनुवादक को रजत पदक प्रमाण-पत्र से सम्मानित किया गया। अन्य 23 प्रशिक्षणार्थियों को भी सफलतापूर्वक प्रशिक्षण प्राप्त करने पर प्रमाण-पत्र दिए गए।

केन्द्र के संयुक्त निदेशक, श्री मेहता ने अनुवाद और अनुवादक के महत्व पर प्रकाश डाला तथा आगे कहा कि केन्द्रीय कार्यालयों, उपक्रमों व बैंकों के माध्यम से सरकार ऐसी सर्वमान्य सम्पर्क भाषा का विकास करना चाहती है, जिसे प्रत्येक भारतीय सरलता से समझ सके। इसी परिप्रेक्ष्य में भाषा में एकरूपता का गुण उत्पन्न करने के लिए अनुवादकों को प्रशिक्षण दिया जाता है। कार्यालयीन कार्यों में हिन्दी शब्दों के प्रयोग में एकरूपता को सुनिश्चित करना आवश्यक है और इस दिशा में अनुवादक की भूमिका महत्वपूर्ण है।

वसंतोत्सव का आयोजन

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (पूसा इंस्टीट्यूट), नई दिल्ली केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद शाखा ने दिनांक 15 फ़रवरी, 1994 को वसंतोत्सव का आयोजन किया। नवभारत टाइम्स के प्रधान संपादक डा॰ विद्या निवास मिश्र मुख्य अतिथि थे। समारोह की अध्यक्षता संस्थान के संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) व राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष डा॰ प्रेमनाथ तिवारी ने की।

मुख्य अतिथि का स्वागत करते हुए डा॰ तिवारी ने डा॰ मिश्र के व्यक्तित्व और कृतित्व का उल्लेख करते हुए कहा कि यह संस्थान के लिए गौरव की बात है कि देश के प्रबुद्ध पत्रकार ने यहां पधार कर हमें आर्शीवाद दिया। डा॰ विद्या निवास मिश्र ने वसंत की महिमा का उल्लेख करते हुए इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाया कि संस्थान के वैज्ञानिक कृषि में नए-नए अनुसंधान करके भारतीयों का जीवन खुशहाल बनाने [illegible] महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं और खुशहाली में ही वसंत [illegible] मन से स्वागत किया जा सकता है।

सांस्कृतिक समारोह में संस्थान के वैज्ञानिकों, अधिकार[illegible] ने कविताएं, गजल और गीत प्रस्तुत किए। वरिष्ठ वैज्ञानि[illegible] रंजना अग्रवाल व श्री राजेन्द्र प्रसाद गुप्त के कार्यक्रम [illegible] हुई। कार्यक्रम का संचालन संस्थान के संपादक (हिन्दी) [illegible] दुबे तथा सहायक निदेशक (राजभाषा) श्रीमती सीमा [illegible]

हिंदीतर भाषी लेखक सम्मानित

केंन्द्रीय हिंदी निदेशालय, शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय के तत्वावधान में हिंदीतर भाषी लेखकों के सम्मान में 12 मार्च, 1994 को राष्ट्रपति भवन, नई दिल्ली में एक समारोह का आयोजन किया गया। इस समारोह में महामहिम राष्ट्रपति डा॰ शंकरदयाल शर्मा के अतिरिक्त माननीय मानव संसाधन विकास मंत्री श्री अर्जुन सिंह तथा भारत में पोलैंड के राजदूत और सुप्रसिद्ध पोलिश कवि तथा हिंदी विद्वान प्रो॰ मारिया क्षिस्तोफ बृस्की भी उपस्थित थे। यह समारोह ऐसे हिंदी लेखकों को सम्मानित करने के लिए आयोजित किया गया था, जिनकी मातृ-भाषा हिंदी नहीं है, लेकिन जिन्होंने हिंदी की विभिन्न विधाओं में अपना महत्वपूर्ण अवदान प्रस्तुत किया है। महामहिम राष्ट्रपति जी ने इन सभी लेखकों को प्रतीक चिह्न, शाल, प्रमाण पत्र तथा 15,000/- रुपए की राशि से सम्मानित किया।

अपने स्वागत भाषण में केंन्दीय हिन्दी निदेशालय के निदेशक डा॰ गंगा प्रसाद विमल ने अभ्यागतों का स्वागत करते हुए निदेशालय द्वारा संचालित योजनाओं के मूल उद्देश्यों पर प्रकाश डाला। उन्होंने आगे बोलते हुए कहा कि भारतीय भाषाओं के लेखक अपनी संस्कृति और उसकी माटी की समृद्ध परंपराओं से गहरे रूप से जुड़े हुए हैं।

हिंदी, संस्कृत और कई भारतीय भाषाओं के ज्ञाता तथा प्रसिद्ध पोलिश कवि प्रो॰ बृस्की ने अपने भाषण का आरंभ और अंत संस्कृत के श्लोकों के सस्वरपाठ से किया। एक विदेशी विद्वान के मुख से संस्कृत श्लोक के शुद्ध उच्चारण को सुनकर सभी श्रोता आश्चर्यचकित रह गए। "साहित्य व भाषा के पुजारी मित्रो" सरीखे भावनात्मक संबोधन से अपने भाषण की शुरुआत करते हुए उन्होंने ये उद्गार व्यक्त किए कि एक परदेशी को आपने-अपने पारिवारिक समारोह में मुख्य भाषण देने के लिए जो मुझे आमंत्रित किया है उसे मैं अपनी पूरी आत्मा के साथ महसूस करते हुए गर्व और स्नेह का अवुभव करता हूं। उन्होंने भाषा के संबंध में पाश्चात्य विद्वान एमरसन के शब्दों को उद्धृत किया कि भाषा एक नगर है जिसके निर्माण के लिए एक-एक व्यक्ति एक-एक पत्थर लाता है। हिंदीतर भाषी पुरस्कृत लेखकों को "विशेष राज मिस्त्री" की संज्ञा से विभूषित करते हुए उन्होंने उनका अभिनंदन किया। उन्होंने हिंदी भवन के निर्माण में हिंदीतर भाषी लेखकों के योगदान की सराहना करते हुए कहा कि इन हिंदीतर लेखकों ने स्वेच्छा से इस भाषा को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम चुना है जो इनका हिंदी भाषा के प्रति प्रेम का परिचायक है। अपने मत के समर्थन में उन्होंने एक उदाहरण प्रस्तुत किया कि एक निस्संतान दम्पति ने एक बच्चे को गोद लिया। उस बच्चे के बड़े होने पर उन्होंने इस तथ्य को उससे छुपाया नहीं। एक दिन वह बच्चा अपनी मां से कहने लगा कि यदि आपकी अपनी संतान होती तो शायद आप उसे अधिक प्यार करते और मुझे गोद लिया गया है इसलिए शायद आप मुझे कम प्यार करती होंगी मां ने उत्तर दिया कि भाग्य से प्राप्त बच्चे को तो अपनाना ही पड़ता क्योंकि उसके अलावा और कोई चारा नहीं होता लेकिन तुम्हें तो हम स्वेच्छा से अपनाया है इसलिए हम तुम्हें अपनी इच्छा से ही प्यार करते हैं

महामहिम राष्ट्रपति का ध्यान आकर्षित करते हुए उन्होंने कहा कि ह विदेशी इस भाषा के विकास में किस प्रकार अपना योगदान दे सकते हैं अनुवाद को अंतर्राष्ट्रीय भाषाओं के साहित्य की श्रीवृद्धि का एक अ उपादान मानते हुए उन्होंने कहा कि अनुवाद मूल भाषा से किया जा चाहिए न कि अंग्रेजी से। इससे मूल भाषा की अस्मिता, देश की संस्कृ तथा अन्य तथ्य यथावत प्रस्तुत किए जा सकेंगे। भाषा की समृद्धि के रास्तों की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि एक तो हम अपनी निजी संस्कृ की अंदरूनी शक्ति से मौलिक लेखन द्वारा साहित्य को समृद्ध क सकते हैं और दूसरे बाहर चलती हवाओं को भीतर आने का न्यौता देक उन्मुक्त वातावरण में ही किसी भी भाषा का साहित्य फल-फूल सकता है जब तक हम अपने चिंतन को सार्वभौमिकता के धरातल पर नहीं ले जा तब तक उत्कृष्ट साहित्य-सर्जन संभव नहीं है।

महामहिम राष्ट्रपति डा॰ शंकर दयाल शर्मा ने इस अवसर पर अप उद्बोधन भाषण में 14वीं शताब्दी से लेकर अब तक ऐतिहासिक परिप्रे में हिंदी के विकास की सम्यक् जानकारी दी। राष्ट्रपति जी ने कहा कि हि केवल अब भारत की भौगोलिक सीमाओं तक ही सीमित नहीं है बल्कि अब वह विश्व के कई देशों में अपनी पहचान बना चुकी है। वह दिन नहींजब अंतराष्ट्रीय पर स्तर पर हिंदी को संयुक्त संघ में अंतर्राष्ट्रीय भ का स्थान मिलेगा।

अपने अध्यक्षीय भाषण में माननीय मानव संसाधन विकास मंत्री ने प्र बृस्की द्वारा दिए गए भाषणों से अपनी सहमति जताते हुए पुरस्कृत हिंदी लेखकों को उत्कृष्ट लेखन के लिए उन्हें बधाई दी।

अंत में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के अध्यक्ष प्र सूरजभान सिंह ने सभी आमंत्रित अतिथियों के प्रति आभार व्यक्त किय

समारोह का संचालन केंद्रीय हिंदी निदेशालय के सहायक निदेशक ड वीरेन्द्र सक्सेना ने किया।

पुरस्कृत लेखकों की सूची इस प्रकार है: श्रीमती इंदु बाली (पंजाबी षणमुखन (मलयालम), महाराज कृष्ण संतोषी (कश्मीरी), श्री के॰ब रामचन्दानी (सिंधी), डा॰ जे॰एल॰ रेड्डी (तेलुगू), श्री टी॰आर॰ भ (कन्नड़), डा॰ विश्वनाथ अय्यर (तमिल), श्री प्रद्युम्न दास वैष्ण (उड़िया), डा॰ पदमजा घोरपड़े (मराठी), श्री कालीपद दास (बंग्ला डा॰ के॰ए॰ जमुना (तमिल), डा॰ रघुनाथ वासुदेव विवलकर (मराठी श्रीमती रमा भागवती(असमिया) तथा डा॰ साधना शाह (गुजराती)

चलार्थ पत्र मुद्रणालय पुरस्कृत

चलार्थ पत्र मुद्रणालय, (वित्त मंत्रालय, आर्थिक कार्य विभाग का धीनस्थ कार्यालय) को क्षेत्रीय राजभाषा कार्यान्वयन प्रतियोगिता वर्ष 991-92 का पश्चिम क्षेत्र (महाराष्ट्र, गोवा एवं गुजरात) का "प्रथम स्कार", राजभाषा ट्रॉफी प्राप्त हुई है। यह ट्रॉफी, दि॰ 7 जनवरी, 94 को हमदाबाद में, श्री के॰सी॰ श्रीवास्तव, उप सचिव, भारत सरकार, गृह त्रालय, राजभाषा विभाग की अध्यक्षता में आयोजित समारोह में, गुजरात म्बविद्यालय के कुलपति श्री परीख जी के करकमलों द्वारा प्रदान की गई, सके चलार्थ पत्र मुद्रणालय की ओर से मुद्रणालय के अपर मुख्य भियंता श्री दिनेश कुमार अग्रवाल तथा मुद्रणालय की सहायक निदेशक रा॰भा॰) श्रीमती जयश्री अ॰ साठये ने प्राप्त की।

हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड
जिंक लेड स्मेल्टर, विशाखापटनम

वर्ष 1993 के दौरान केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद के अखिल रतीय स्तर की विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित की गई हैं। उनमें से म्नलिखित प्रतियोगिताओं में हमारी इकाई से सफल प्रतियोगियों के नाम म्न प्रकार से हैं:-

हिन्दी निबंध प्रतियोगिता

श्री पी॰ चन्द्रराव	व॰ आशुलिपिक
वी॰ वी॰ अनन्त राम	स॰ लेखा अधिकारी
श्री वी॰ मुरली मनोहर	लिपिक
श्री बी॰ कोंदडा राव	व॰ सहायक
श्री एस॰ ए॰ करीम	व॰ सहायक

हिन्दी टंकण प्रतियोगिता

श्री पी॰ चन्द्रराव	व॰ आशुलिपिक
श्री एस॰ ए॰ करीम	व॰ सहायक

वैज्ञानिक लेख प्रतियोगिता

श्री एम॰ वर प्रसाद राव	व॰ माल अधिकारी
श्री आर॰ सी॰ साव	प्रबंधक (विक्रय)
श्री एन॰ के॰ प्रकाशम	व॰ प्रयोग॰ सहा॰
श्री आर॰ के॰ के॰ नायर	व॰ रसायनज्ञ
श्री एम॰ आर॰ परचा	स॰ अभियनता

उपरोक्त में से निबंध प्रतियोगिता में श्री पी॰ चन्द्र राव, व॰ आशुलिपिक लुगुभाषी को विशेष प्रोत्साहन राशि रू॰ 101/- का पुरस्कार प्राप्त हुआ।

अखिल भारतीय हिंदी सेवा सम्मान

नई दिल्ली के सप्रू हाऊस स्थित सभागार में केन्द्रीय सचिवालय हिंदी रिषद के वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह के अवसर पर, सर्वाधिक व्यक्तियों, संस्थाओं और केन्द्रीय कार्यालयों को हिंदी में कार्य करने के लिए प्रेरित व प्रोत्साहित करने के लिए हरिबाबू कंसल धर्मार्थ ट्रस्ट की ओर से इन्दौर नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सचिव व केन्द्रीय उत्पाद शुल्क व सीमाशुल्क विभाग के सहायक निदेशक (राजभाषा) श्री राज केसरवानी को केन्द्रीय रसायन व उर्वरक मंत्री श्री रामलखनसिंह यादव के हाथों 'अखिल भारतीय हिंदी सेवा सम्मान' से सम्मानित किया गया।

हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड
अग्निगुण्डाला लेड प्रोजेक्ट बन्डलमोट्टु

कम्पनी की राजभाषा गतिविधियों के तहत इकाई में 24.2.1994 को क्रमशः हिन्दी श्रुलेख प्रतियोगिता व हिन्दी सुवाश्रुत प्रतियोगिता का आयोजन किया गया है। उक्त प्रतियोगिताओं में कई अधिकारियों व कामगारों ने सोत्साह भाग लिया।

इसी दिन प्रतियोगिताओं के बाद आयोजित एक कार्यक्रम में प्रबन्धक (भूविज्ञानी) श्री के॰ एस॰ एम॰ ए॰ अहमद ने अध्यक्षता की। उपस्थित सदस्यों को संबोधित करते हुए प्रबन्धक (का॰ प्रशा॰) श्री ए॰ वी॰ अप्पाराव ने बताया कि इस इकाई में समस्त अधिकारियों एवं कामगारों के सहयोग से हिन्दी में काम हो रहा है। श्री के॰ एस॰ एम॰ ए॰ अहमद, प्रबन्धक (भूविज्ञान) ने विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किए। उक्त प्रतियोगिताओं का संचालन श्री वी॰ आर॰ सुदर्शन, श्रम कल्याण अधिकारी व श्री मोहमद चान ने किया।

पुलिस दूरसंचार विभाग में
हिन्दी पुरस्कार वितरण समारोह

पुलिस दूरसंचार विभाग के स्टाफ को हिन्दी में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से हिन्दी की विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया।

दिनांक 2 मार्च, 1994 को पुलिस दूरसंचार के निदेशक श्री आर॰ के॰ पंडित, भां॰ पु॰ सेवा ने हिन्दी प्रतियोगिताओं में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने वाले विजेताओं को पुरस्कार देकर सम्मानित किया।

हिन्दी में कार्य करने के लिए विभाग की ओर से मुख्यालय की राजभाषा शील्ड बीजलेख विंग के श्री सोहन लाल, उप निदेशक को प्रदान की गई और अहिन्दी भाषी/हिन्दी भाषी राज्यों के लिए निर्धारित राजभाषा शील्ड ईटानगर/जयपुर स्थित केन्द्रों के लिए श्री चंचल सिंह उप निदेशक को प्रदान की गई।

अहिन्दी भाषी स्टाफ के लिए आयोजित हिन्दी प्रतियोगिता का सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार श्री आर॰ वी॰ राघवन, लेखा अधिकारी को प्रदान किया गया तथा अधिकारी वर्ग में सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार श्री श्रीकृष्ण, अतिरिक्त सहायक निदेशक को प्रदान किया गया। श्री दुर्गानन्द दास, सहायक निदेशक को हिन्दी में सर्वाधिक कार्य के लिए वर्ष के सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया। हिन्दी टंकण प्रतियोगिता का सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार श्री हीरा राम, अवर श्रेणी लिपिक को प्रदान किया गया।

समारोह का संचालन हिन्दी अधिकारी श्री सत्य प्रकाश भारद्वाज ने किया तथा समारोह में पुलिस दूरसंचार के संयुक्त निदेशक श्री एम॰ एस॰ पोपली एवं स्टाफ के सैकड़ों व्यक्तियों ने भाग लेकर पुरस्कार विजेताओं को प्रोत्साहित किया और उनका मनोबल बढ़ाया।

निदेशक श्री आर० के० पंडित, ने हर्ष व्यक्त करते हुए कहा कि पुलिस दूरसंचार जैसे तकनीकि विभाग में सरकारी काम काज में हिन्दी का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में होने लगा है। उन्होंने कहा कि हमारे संविधान निर्माताओं ने हिन्दी को सरकारी कामकाज की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करके हिन्दी को गौरवान्वित किया है। अतः हमारा यह कर्तव्य हो जाता है कि हम संविधान का अनुपालन करने के उद्देश्य से सरकारी कामकाज में पूर्ण रूप से हिन्दी का प्रयोग सुनिश्चित करें।

न्यूक्लियर पावर कारपोरेशन अणुशक्ति (कोटा)

राजभाषा प्रोत्साहन को दृष्टिगत रखते हुए राजस्थान परमाणु बिजलीघर, अणुशक्ति, रावतभाटा में विभिन्न प्रोत्साहन योजनाएं लागू हैं।

हिन्दी में मूल टिप्पणलेखन के लिए लागू प्रोत्साहन योजनान्तर्गत गत दिसम्बर, 93 को समाप्त होने वाली तिमाही में निम्नलिखित कर्मचारियों ने न केवल पुरस्कार जीते बल्कि हिन्दी में काम करने में काफी रुचि दिखाई।

प्रथम पुरस्कार : श्री कुंजबिहारी जोशी, कनिष्ठ क्रय सहायक संविदा एवं सामग्री प्रबन्ध अनुभाग ने 19270 शब्द लिखकर 300 रुपए का नकद पुरस्कार प्राप्त किया।

द्वितीय पुरस्कार : श्री नर्मदा शंकर शर्मा, उच्च श्रेणी लिपिक, सामान्य प्रशासन अनुभाग ने 7405 शब्द लिख कर 200 रुपए का नकद पुरस्कार प्राप्त किया।

तृतीय पुरस्कार : श्री कैलाश चन्द बलसीरी, उच्च श्रेणी लिपिक, स्थापना-I अनुभाग ने 5124 शब्द लिख कर 100 रुपए का नकद पुरस्कार प्राप्त किया।

राजभाषा नीति के उत्कृष्ट कार्यान्वयन के लिए माडेल मिल, नागपुर को "राजभाषा ट्राफी"

नेशनल टैक्सटाइल कारपोरेशन (एम०एन०) लि०, बम्बई की अधीनस्थ इकाई मा डेल मिल, नागपुर को वर्ष 1992-93 के दौरान राजभाषा नीति के उत्कृष्ट कार्यान्वयन के लिए नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, नागपुर द्वारा "राजभाषा ट्राफी" और "प्रमाण-पत्र" प्रदान कर सम्मानित किया गया। यह सराहनीय कार्य श्री रमेश चन्द्र, महा प्रबंधक, मा डेल मिल, नागपुर, श्री पी० एम० कावले, प्रबंधक (कार्मिक एवं ओ० सं०), श्री बी० एन० त्यागी, कारखाना प्रबंधक तथा श्री डी० एस० शुक्ला, हिन्दी प्रतिनिधि के अथक प्रयासों से और मा डेल मिल, नागपुर में कार्यरत सभी अधिकारियों/कर्मचा-
रियों की राजभाषा के प्रति दिलचस्पी एवं सम्पूर्ण सहयोग की भावना से संभव हो सका।

केनरा बैंक, मेरठ पुरस्कृत

मेरठ नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति से वर्ष 1992-93 के दौरान राजभाषा कार्यान्वयन के क्षेत्र में सर्वोत्तम कार्य करने के फलस्वरूप केनरा बैंक को "राजभाषा शील्ड और प्रशस्ति पत्र" पुरस्कार के तौर पर मिले हैं। दिनांक 7.12.93 को मेरठ नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की छमाही बैठक में समिति के अध्यक्ष तथा मेरठ के आयकर आयुक्त श्री भै सिंह जी के कर कमलों से केनरा बैंक की मंडलप्रबंधक श्री टी०चौक ने राजभाषा शील्ड एवम् प्रशस्ति पत्र प्राप्त किये।

नेहरू युवा केन्द्र में हिन्दी पुरस्कार वितर

17 जनवरी, 1994 को मानव संसाधन विकास मंत्रालय, के नेहरू युवा केन्द्र संगठन के कार्यालय परिसर में श्री स्वपन ठाकुर-निदेशक की अध्यक्षता में वार्षिक हिन्दी पुरस्कार वितरण समारो आयोजन किया गया जिसके मुख्य अतिथि डा० एस० वाई० कुरैशी, सचिव/महानिदेशक थे। मुख्य अतिथि भाषण में डा० कुरैशी ने क हिन्दी के कार्यक्रम को संगठन के नियमित व विशेष कार्यक्रमों के जोड़कर हिन्दी के कार्य में लगे संगठनों के सहयोग से वृहत् प्रचार- करें क्योंकि हिन्दी का प्रचार राष्ट्रीय एकता के लिए आवश्यक

(1) सरकारी काम-काज में मूल हिन्दी टिप्पण/आलेखन के प्रोत्साहन हिन्दी टिप्पण/आलेखन के लिए प्रोत्साहन योज अन्तर्गत उन कर्मचारियों को पुरस्कार प्रदान किये गये जि एक वर्ष की अवधि में लगभग 20,000 शब्द हिन्दी लिखकर सरकारी कामकाज में हिन्दी का अधिक से अ प्रयोग किया।

प्रथम पुरस्कार विजेता

(1) श्री अशोक कुमार सिंह, युवा समन्वयक, ने० यु० के० इन्दौर — रु० 4

(2) श्री भूपेन्द्र सिंह, लिपिक, ने० यु० के० संगठन नई दिल्ली — रु० 4

द्वितीय पुरस्कार विजेता

(1) श्री विश्वजीत सान्याल, युवा समन्वयक, ने० यु० के० पन्ना — रु० 2

(2) श्री बी० बी० खरे, लेखालिपिक ने० यु० के० बीकानेर — रु० 2

(3) कुमारी जितेन्द्र कौर, लेखालिपिक, ने० यु० के० हिसार — रु० 2

राजभाषा संगोष्ठी (भाषण पुरस्कार)

हिन्दी सप्ताह के अन्तर्गत दिनांक 16 सितम्बर, 1993 को कार्या हिन्दी का प्रयोग व अपना योगदान, विषय पर एक राजभाषा संगो मुख्यालय नई दिल्ली में आयोजन किया गया। इस संगोष्ठी मे अधिकारियों/कर्मचारियों ने राजभाषा हिन्दी के विभिन्न पहलुओं पर डाला तथा हिन्दी के प्रयोग को ज्यादा से ज्यादा कार्य में लाने व कारगर रूप से लागू करने के लिए कहा गया पूर्ण रूप से समर्पि कर्मचारियों को विशेष नकद प्रोत्साहन के रूप में 101/- रू० प्रमाण व एक-एक स्मृति चिह्न भेंट किया गया।

हिन्दी टेलेक्स प्रशिक्षण कार्यक्रम

मिति के सदस्य बैंकों के टेलेक्स आपरेटरों को हिन्दी में संदेश प्रेषण द्विदिवसीय प्रशिक्षण संयोजक बैंक द्वारा दिनांक 17 एवं 18 दिसम्बर, 3 को बैंक आ ॅफ इंडिया, क्षेत्रीय कार्यालय सभाकक्ष में किया गया। क्षण कार्यक्रम का उद्देश्य बैंकों में हिन्दी में टेलेक्स संदेश भेजने का क्षण देना तथा इस संबंध में आने वाली कठिनाइयों को दूर करना था।

क्त प्रशिक्षण कार्यक्रम में इस बात का विशेष ध्यान रखा गया कि ागी टेलेक्स आपरेटरों को द्विभाषिक टेलेक्स के परिचालन तथा हिन्दी लेक्स संदेश प्रेषण से संबंधित आवश्यक जानकारी तो दी जाए, साथ शिक्षण अवधि के दौरान उन्हें अधिक से अधिक व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जाए। इसी को ध्यान में रखकर दो दिनों के प्रशिक्षण का क्रम तैयार किया गया था।

प्रशिक्षण कार्यक्रम का उद्घाटन दिनांक 17 दिसम्बर, 93 को समिति के ध्यक्ष व बैंक आ ॅफ इंडिया के क्षेत्रीय प्रबंधक, डा ॅ० जे० बी० कुलकर्णी किया।

इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में सात बैंकों के 13 टेलेक्स आपरेटरों ने भाग ा। दूरसंचार विभाग, इन्दौर के श्री बी०के० यादव एवं श्री वी०के० ाकर, यूनियन बैंक आ फ इंडिया के श्री रामचंद्र महादणे तथा बैंक आ ॅफ इंडिया के श्री संजय अग्रवाल के प्रशिक्षणार्थियों को मार्गदर्शन दिया। संपूर्ण कार्यक्रम का संयोजन व संचालन समिति के सदस्य सचिव व बैंक आ ॅफ इंडिया के राजभाषा अधिकारी, श्री मृत्युंजय कुमार गुप्ता ने किया।

राजपुरा दरीबा खान

एक हिन्दी शब्द प्रतिदिन सीखें

कर्मचारियों को अंग्रेजी शब्दों (प्रशासनिक एवं तकनीकी) के मानकीकृत हिन्दी पर्याय से अवगत कराने के उद्देश्य से हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड की इकाई राजपुरा दरीबा खान में दो-दो सूचना पट्ट लगाए गए हैं। जिन पर वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा प्रकाशित वृहत्त प्रशासन शब्दावली से एक अंग्रेजी शब्द तथा उसका हिन्दी पर्याय प्रतिदिन लिखा जाता है।

यह योजना बेहद सराही गई है। इस योजना के तहत अब तक (दिनांक 21-3-1994) कुल 1500 अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी पर्याय लिखे जा चुके हैं।

इसके लिए शब्दावली प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया जिसमें काफी संख्या में कर्मचारियों ने भाग लिया।

आदेश-अनुदेश

राजभाषा नीति

त सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, नई दिल्ली का ाक 11 मई, के पत्र संख्या 12024/5/94-रा भा (ख-2)

विषयः—उज्जैन एवं नीमच में नई नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों का गठन।

ुझे यह सूचित करने का निदेश हुआ है कि गृह मंत्रालय, राजभाषा ाग द्वारा उज्जैन एवं नीमच में नई नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों गठन का निर्णय लिया गया है।

2. इन समितियों की बैठकों पर हुए खर्च की प्रतिपूर्ति के रूप में प्रदान जाने वाली राशि राजभाषा विभाग के पत्र संख्या 12024/9/87-रा०भा० (ख-2) दिनांक 30-6-1988 में वर्णित प्रावधानों के अनुसार 1000/- रु० प्रति बैठक (2000/-, रु० वार्षिक, अधिकतम) होगी।

3. इन समितियों की बैठकें आयोजित करने हेतु, उज्जैन के लिए सितम्बर/मार्च तथा नीमच के लिए जुलाई/जनवरी के माह निर्धारित किए गए हैं। आपसे अनुरोध है कि समितियों के अध्यक्षों से सम्पर्क करके, कैलेन्डर के अनुसार निर्धारित उक्त माहों में समितियों की बैठकें आयोजित करवाने की कार्रवाई करें।

पाठकों के पत्र

राजभाषा भारती का 60 तथा 61वां संयुक्त अंक हाल ही में हमारे कार्यालय में देखने को मिला। अंक की साज-सज्जा तथा उसमें सम्मिलित अनुवाद संबंधी सारगर्भित लेख मनपसंद लगे। "भारतीय भाषा संगम" स्तंभ के अंतर्गत भारत की विभिन्न भाषाओं में रचित कविताओं का हिंदी अनुवाद उपलब्ध कराने का आपका रवैया राष्ट्रीय भावना तथा राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने में सहायक सिद्ध होगा।

—किशोर कृष्ण शेवडे, 323, शनिवार पेठ, पुणे-411030

राजभाषा-भारती के जनवरी-जून 1993 के संयुक्तांक 60-61 अंक की प्रति पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पत्रिका में प्रकाशन हेतु दिए गए लेखों के लिए लेखक गण व इन लेखों, समीक्षा, साहित्यिकी एवम् चिंतन आदि को पत्रिका के माध्यम द्वारा पाठक वृंद तक पहुंचाने के लिए संपादकीय मंडली के समस्त सदस्यगण बधाई के पात्र है, जिनका इस राजभाषा रूपी वृक्ष को सींचने व चहुंमुखी योगदान हेतु प्रयास किये जाने के लिए, मैं उन सभी का हृदय के गहनतम तल से आभारी हूं।

उक्त पत्रिका में "उपक्रमों में राजभाषा प्रबंध" लेख के माध्यम से जो लेखक श्री गोवर्धन ठाकुर ने राजभाषा हिन्दी के उत्थान हेतु, भारत सरकार की मंशा अनुसार उसे कार्यान्वित करने के लिए उसका विश्लेषण कर, राजभाषा विभाग व अन्य विभागों के वरिष्ठ अधिकारियों तक आवाज पहुंचाने का जिस प्रकार साहस बटोरा है, निश्चय ही मरुस्थल में बूंद के समान, राज भाषा की डोर से बंधे कर्मचारियों/अधिकारियों के अहम में जीव भरकर आशा की किरण का उद्भव है। श्री ठाकुर जी ने अद्यतन स्थिति को भोगते हुए, भविष्य के झरोखों के पाट खोलकर, अपने सुझावों के द्वारा राजभाषा कार्यान्वयन के लिए जिस लहजे से ललकारा है, इस श्रेणी की उपलब्धि के लिए, हम जैसे पाठकों की शुभकामनाऐं पहुंचाने का संपादकीय मंडली से अनुरोध है ताकि उनकी लेखनी राजभाषा क्षेत्र में फैलते हुए अंधकार को विकसित न होने के लिए, इसी प्रकार विचारों रूपी ढाल का काम करते हुए, आजीवन चीरती रहे।

—ए०के० शर्मा, हिन्दी अधिकारी, सीमेंट कार्पोरेशन ऑफ इण्डिया लि०, राजबन सीमेंट संयंत्र, जिला सिरमौर-173028।

"राजभाषा भारती" का संयुक्तांक 60-61 जनवरी-जून 1993 सधन्यवाद प्राप्त हुआ। पत्रिका को पढ़ने पर ज्ञात हुआ कि पत्रिका में राजभाषायी विषयों के साथ साहित्यिक व सांस्कृतिक विषयों का भी समावेश है जो इसकी उपयोगिता को बढ़ाते हैं।

पत्रिका में संघ के विभिन्न कार्यालयों, विभागों एवं संगठनों में हो रहे राजभाषा सम्बन्धी कार्यकलापों को ब्यौरा दिया गया है जिसके द्वारा दूसरे विभाग, जिनमें राजभाषा कक्षों की स्थापना अभी हुई हैं, मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं। जो राजभाषा हिन्दी के विकास में एक और कदम होगा।

—कश्मीर सिंह, राजभाषा अधिकारी, इण्डियन ओवरसीज़ बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय तूतीकोरिन, (तमिलनाडु)

राजभाषा भारती की त्रैमासिक पत्रिका का अंक 62 प्राप्त हुआ। अपने उद्देश्य की प्राप्ति में यह पत्रिका निरन्तर प्रयासरत है यह पत्रिका को पढ़ने से लगता है। पत्रिका में डा० रामगोपाल सोनी का लेख-"भाषायी अस्मिता और भारतीय जनमानस" पढ़कर अच्छा लगा। इसी प्रकार "संघ की राजभाषा नीति और प्रशासन" तथा "जिस्ट टेक्नालोजी" (कम्प्यूटर) जैसे लेख रोचक एवं विचारात्मक हैं। पत्रिका के प्रकाशन से जुड़े सभी लोग सराहना एवं प्रशंसा के पात्र हैं।

—मंगत राम धस्माना, सहायक निदेशक, राष्ट्रीय विमानपत्तन प्राधिकरण, सफदरगंज हवाई अड्डा, नई दिल्ली-110003

राजभाषा भारती के संयुक्तांक 60-61, जनवरी-जून 1993 प्राप्त हुआ। पत्रिका में विविध प्रकार की उपयोगी, ज्ञानवर्धक तथा सूचना परक सामग्री उपलब्ध कराई गई है। वास्तव में यह हिंदी के प्रचार-प्रसार के अपने उद्देश्य में खरी उतरी है। प्रसिद्ध हिंदी सेवी श्री शंकर दयाल सिंह से साक्षात्कार "मेरे प्रेरणा स्रोत गांधी जी है" में बहुत ही सार्थक और उपयोगी बातों पर प्रकाश डाला गया है। इसके अलावा श्री निशि कान्त महाजन का लेख "संघ की राजभाषा हिंदी और प्रशासन" तथा डॉ० सीता कान्त महापात्र की कविताएं पत्रिका के संग्रहणीय दस्तावेज हैं। आद्योपांत अध्ययन के बाद लगा कि यह स्थायी प्रकृति का संग्रहणीय प्रकाशन है। श्री गोवर्धन ठाकुर का लेख "उपक्रमों में राजभाषा प्रबंध" भी बहुत महत्वपूर्ण है।"

—डॉ० आर०एम०एस० विजयी, उप प्रबंधक (राजभाषा) हिंदुस्तान वेजिटेबल आयल्स कार्पोरेशन लि०, सब्जी मंडी दिल्ली-110007

राजभाषा भारती त्रैमासिका का 60—61वां अंक मिला। आपका आभारी हूं। इस अंक में व्याकरण और अनुवाद, देवनागरी लिपि, राजभाषा और यांत्रिकी उपकरणों की मालूमात के साथ-साथ "भारतीय भाषा संगम" नामक एक नया स्तंभ भी शुरू किया गया है। यह स्तंभ बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा। यह स्तंभ राजभाषा हिन्दी और भारतीय भाषा के बीच सांस्कृतिक, साहित्यिक तथा कलात्मकता के आदान-प्रदान के प्रक्रिया को अवश्य गति देगा।

—माधव चिधू सुखाडे, 7अ, मील कॉलनी, रिंग रोड, जलगांव-425001

"राजभाषा भारती" का अंक 62 प्राप्त हुआ। राजभाषा के संदर्भ में यह देश की सर्वोत्तम पत्रिका है। इसे मैं संग्रहणीय दस्तावेज मानता हूं और हर अंक इतना ज्ञानवर्धक होता है कि राजभाषा के इतिहास एवं शोध की दृष्टि से इसका अधिक से अधिक प्रसार होना चाहिए।

डा० महेश चंद्र गुप्त का लेख "देवनागरी लिपि का प्रयोग" तथा श्री हरि बाबू कंसल की रचना "अपेक्षित स्थलों पर हिंदी" के अलावा साहित्यिक सामग्री बहुत पंसद आई। लगभग सभी पहलुओं पर सामग्री भी

अंक में पढ़ने को मिली। इतनी अच्छी पत्रिका के लिए मेरा साधुवाद स्वीकारें।

—जगतपति शरण निगम, भू०पू० वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी, 1/251, विकास नगर, लखनऊ-226020।

राज भाषा भारती का संयुक्तांक 60-61 और अंक 62 अपने महानिदेशालय के माध्यम से प्राप्त हुए। पुस्तक समीक्षा बहुत लाभप्रद लगती है क्योंकि केन्द्र के लिए खरीदी जाने वाली पुस्तकों के चयन में इससे सहायता मिलती है।

—मनोज कुमार, हिंदी अनुवादक, आकाशवाणी, डिब्रूगढ़।

राजभाषा पत्रिका के अंक 60-61 की प्रति हमें प्राप्त हुई। हिंदी के प्रति आप लोगों की निष्ठा एवं श्रद्धा के लिए हमारे कार्यालय की ओर से धन्यवाद स्वीकार करें।

—आ० मुरलीधर, क्षेत्रीय प्रबंधक, क्षेत्रीय कार्यालय तेनाली-522201।

राजभाषा भारती के अंक 60-61 की एक मानार्थ प्रति प्राप्त हुई। इस अंक में आपने तटरक्षक मुख्यालय संबंधी सामग्री को स्थान देकर हमें सरकारी कामकाज में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग के प्रति और अधिक उत्साहित किया है।

—जे०के० सहगल, सहायक निदेशक (हिंदी), तटरक्षक मुख्यालय, राष्ट्रीय स्टेडियम परिसर, नई दिल्ली-110001।

"राजभाषा भारती" पत्रिका का जनवरी-जून, 1993 का संयुक्तांक पढ़ा। अंक हर दृष्टि से उत्तम एवं उपयोगी है। अंक में प्रकाशित सभी लेख महत्वपूर्ण तथा ज्ञानप्रद हैं। "मेरे प्रेरणास्रोत गांधी जी हैं" शीर्षक के अंतर्गत राजभाषा भारती के उप संपादक डॉ० गुरुदयालय बजाज जी की माननीय श्री शंकर दयाल सिंह जी से हुई बातचीत प्रकाशित की गई है, जो कि बहुत ही रोचक, ज्ञानप्रद तथा प्रेरणादायक है। यह आपके अथक प्रयासों तथा कुशल संपादन का ही सुफल है कि राजभाषा भारती के अंक उत्कृष्ट सामग्री के साथ एक-से-बढ़कर-एक निकल रहे हैं। राजभाषा भारती पत्रिका हिन्दी के प्रचार-प्रसार का कार्य अत्यंत सुचारु रूप से कर रही है।"

—डॉ० लल्लन पाठक, वरिष्ठ हिंदी अधिकारी, एन०टी०सी० हाउस, 15, एन०एम० मार्ग, बम्बई-400038।

"राजभाषा भारती" के संयुक्तांक 60-61 में राष्ट्रीय खनिज-विकास निगम के वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी श्री गोवर्धन ठाकुर के आलेख के कटु-सत्य ने मेरे मानस को झकझोर डाला।

—रमेश चंद्र सुकुल, 82/2 आर०टी० द्वितीय तल, संजीव रेड्डि नगर, हैदराबाद-500038।

"राजभाषा भारती" त्रैमासिक पत्रिका राजभाषा कार्यान्वयन एवं विविध नियमों, परिपत्रों एवं आदेशों की जानकारी की दृष्टि से बहुमूल्य है।

—गजेन्द्र सिंह भदौरिया, हिंदी अधिकारी, नेशनल इन्श्योरेन्स कं० लि०, हलवासिया कोर्ट, हजरत गंज, लखनऊ-226001।

आंग्ल भाषा उसे अपने ही राष्ट्र में अधिक रोज़गार दिलाने में सहायक लगती है। उदाहरण स्वरूप राष्ट्रीय सुरक्षा अकादमी (एन०डी०ए०) की परीक्षा आज भी आंग्ल भाषा में ही होती है जो कि पूर्ण रूपेण राष्ट्रीय संस्कृति से जुड़े नौजवानों को राष्ट्र की सुरक्षा के दायित्व से वंचित रखती है। अतः वह अपने बच्चों को आंग्ल भाषा में ही शिक्षित करने पर बल दे रहा है और जिसका कुप्रभाव यह है कि बच्चा भी अधिक तनाव ग्रस्त रहता है और अभिभावक भी। इसका सीधा प्रभाव बच्चे के सामान्य एवं सर्वांगीण विकास पर पड़ रहा है अन्ततः राष्ट्र के विकास पर। वहीं दूसरी तरफ मिशनरी स्कूल इस मानसिकता का लाभ उठाकर अभिभावकों की जेब काटने एवं साथ ही भारतीय संस्कृति की जड़ों को खोखला करने में लगे हुए हैं।

—दयाल सागर जोशी, स० विपणन अधिकारी, स्पेयर पार्टस, विपणन विभाग, स्कू० इ० लि०, लखनऊ-226008।

राजभाषा भारती त्रैमासिक अंक 60-61 प्राप्त हुआ। पत्रिका में विहित सामग्री रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक होने के साथ-साथ हिंदी के प्रचार-प्रसार के संबंध में ऐसी जानकारी उपलब्ध कराती है जो अन्यत्र दुर्लभ है। इससे हिंदी के प्रचार-प्रसार को और बढ़ावा मिलता है। मैं इस पत्रिका के उज्जवल भविष्य की कामना करता हूं।

—जी०एस० मिश्र, हिंदी अधिकारी, डा० राम मनोहर लोहिया अस्पताल, नई दिल्ली

राजभाषा के कार्यान्वयन में "राजभाषा भारती" की विशिष्ट भूमिका है। एक ओर जहां समूचे राष्ट्र की हिन्दी विषयक गतिविधियों का सचित्र ब्यौरा है, वहीं चिंतनपरक लेख और विश्लेषणपूर्ण सामग्री राजभाषा के कार्यान्वयन को एक नई दिशा और अपेक्षित गति सौंपते हैं। पत्रिका में सराहनीय परिवर्तन किए गए हैं। "पुस्तक समीक्षा", "साहित्यिकी", "भारतीय भाषा संगम" जैसे स्तंभ हिन्दी और भारतीय भाषाओं की सृजनात्मकता को रेखांकित करते हैं। इस उपयोगी और सार्थक पत्रिका की सफलता के पीछे आपकी बहुआयामी कल्पनाशीलता तथा आपके अथक परिश्रम जुड़े हैं। मेरी हार्दिक बधाइयां स्वीकार करें।

—डा० दामोदर खड़से, उप मुख्य प्रबंधक (राजभाषा) बैंक आफ महाराष्ट्र, लोकमंगल, 1501, शिवाजीनगर, पूना-411005।

राजभाषा भारती का संयुक्तांक 60-61 प्राप्त हुआ। यह अत्यंत प्रसन्नता की बात है कि इसका आंतरिक स्वरूप दिनोंदिन निखरता जा रहा है। **"भारतीय भाषा संगम" जैसे उत्कृष्ट साहित्यिक रचनाओं के स्तंभ ने रा०भा० की पाठकीय शुष्कता को सरसता में बदल दिया है।** पत्रिका के अंतर्गत "उपक्रमों में राजभाषा प्रबंध "कोशीय अध्ययन में कम्प्यूटर का उपयोग" मेरे प्रेरणास्रोत गांधीजी हैं—सांसद शंकर दयाल सिंह से साक्षात्कार आदि आलेख-सामग्री सुरुचिपूर्ण एवं ज्ञानवर्धक एवं प्रेरक है।

—उमा कांत खुवालकर, दूरदर्शन केन्द्र, नागपुर।

न० रा० का० स० तिरूअनंतपुरम की विशेष बैठक को संबोधित करते हुए सचिव (रा० भा०) माननीय श्री चंद्रधर त्रिपाठी, साथ में श्री वी० आर० प्रभु (केनरा बैंक) तथा श्री वी० राधाकृष्णन।

भारतीय ज्ञानपीठ के सम्मानित उड़िया के महाकवि डा. सीताकान्त महापात्र का स्वागत करते हुए संसद सदस्य माननीय डा. शंकर दयाल सिंह।

आई० एस० एस० एन० 0970—9398

पं० सं० 3246/77

राहुल सांकृत्यायन और निराला

मैं उन दिनों काशी में विद्याध्ययन कर रहा था। पं॰ गंगाधर मिश्र सायंकाल हमें तुलसी रामायण तथा हिन्दी साहित्य का इतिहास पढ़ाते थे। हम जब विद्यालय में पहुंचे तो हमें मालूम हुआ कि महापंडित राहुल सांकृत्यायन निराला जी से मिलने पधारे हुए हैं। हम कुछ विद्यार्थी निराला जी के निवास पर पहुंचे। उन दिनों निराला जी को दारागंज, इलाहाबाद से अपने साथ लाकर पं॰ गंगाधर मिश्र ने राष्ट्रभाषा विद्यालय के निचले तल्ले में, जहां फूलों का एक बागीचा था, ठहराया था। उनके निवास पर पहुंचकर हमने देखा कि निराला जी के कक्ष के सामने एक स्टूल पर एक विशालकाय व्यक्ति हाथ बांधे, धूप में गंभीर मुद्रा में बैठा हुआ है। निराला जी के कक्ष के कपाट बंद थे। हमें पता चला कि किसी कारणवश निराला राहुल जी से मिलना नहीं चाहते और उनसे रुष्ट हैं। परंतु राहुल निराला जी से मिलने को मानो कटिबद्ध थे। दोनों में ठन गई। प्रातः नौ बजे से लेकर सायंकाल सवा चार बजे तक राहुल निराला जी से भेंट करने के लिए सत्याग्रह पर डटे रहे। राहुल जी के माथे पर पसीने की बूंदें श्रमकण की भांति, मोतियों की तरह चमक रही थीं। उनकी आंखों में दृढ़ प्रतिज्ञा के भाव लहरा रहे थे। अन्न–जल त्याग कर राहुल अपने हठ पर स्थिर थे। कक्ष के भीतर निराला जी अशांत भूखे शेर की भांति लम्बे डग भरते टहल रहे थे। उनकी पदचाप बाहर स्पष्ट सुनाई दे रही थी।

सायंकाल साढ़े चार बजे का समय था। हठात् धड़ाम से निराला जी के कक्ष के किवाड़ खुले, खुले क्या दोनों कपाट इस प्रकार दीवारों से टकराकर अपने खुल जाने का अहसास करा रहे थे, जैसे भारी तूफान के धक्के से खुल गए हों। एक मत्त गज की भांति निराला बाहर निकले। उनकी देह पर मात्र एक गमछा घुटनों तक लहरा रहा था। वह लम्बे डग भरते राहुल जी की ओर बढ़े। अचानक निराला को अपनी ओर बढ़ते देख राहुल जी सहम गए परंतु ज्यों ही निराला के हाथ राहुल जी की ओर स्वागत की मुद्रा में बढ़े, त्यों ही आश्वस्त होकर राहुल ने अपने हाथ आगे कर निराला जी को अपने बाहुपाश में इस तरह बांध लिया, जैसे दो आत्मीय जन लम्बे अरसे के बाद भ्रातृभाव से प्रेरित होकर मिल रहे हों। यह चित्रकूट में राम–भरत के मिलन का स्मरण दिला रहा था। हम सभी विद्यार्थी चकित एवं विस्मित होकर उस दृश्य को देखते ही रह गए। परंतु कोई आज तक यह समझ नहीं पाया कि दरअसल निराला राहुल जी से क्यों असंतुष्ट और रुष्ट थे। यहां तक कि पं॰ गंगाधर मिश्र भी जो निराला जी के अंतरंग मित्र एवं भक्त थे, उसकी टोह न ले पाए और न ही कभी निराला जी ने इसका रहस्य उनसे बताया। उनके वैमनस्य एवं मिलन का प्रसंग आज भी प्रश्नचिह्न है।

प्रस्तुति : बालशौरि रेड्डी

राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) नई दिल्ली-110003 के उप संपादक द्वारा प्रकाशित तथा प्रबंधक भारत सरकार फोटोलिथो मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित।